उत्तर प्रदेश - दिल्ली - राजस्थान की हाईस्कूल परीक्षा एवं पंजाब की मैट्रिक तथा रत्न परीक्षाओं के लिए

आधुनिक

हिन्दी व्याकरण

तथा

रचना

लेखक :

आचार्य धर्मेन्द्र

एम० ए० (संस्कृत), एम० ए० (हिन्दी),

शास्त्राचार्य, साहित्यरत्न, शास्त्री, काव्यतीर्थ,

ए० पी० मिशन हायर सेकेण्ड्री स्कूल, देहरादून

तथा

विद्याभास्कर श्रुतिकान्त शास्त्री एम० ए०

हिन्दू कालेज, मुरादाबाद

संशोधिका :

श्री शशिप्रभा

एम० ए० (हिन्दी), एम० ए० (संस्कृत), साहित्यरत्न,

प्रिंसिपल, दून विद्यापीठ, देहरादून।

प्रकाशक :

साहित्य सदन

देहरादून

मुख्य विक्रेता :

साहित्य सदन, पल्टन बाजार, देहरादून

द्वितीयावृत्ति २०००] जुलाई १९५१ [मूल्य २)

मुद्रक :

सुमेध कुमार

भास्कर प्रेस, देहरादून

यह क्यों ?

बाजार में हिन्दी के बहुत से व्याकरणों के रहते हुए भी एक और व्याकरण की क्या आवश्यकता थी ? इस प्रश्न का उत्तर यह व्याकरण स्वयं ही आपको दे देगा। आज हिन्दी राष्ट्रभाषा के उन्नत पद पर आसीन है। इसके गौरवशाली पद के अनुरूप इसे सर्वांग सुन्दर एवं पूर्ण बनाना प्रत्येक भारतीय का और विशेष रूप से इसके सेवकों का परम कर्तव्य है। किसी भी भाषा की प्रवृत्तियों को ठीक-ठीक समझने के लिये उसके व्याकरण का अध्ययन अत्यावश्यक होता है। जो व्याकरण भाषा के अंग-प्रत्यङ्गों का जितना अच्छा विवेचन कर सकेगा वह उस भाषा के लिये उतना ही अधिक उपयोगी हो सकेगा।

यह व्याकरण मुख्य रूप से माध्यमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिये लिखा गया है। दूसरे व्यक्ति की अपेक्षा एक अध्यापक छात्रों की कठिनाई को विशेष रूप से समझ सकता है। यथा-सम्भव उन कठिनाइयों को सरल करने का प्रयत्न किया गया है और साथ ही माध्यमिक कक्षाओं के स्तर को ध्यान में रखते हुए हिन्दी भाषा के वैज्ञानिक स्वरूप को समझने के लिये छात्रों में उत्सुकता जागृत करने का प्रयत्न किया गया है। इस कार्य में डा० बाबूराम सक्सेना एवं डा० श्यामसुन्दरदास के ग्रन्थों से आवश्यक सहायता ली गई है, इसके लिये हम उनके ऋणी हैं।

यदि वाञ्छित दिशा की ओर छात्रों की कुछ रूप में भी प्रवृत्ति हो सकी तो निश्चित् ही हम अपना प्रयत्न सफल समझेंगे।

श्रीमती शशिप्रभा जी एम०ए०, साहित्यरत्न ने पुस्तक को उपयोगी बनाने में हमारी यथेष्ट सहायता की है, इसके लिये हम उन्हें धन्यवाद देकर उनके भार को हल्का करना नहीं चाहते।

—लेखक

विषय-सूची

तृतीय खण्ड

वाक्य विचार

आधुनिक हिन्दी व्याकरण तथा रचना

प्रस्तावना

भाषा

इस संसार में न केवल मानव ही, अपितु पशु-पक्षी भी अपने हृदयगत भावों को एक दूसरे के समक्ष व्यक्त करते हैं। गाय अपने बछड़े को अपने सामने न देखकर रंभाने लग जाती है, पक्षियों के बच्चे चुग्गे के लिए चूं चूं करके अपनी भूखको व्यक्त करते हैं; बोलने में असमर्थ गूंगा व्यक्ति भी अपने हाथ एवं मुख के विशेष संकेतों द्वारा अपनी भूख और प्यास को प्रकट करता है। भाषा के आविष्कार एवं विकास में अपने भावों को व्यक्त करने की यह भावना ही अविरत रूप से कार्य करती दिखायी दे रही है।

मानव के हृद्‌गत विचारों को व्यक्त करने वाले साधनों का नाम भाषा है।

प्रधान रूपसे हम ध्वनि-चिन्होंके प्रयोगद्वारा दूसरों के सामने अपने विचारों, भावों एवं इच्छाओं को व्यक्त करते हैं। ये ध्वनि-चिन्ह ही एक व्यक्ति के भावों को दूसरों तक पहुंचाने के प्रधान साधन हैं। यद्यपि भावोंकी अभिव्यक्ति इंगितों के द्वारा भी सम्भव है, तथापि इंगित दोष रहित स्पष्ट साधन नहीं हैं, इससे समझने में भी अधिक समय लगता है और कठिनाई भी होती है। अतएव 'जिन ध्वनि चिन्हों द्वारा मनुष्य परस्पर विचार विनिमय करता है, उनको

समष्टि रूपमें भाषा कहते हैं। अपने विचारों को दूसरों तक पहुंचाने एवं दूसरों के विचारों को समझने के लिये भाषा सबसे सुगम साधन है। भाषा को हम दो विभागों में विभक्त कर सकते हैं—

(१) व्यक्त (२) अव्यक्त

व्यक्त—व्यक्त भाषा उसे कहते हैं जो सर्वसाधारण की समझ में आजाय। जैसे, *हिन्दी*, *चीनी*, *जापानी*, *रूसी*, *अंगरेजी*, *जर्मन प्रभृति*। अपने अपने क्षेत्रों में ये सभी भाषाएं सरलता से सबकी समझ में आ जाती हैं। हिन्दी समस्त भारतवर्ष राष्ट्रकी राजभाषा है। कतिपय प्रान्तों की प्रधान-भाषा होते हुए भी यह सम्पूर्ण देश में बोली और समझी जाती है।

अव्यक्त—अव्यक्त भाषा उसे कहते हैं जो सर्वसाधारण की समझ में न आ सके। जैसे, पशु और पक्षियों आदि की भाषा अव्यक्त होती है, क्योंकि वह सरलता से सर्वसाधारण की समझ में नहीं आती।

भाषा शब्द का प्रयोग कभी व्यापक अर्थमें होता है और कभी संकुचित में। यहाँ पर उसका प्रयोग व्यापक अर्थमें नहीं, अपितु संकुचित अर्थको लेकर ही किया गया है।

हम अपने विचारों को दूसरों के सामने दो प्रकार से प्रकट कर सकते हैं, कह कर तथा लिखकर। जिस समय हम अपने समक्ष तथा समीप में उपस्थित लोगों पर अपने विचार व्यक्त करते हैं तो प्रायः कथित भाषा प्रयोग में लाते हैं। परन्तु जिस समय हम अपने विचारों को दूरवर्ती व्यक्तियों के पास पहुँचाना चाहते हैं, अथवा भावी सन्तति के लिए उन्हें सुरक्षित कर देना चाहते हैं, तो उस समय हम लिखित भाषा का प्रयोग करते हैं। इस प्रकार से भाषा के दो भेद हुए—

(१) कथित और (२) लिखित

कथित—मूल ध्वनियोंके संयोग से निर्मित हुई उस भाषा को कथित भाषा कहते हैं, जिसका प्रयोग समीपस्थ व्यक्तियोंपर अपने विचार व्यक्त करने के लिये किया जाता है। आजकल कुछ वैज्ञानिक साधनों के प्रयोग द्वारा हम दूरस्थ व्यक्तियों पर भी अपने विचार कथित भाषा द्वारा व्यक्त कर लेते हैं।

लिखित—कल्पित मूल ध्वनियों के संकेत चिन्हों के संयोग से बनी उस भाषा को लिखित भाषा कहते हैं, जिसका निर्माण मानव समाज के उपयोग के लिये किया जाता है। ध्वनियोंके संकेत-चिन्होंका उपयोग केवल लिखने में ही किया जाता है।

लिखित भाषा में शब्द की प्रत्येक मूल ध्वनि को पहिचानने के लिए एक एक चिन्ह नियत कर दिया जाता है। इस ध्वनि चिन्ह को ही वर्ण कहते हैं। यद्यपि ध्वनि (शब्द) कानों का विषय है, उसे हम सुन सकते हैं, देख नहीं सकते। परन्तु वर्ण नयनों का विषय है एवं यह उस मूल-ध्वनि का प्रतिनिधि है। सृष्टिके आरम्भ से पर्याप्त समय तक प्रत्येक देश में प्रथम केवल कथित भाषा का ही प्रचलन रहा है, परन्तु बाद को मानव की स्मरण शक्ति की दुर्बलता का आभास मिलने पर विचारों को स्थायित्व देने की आवश्यकता का अनुभव करके ही सम्भवत: विभिन्न लिपियों का आविष्कार हुआ। भाषा मानव-संस्कृति की सबसे प्राचीन देन है। सम्भव हैं आदि-मानव ने अग्नि के प्रयोग से भी पूर्व उसे सीख लिया हो।

भाषा के सम्बन्ध में हमें इस बात का विशेष ध्यान रखना चाहिये कि जिन ध्वनियों द्वारा किसी विशेष प्राणी अथवा वस्तु का बोध होता है, उनका उस प्राणी अथवा वस्तु से किसी प्रकार का नियत तथा स्वाभाविक सम्बन्ध नहीं होता, केवल मात्र सामयिक व्यवहार का सम्बन्ध होता है। यदि कोई नियत एवं स्वाभाविक सम्बन्ध होता

तो प्रत्येक काल तथा देश में 'कमल' एवं 'अश्व' का वही अर्थ होता जो हम हिन्दी भाषा-भाषी ग्रहण करते हैं । ऐसी अवस्था में न तो भाषा में परिवर्तन होता और न विभिन्नता ही ।

हमारे भारतीय वाङ्मय में भाषा के द्योतक वाक् एवं वाणि शब्द अति प्राचीन हैं जिनमें बोलने का अर्थ निहित है। वाक् का दूसरा अर्थ जिह्वा भी होता है। बोलने में जिह्वा का प्रमुख भाग रहता है। सम्भवतः इसीलिए विश्व की अन्य भाषाओं में भी जिह्वा एवं भाषा के लिए समान शब्द मिलते हैं। लैटिन का लिंगुआ, यूनानी का लेइखेइन, फ़ारसी का ज़बान, अंगरेजी का टंग और फ्रांसीसी का लांग जो भाषाके अर्थमें प्रयोग में लाते हैं, सभी के मूल में जिह्वा का अर्थ निहित है। इसप्रकार बोलनेके साथ भाषाका विचारोंसे अटूट सम्बन्ध है।

व्याकरण

जिस शास्त्रमें शब्दोंके शुद्ध रूप एवं प्रयोगके नियमों का निरूपण होता है, उसे व्याकरण कहते हैं। यद्यपि व्याकरण शास्त्र के नियम प्रायः लिखित भाषा के आधार पर निश्चित किये जाते हैं, क्योंकि उसमें शब्दोंका प्रयोग कथित भाषा की अपेक्षा अधिक सतर्कता से किया जाता है तथापि इसका यह अभिप्राय नहीं है कि व्याकरण कथित भाषा को नियमबद्ध नहीं करता। भाषा के दोनों ही रूप व्याकरण के विषय हैं।

प्रमुख रूप से व्याकरणका सम्बन्ध भाषा से है और भाषा का प्रधान अंग है वाक्य। किसी भी भाषा में वाक्यों के प्रयोग द्वारा ही हम अपने विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। अतः वाक्य भाषा का प्रमुख अंग है। वाक्यका निर्माण शब्दों से होता है और शब्दों का का वर्णों से। वर्ण, शब्द एवं वाक्य के विचार से व्याकरण के मुख्य तीन विभाग होते हैं—

(१) वर्ण विभाग, (२) शब्द विभाग एवं (३) वाक्य-विभाग

वर्ण विभाग—यह व्याकरण का वह विभाग है जिसमें वर्णों के आकार, उच्चारण एवं उनके संयोग से शब्द बनाने के नियम दिये जाते हैं।

शब्द विभाग—यह व्याकरण का वह विभाग है, जिसमें शब्दों के भेद, रूपान्तर एवं व्युत्पत्ति का वर्णन रहता है।

वाक्य विभाग— यह व्याकरण का वह विभाग है जिसमें वाक्यों के अवयवों का परस्पर सम्बन्ध बताया जाता है एवं शब्दों से वाक्य बनाने के नियम दिये जाते हैं।

अभ्यास

(१) भाषा की परिभाषा बताओ।

(२) भाषा के दो प्रधान भेद कौन से हैं और उसका स्वरूप क्या है ?

(३) व्याकरण किसे कहते हैं ?

(४) भाषा का व्याकरण से क्या सम्बन्ध है ?

(५) व्याकरण के मुख्य कितने विभाग हैं, प्रत्येक का लक्षण लिखो।

प्रथम खण्ड :: प्रथम प्रकरण

वर्ण विचार

वर्ण विचार व्याकरण का वह विभाग है जिसमें वर्णों के आकार, भेद, उच्चारण तथा उनके संयोग से शब्द बनाने के नियमों का निरूपण होता है।

वर्ण—उस मूल ध्वनि को कहते हैं जिसके खण्ड न हो सकें। जैसे, अ, इ, क्, ख्, आदि।

"कमल पुस्तक लाया" इस वाक्य में तीन शब्द हैं—'कमल' 'पुस्तक' और 'लाया'। कमल शब्द में साधारण रूप से तीन ध्वनियां सुनाई पड़ती हैं—'क' 'म' और 'ल'। इन तीनों ध्वनियों में से प्रत्येक ध्वनि के खण्ड हो सकते हैं, अतः ये मूल ध्वनियाँ नहीं है। 'क' 'म' 'ल' तीनों में दो दो ध्वनियाँ हैं—क्+अ, म्+अ, ल्+अ, अब इनके और खण्ड नहीं हो सकते। अत: क्+अ, म्+अ, ल्+अ ये सभी मूल ध्वनियां हैं। ये मूल ध्वनियाँ वर्ण कहलाती हैं। 'कमल' में क्+अ, म+अ, ल्+अ ये छः मूल ध्वनियां हैं। इसी प्रकार 'पुस्तक, में प्+उ, स्, त्+अ, क्+अ, ये सात और 'लाया' में ल्+आ, य्+आ में चार मूल ध्वनियां अथवा वर्ण है।

वर्णमाला

वर्णों के समुदाय को वर्णमाला कहते हैं। हिन्दी भाषा की वर्णमाला में ४६ वर्ण हैं।

अ, आ, इ, ई, उ, ऊ, ऋ, ए, ऐ, ओ, औ (स्वर)

क, ख, ग, घ, ङ — कवर्ग

च, छ, ज, झ, ञ — चवर्ग
ट, ठ, ड, ढ, ण — टवर्ग
त, थ, द, ध, न — तवर्ग
प, फ, ब, भ, म — पवर्ग
य, र, ल, व (अन्तस्थ) श, ष, स, ह(ऊष्म),अं(अनुस्वार)
अः(विसर्ग) ।

वर्णों के भेद

हिन्दी वर्णमाला के दो विभाग किये जाते हैं—

(१) स्वर और (२) व्यंजन

स्वर—उन वर्णों को कहते हैं जिनका उच्चारण पूर्ण स्वतन्त्रता से होता है तथा जो व्यंजनों के उच्चारण में सहायक बनते हैं। जैसे, अ, इ, अ, ए; आदि। इनके उच्चारणके लिये किन्हीं अन्य वर्णोंकी सहायता नहीं ली जाती, अतः ये स्वर वर्ण हैं। हिन्दी में 'अ' से लेकर 'औ' तक ११ स्वर हैं। 'ॠ' 'लृ', एवं 'लॄ' का प्रयोग हिन्दी में नहीं होता है, अतः इनको संख्या में सम्मिलित नहीं किया गया है।

व्यंजन—वे वर्ण हैं जिनका स्वरों को सहायता के बिना स्पष्ट उच्चारण न किया जा सके। हिन्दी की वर्णमाला में ३५ व्यंजन वर्ण हैं —'क' से लेकर 'ह' तक तथा अनुस्वार और विसर्ग।*

---

*इन वर्णों के अतिरिक्त भी हिन्दी की वर्णमाला में 'क्ष' 'त्र' 'ज्ञ' ये तीन वर्ण पाये जाते हैं। इनके सम्बन्ध में इतना जान लेना ही पर्याप्त है कि ये तीनों स्वतन्त्र वर्ण नहीं हैं। दो दो व्यंजनों से मिलकर इनके स्वरूप का निर्माण हुआ है। जैसे 'क्ष' क् और ष के

हिन्दी वर्णमाला में जिन वर्णों को स्वर सहित दिखाना होता है, उनकी आकृति में कोई विशेष अन्तर नहीं होता। जैसे, क, ख, आदि। स्वर रहित दिखाने के लिये इनके नीचे एक तिरछी लकीर (्) लगा देते हैं। जैसे, क्, ख्, स् आदि। व्यंजन वर्णों के स्वर-राहित्य-द्योतक इस (्) चिह्न को हल् कहते हैं। 'हल्' से अभिप्राय होता है, स्वर रहित वर्ण।

अनुस्वार और विसर्ग—भी व्यंजन हैं, क्योंकि इनका उच्चारण भी स्वरों की सहायता के बिना नहीं होता। इनमें एवं व्यंजनों में इतना ही अन्तर है कि व्यंजनों में स्वर, व्यंजन ध्वनि के बाद आता है और इन दोनों के पूर्व। जैसे, अ + ं = अं, अ + ः = अः, क् + अ = क, न् + अ = न। अनुस्वार और विसर्ग अयोगवाह भी कहते हैं।

हिन्दी में 'ड़' और 'ढ़' दो और ध्वनियाँ हैं; किन्तु ये ध्वनियां स्वतन्त्र नहीं मानी जातीं। मूल 'ड' और 'ढ' ध्वनियों के नीचे बिन्दु लगाकर इनका बोध कर लिया जाता है।

स्वरोंके भेद

(१) रचना के अनुसार स्वरोंके दो भेद किये जाते हैं—(१) मूलस्वर और (२) सन्धिस्वर। जिन स्वरों का निर्माण किन्हीं

संयोग से, 'त्र' 'त्' और 'र' के संयोग से और 'ज्ञ' 'ज्' और 'ञ' के संयोग से बना है।

इन व्यंजन ध्वनियों के अतिरिक्त हिन्दी में कुछ अरबी और फारसी भाषा की ध्वनियां भी आगई हैं परन्तु इनको व्यक्त करने के लिये हिन्दी में स्वतन्त्र ध्वनि-चिन्ह नहीं हैं। मूल ध्वनियों के नीचे बिन्दु लगाकर इनका बोध कर लिया जाता है। जैसे, क़, ख़, ज़ और फ़ आदि।

अन्य स्वरों से मिलकर नहीं हुआ है, उन्हें मूलस्वर कहते हैं। ये मूलस्वर चार हैं—अ, इ, उ, ऋ।

जिन स्वरों का निर्माण मूलस्वरों के मेल से होता है, उन्हें सन्धिस्वर कहते हैं। हिन्दी में सन्धिस्वर सात हैं—आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ। इनका निर्माण निम्न प्रकार होता है—अ + अ = आ, इ + इ = ई, उ + उ = ऊ, अ + इ = ए, अ + ए = ऐ, अ + उ = ओ, अ+ओ = औ।* ए, ऐ, ओ, औ इन चार स्वरों को संयुक्तस्वर भी कहते हैं।

(२) उच्चारण में लगने वाले समय (मात्रा) के अनुसार स्वर तीन प्रकार के होते हैं—(१) ह्रस्व, (२) दीर्घ और (३) प्लुत।

'अ' के उच्चारण में जितना समय लगता है, उसे मात्रा कहते हैं। जिस स्वर के उच्चारण करने में एक मात्रा का समय लगता है, उसे ह्रस्व अथवा एकमात्रिक कहते हैं। जैसे, *अ, इ, उ, ऋ*।

जिस स्वर के उच्चारण करने में ह्रस्व से दूना समय लगता है उसे दीर्घ अथवा द्विमात्रिक कहते हैं। जैसे, *आ, ई, ऊ, ए आदि*।

जिस स्वर के उच्चारण करने में ह्रस्व से तिगुना समय लगता है उसे प्लुत अथवा त्रिमात्रिक कहते हैं। हिन्दी में इस प्लुत का प्रयोग प्रायः दूर से पुकारने में होता है। प्लुत भाव प्रकट करने के लिये शब्द में स्वर वर्ण के आगे (३) का चिह्न इच्छानुसार लगा दिया जाता है। जैसे, *रमे३श, रमेश३, चलियो३रे, दे३व आदि*।

(३) उच्चारण के अनुसार स्वर दो प्रकार के हैं—(१) अनुनासिक और (२) अननुनासिक। जब स्वर मुख और नासिका से बोले जाते हैं,

---

*उक्त प्रक्रिया से इनका निर्माण सम्भव होनेपर भी भाषा-शास्त्रियों ने इन्हें एकान्त रूप से सन्धिस्वर ही नहीं माना है, इनका मूलस्वरत्व भी सम्भव है।

तब अनुनासिक कहे जाते हैं। जैसे, *दाँत, पहुँच, पाँच आदि*। स्वर जब केवल मुख से बोले जाते हैं तब अननुनासिक कहे जाते हैं। जैसे, *आम, उचित एक आदि*।

व्यञ्जनों के भेद

व्यंजन तीन प्रकार के हैं—स्पर्श, अन्तस्थ और ऊष्म। 'क' से लेकर 'म' पर्यन्त पच्चीस व्यंजन वर्ण स्पर्श कहे जाते हैं। क्योंकि इनके उच्चारण में जिह्वा मुख के किसी न किसी भाग को स्पर्श करती है। 'य' 'र' 'ल' और 'व' ये अन्तस्थ कहे जाते हैं। अन्तस्थ का अभिप्राय है बीच में रहने वाला, क्योंकि ये वर्ण कभी स्वर के रूप में प्रयुक्त होते हैं तो कभी व्यंजन के। 'श' 'ष' 'स' और 'ह' इनको ऊष्म कहते हैं। इनके उच्चारण में श्वास मुख-विवर से सीधा, मुखके किसी भाग को विशेषरूप से बिना स्पर्श किये ही बाहर निकल जाता है। इसीलिये इनको ऊष्म कहते हैं।

हिन्दी वर्णमाला के वर्णों के प्रयोग के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक बातें—

(१) वर्णमाला के कुल वर्ण केवल संस्कृत के तत्सम शब्दों में ही प्रयुक्त होते हैं। जैसे, ऋ, ण, ष। उदाहरण—ऋतु, आदि, पुरुष, गुण, बाण आदि।

(२) ङ और ञ पृथक् रूप से केवल संस्कृत शब्दों में आते हैं। जैसे, *पराङ्-मुख, नञ्-तत्पुरुष*।

(३) संयुक्त व्यंजनों में से 'क्ष' और 'ज्ञ' केवल संस्कृत शब्दों में आते हैं। जैसे *मोक्ष, क्षमता, तितिक्षा, ज्ञान, संज्ञा, यज्ञ आदि*।

'ङ्' ञ्, ण् हिन्दी में शब्दों के आदि में नहीं आते। अनुस्वार और विसर्ग भी शब्दों के आदि में प्रयुक्त नहीं होते हैं।

(४) विसर्ग हिन्दी के कतिपय शब्दों में ही आता है। जैसे, *छिः, छुः, अन्तःकरण दुःख।*

लिपि

ऊपर हम बतला चुके हैं कि मूल ध्वनियों के लिये जो संकेत-चिन्ह स्वीकृत किये गये हैं, उन्हें वर्ण कहते हैं। जिस रूप अथवा आकृति में ये वर्ण लिखे जाते हैं, उसे लिपि कहते हैं। विभिन्न भाषाओं में मूलध्वनियों को व्यक्त करने के लिये चिन्ह भी पृथक् पृथक् हैं, अतः विश्व में लिपियाँ भी विभिन्न हैं। यूरोप के देशों की प्रायः सभी भाषाएं 'रोमन' लिपि में लिखी जाती हैं। मध्यपूर्व के देश तथा अफ्रीका के कुछ देशों की लिपि 'अरबी' है। इसी प्रकार चीनी, सिंहली, बर्मी, तिब्बती आदि भाषाओं की लिपियां स्वतन्त्र हैं। भारत में प्राय: प्रत्येक प्रांतीय भाषा की अपनी लिपि है। हिन्दी वर्ण जिस लिपि में लिखे जाते हैं उसे देवनागरी❀ लिपि कहते हैं।

❀ 'देवनागरी' नाम-शब्द की व्युत्पति के सम्बन्ध में अभी विद्वानों में कोई निश्चित मत स्थिर नहीं हुआ है। सम्भव है शौरसेनी प्राकृत की नागर अपभ्रंश से कोई सम्बन्ध हो। श्रीरामशास्त्री ने एक लेख में यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि देवताओं की मूर्तियाँ बनने के पूर्व उनकी उपासना सांकेतिक चिन्हों द्वारा होती थी जो कोई त्रिकोण तथा चक्रों आदि से बने हुए मन्त्र के, जो 'देवनगर' कहलाता था, मध्य में लिखे जाते थे। देवनगर के मध्यमें लिखे जाने वाले अनेक प्रकार के सांकेतिक चिन्ह कालान्तर में उन नामों के पहले अक्षर माने जाने लगे और देवनगर के मध्य उनका स्थान होने से उनका नाम 'देवनागरी' हुआ।"

यह कहना अति कठिन है कि देवनागरी शब्द की व्युत्पत्ति के सम्बन्ध में यह कल्पना कहां तक ठीक है।

देवनागरी के अतिरिक्त महाजनी, कैथी आदि लिपियों में भी कहीं कहीं हिन्दी भाषा लिखी जाती है। टाइप एवं छापने के काम में प्रायः देवनागरी लिपि का ही व्यवहार होता है।

व्यंजनों के अनेक उच्चारण एवं रूप दिखाने के लिये उनके साथ स्वर संयुक्त कर दिये जाते हैं। व्यंजनों में मिलने के अनन्तर स्वर का जो रूप परिवर्तित होकर रह जाता है, उसे मात्रा कहते हैं। स्वरों की मात्राएं नीचे दी जाती हैं :—

आ	इ	ई	उ	ऊ	ऋ	ए	ऐ	ओ	औ
ा	ि	ी	ु	ू	ृ	े	ै	ो	ौ

'अ' स्वर को व्यक्त करने के लिये अलग मात्रा नहीं है। जब वह किसी व्यंजन में मिलता है, तब स्वर-राहित्य का द्योतक यह (्) चिन्ह व्यंजन के नीचे नहीं लिखा जाता। जैसे, क् + अ = क।

'आ', 'ई', 'ओ' और 'औ' की मात्राएं व्यंजन के पश्चात् लिखी जाती हैं। जैसे—पा, पी, पो, पौ,। 'इ' की मात्रा व्यंजन के पूर्व, 'ए', 'ऐ', की मात्राएं व्यंजन के ऊपर और 'उ', 'ऊ' और 'ऋ' की मात्रायें, व्यंजनों के नीचे लगायी जाती हैं। जैसे—पि, पे, पै, पु, पृ, और पू।

अनुस्वार स्वर के ऊपर और विसर्ग स्वर के पश्चात् आता है। जैसे—पं, पिं, पः, पाः।

हिन्दी वर्णमाला के व्यंजन दो प्रकार से लिखे जाते हैं—[१] खड़ी पाई सहित और [२] बिना खड़ी पाई के। ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, द, र को छोड़ कर शेष व्यंजन खड़ी पाई सहित ही लिखे जाते हैं। समस्त व्यंजनों के ऊपर एक आड़ी (—) रेखा रहती है, परन्तु यह रेखा ध, झ, और भ लिखते समय मध्य में कुछ छिन्न करदी जाती है।

हिन्दी में वर्णों का उच्चारण एवं नाम समान होने के कारण

जिस समय किसी वर्ण का नाम लेने की आवश्यकता होती है, तो उस वर्ण के अनन्तर 'कार' जोड़ कर उसका नाम सूचित करते हैं। जैसे—*अकार*, *ककार*, *पकार*, *मकार*, से क्रमशः *अ*, *क*, *प*, *म*, का बोध होता है।

जिस समय दो अथवा दो से अधिक व्यंजनों के बीच में स्वर नहीं रहते तो उनको संयुक्त व्यंजन कहते हैं, जैसे—*स्म*, *ज्ञ*, *स्त्री*। संयुक्त व्यंजन प्रायः मिलाकर लिखे जाते हैं। हिन्दी में तीन से अधिक व्यंजनों का एकत्र संयोग प्रायः नहीं होता। जैसे—*स्मात*, *माहात्म्य*, *मत्स्य*।

जब किसी व्यंजन का संयोग उसी व्यंजन के साथ होता है, तो वह संयोग द्वित्व कहलाता है। जैसे, *मत्त*, *तल्लीन*, *अन्न*।

पाई (।) वाले पूर्व वर्णों की पाई, उत्तरवर्णों के साथ संयोग होने पर गिर जाती है। जैसे, *त्+थ = त्थ*, *थ्+य = थ्य*, *न्+त = न्त*।

ङ, छ, ट, ठ, ड, ढ, ह ये सात व्यंजन संयोग के आदि में भी पूरे लिखे जाते हैं और इनके अन्तका संयुक्त व्यंजन पूर्व वर्णके नीचे बिना ऊपर की लकीर के लिखा जाता है। जैसे, *अंकुर*, *उच्छ्वास*, *टट्टी*, *गड्ढा*, *हड्डी*; *आल्हाद*।

यदि स्वरहीन रकार के अनन्तर कोई व्यंजन वर्ण हो, तो रकार उस व्यंजन वर्ण के ऊपर यह (ॅ) आकार धारण करता है। इसे *रेफ* कहते हैं। जैसे, *अ + र् + थ = अर्थ*, *ध + र् + म = धर्म*। यदि रकार किसी व्यंजन के पश्चात् एवं स्वर से पूर्व आता है तो उसका आकार दो प्रकार का होता है।

(क) खड़ी पाई वाले व्यंजनों के नीचे रकार इस (*-*) प्रकार लिखा जाता है। जैसे, *चक्र*, *वज्र*, *अम्र*, *आम्र*, ।

(ख) दूसरे व्यंजनों के नीचे उसका (‸) यह आकार होता है। जैसे, *राष्ट्र, कृच्छ्र, त्रिपुंड्र।*

ङ्, ञ्, ण्, न्, म्, अपने ही वर्गके व्यंजनों से मिल सकते हैं, परन्तु उनके स्थान पर विकल्प से अनुस्वार हो सकता है। जैसे, *अङ्क—अंक, चञ्चल—चंचल, खण्डित—खंडित, मन्त्र—मंत्र, चपा—चम्पा।* कुछ शब्द इस नियम के अपवाद भी हैं। जैसे, *वाङ्मय; मृण्मय, सम्राट, उन्हें, तुम्ह आदि।*

हकार से संयुक्त होनेवाले व्यंजन कभी कभी अज्ञानता से उसके पूर्व लिख दिये जाते हैं। जैसे, *चिन्ह, (चिह्न), ब्रम्ह (ब्रह्म), आव्हान (आह्वान), आल्हाद (आह्लाद) आदि।*

अभ्यास

(१) वर्ण किसे कहते हैं ? उसके कितने भेद होते हैं ?

(२) मूलस्वर और सन्धिस्वर किसे कहते हैं ?

(३) व्यंजनों के कितने भेद हैं ?

(४) प्लुत किसे कहते हैं ?

(५) स्वर और व्यंजन में क्या अन्तर है ?

(६) सन्धिस्वर, अन्तस्थ और ऊष्म वर्णों को लिखो।

(७) कृत्न, प्राज्ञ, संतप्त और कार्तस्वर, इन शब्दों में कितने वर्ण हैं ? पृथक् करके लिखो।

(८) लिपि किसे कहते हैं ?

(९) हिन्दी भाषा किस लिपि में लिखी जाती है ?

(१०) अनुस्वार, द्वित्व और संयुक्तव्यंजन किसे कहते हैं ? उदाहरण देकर लिखो।

द्वितीय प्रकरण

वर्णों का उच्चारण—स्थान और प्रयत्न

स्थान

मुखके जिस भागसे जिस वर्णका उच्चारण होता है; उसे उस वर्णका स्थान कहते हैं। जिस समय हम किसी वर्णका उच्चारण करते हैं तो उस उच्चारण की क्रिया के समय मुख-विवर से निकलती हुई श्वास को मुख के भिन्न भिन्न स्थानों पर विकृत करना पड़ता है। यह विकार जिह्वाके द्वारा उस स्थानको स्पर्श करने से होता है। जिस स्थान पर श्वास को विकृत किया जाता है, उसी को उस ध्वनि का स्थान कहा जाता है। जैसे, *भीतर से आती हुई श्वास को यदि दांतों के पास विकृत करें तो ध्वनि दन्त्य कहलायेगी और 'दन्त' उसका उच्चारण स्थान होगा*। ये उच्चारण स्थान नौ हैं—

(१) कंठ (२) तालु, (३) मूर्द्धा, (४) दन्त, (५) ओष्ठ, (६) अनुनासिका, (७) कंठतालु, (८) कंठौष्ठ और (९) दन्तौष्ठ।

स्थानोंके भेद से वर्णों के भेद

(१) कंठ्य—वे ध्वनियां हैं जिनका उच्चारण कंठ स्थान से होता है। जैसे—अ, आ, क, ख, ग, घ, ङ, ह और विसर्ग (:)

(२) तालव्य—जिनका उच्चारण तालु से होता है। जैसे, इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, य और श।

(३) मूर्द्धन्य—जिनका उच्चारण मूर्द्धा से होता है। जैसे, ट, ठ, ड, ढ, ण ऋ र और ष।

(४) दंत्य—जिनका उच्चारण ऊपर के, दांतों पर जिह्वा लगाने से होता है। जैसे, त, थ, द, ध, न, ल, और स।

ओष्ठ्य—जिनका उच्चारण ओठों से होता है। जैसे—उ, ऊ, प, फ, ब, भ, और म।

(६) अनुनासिक—जिनका उच्चारण मुख और नासिका दोनों से होता है। जैसे—ङ, ञ, ण, न, और म।

(७) कंठतालव्य—जिनका उच्चारण कण्ठ और तालु दोनों से होता है। जैसे—ए और ऐ।

(८) कंठौष्ठ्य—जिनका उच्चारण कंठ और ओठ दोनों से होता है। जैसे—ओ और औ।

(६) दंतौष्ठ्य—जिसका उच्चारण दंत और ओष्ठ दोनों से होता है।

वर्णों का स्थान भेद सूचक चित्र

क्रम संख्या	वर्ण	स्थान	ध्वनि नाम
१	अ, आ, क ख, ग, घ, ङ, ह, विसर्ग	कंठ	कंठ्य
२	इ, ई, च, छ, ज, झ, ञ, य, श	तालु,	तालव्य
३	ऋ, ट, ठ, ड, ढ, ण, र, ष	मूर्द्धा	मूर्द्धन्य
४	त, थ, द, ध, न, ल, स	दंत	दंत्य
५	उ, ऊ, प, फ, ब, भ, म	ओष्ठ	ओष्ठ्य
६	ए, ऐ	कंठ और तालु	कंठतालव्य
७	ओ, औ	कंठ और ओष्ठ	कंठौष्ठ्य
८	व,	दंत और ओष्ठ	दंत्यौष्ठ्य
६	ङ, ञ, ण, न, म	मुख और नासिका	अनुनासिक

आधुनिक भाषा वैज्ञानिकों ने मुख के भीतर के इन सभी स्थानों की यन्त्रों से परीक्षा करके, यह निश्चित रूप से जान लिया है कि किस वर्ण का उच्चारण कहां से होता है । आज से लगभग २६०० वर्ष पूर्व अपने ग्रन्थ 'अष्टाध्यायी' की रचना से विश्व को आश्चर्य चकित करने वाले महामुनि पाणिनि इस सम्बन्ध में जिस परिणाम पर पहुँचे थे, आज के भाषा-शास्त्री उससे आगे नहीं जा सके हैं। जो सिद्धान्त पाणिनि मुनि ने निर्धारित किये थे, आधुनिक उत्कृष्टतम वैज्ञानिक यन्त्रों के द्वारा उन्हीं की पुष्टि हो रही है। यहाँ पर कुछ स्थानों का स्पष्टीकरण अप्रासंगिक न होगाः—

भीतर से आती हुई श्वास में दोनों ओठों के द्वारा विकार लाया जाता है और जब यह विकार नीचे के ओठ और ऊपर के दाँतों से उत्पन्न होता है तो ध्वनियां दन्त्यौष्ठ्य कहलाती हैं, और यही विकार जब केवल दांतों से उत्पन्न होता है तो, दन्त्य ध्वनियां तवर्ग और ल, स उत्पन्न होती है । ऊपर की दन्त पंक्ति से आगे जब तालु की ओर बढ़ें तो मसूढ़े मिलते हैं । इस स्थान से और ऊपर का भाग जो उंगली से छूने पर कड़ा प्रतीत होता है, उसको तालु कहते हैं और इस स्थान पर उत्पन्न हुई ध्वनियों को तालव्य। यहां से चवर्ग इ, ई, य और श ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं। इस तालु स्थान के और आगे एक ऐसा सन्धि स्थान है जहाँ पर आगे का भाग (कठोर तालु) और पीछे के भाग (कोमल तालु) मिलते हैं । इस सन्धिस्थान का नाम मूर्द्धा है और यहाँ उत्पन्न हुई ध्वनियों का मूर्द्धन्य। यहां से टवर्ग ऋ, र, ष, ध्वनियाँ उत्पन्न होती हैं । कोमल तालु पर उत्पन्न ध्वनियों को कंठ्य कहते हैं।

प्रयत्न

वर्णों के उच्चारण में स्पष्टता लाने के लिये जो श्वास-

व्यापार किया जाता है, उसको प्रयत्न कहते हैं। यह प्रयत्न दो प्रकार का होता है (१) आभ्यन्तर और (२) वाह्य।

(१) ध्वनि उत्पन्न होने के पहले जिह्वा की क्रिया को आभ्यन्तर प्रयत्न कहते हैं।

(२) ध्वनि के अन्त की क्रिया को वाह्य प्रयत्न कहते हैं।

आभ्यन्तर प्रयत्न के चार भेद होते हैं—(१) विवृत, (२) स्पृष्ट, (३) ईषद् विवृत और (४) ईषत् स्पृष्ट।

(१) विवृत—जिन के उच्चारण में पूरी वागिन्द्रिय खुली रहती है, सब स्वरों का विवृत प्रयत्न है, क्योंकि इनके उच्चारण में श्वास-नालिका से आती हुई श्वास धारा प्रवाह से अबाध-गति मुख से निकलती जाती है और मुख-विवर में ऐसा कोई संकोच नहीं होता कि किंचिन्-मात्र भी संघर्ष अथवा स्पर्श होता हो।

(२) स्पृष्ट—इसका अर्थ है 'छुआ हुआ'। 'क' से 'म' पर्यन्त वर्णों का स्पृष्ट प्रयत्न है, क्योंकि इनके उच्चारण में वागिन्द्रिय का द्वार बन्द रहता है एवं मुख विवर के भिन्न भिन्न स्थानों से उसका स्पर्श होता रहता है।

(३) ईषद् विवृत—का अभिप्राय है 'कुछ खुला हुआ'। य, र, ल, व—इनका ईषद्विवृत प्रयत्न है। इनके उच्चारण में वागिन्द्रिय कुछ खुली रहती है।

(४) ईषद्स्पृष्ट—का अभिप्राय है 'कुछ छुआ हुआ'। श, ष, स, ह—इनका ईषद्स्पृष्ट प्रयत्न है। इनके उच्चारण में जिह्वा का थोड़ा स्पर्श होता है।

वाह्य प्रयत्न के भेद

वाह्य प्रयत्न के दो भेद हैं—(१) घोष और (२) अघोष।

(१) घोष वर्णों के उच्चारण में केवल नाद का उपयोग होता है।

प्रत्येक वर्ग के तृतीय वर्ण (ग, ज, ड, द, ब) और चतुर्थ वर्ण (घ, झ, ढ, ध, भ), समस्त स्वर (अ से औ तक) और य, र, ल, व, ह— इनका घोष प्रयत्न है।

(२) अघोष वर्णों के उच्चारण में केवल श्वास का उपयोग होता है, घोष (नाद) का नहीं।

अघोष प्रयत्न में प्रत्येक वर्ग का प्रथमवर्ण (क, च, ट, त, प,) और द्वितीय वर्ण (ख, छ, ठ, थ, फ) तथा श, ष, स—होते हैं।

वाह्य प्रयत्न के दो और भेद

(१) अल्पप्राण और (२) महाप्राण।

प्राण भीतर से आती हुई श्वास में बल का ही दूसरा नाम है।

(१) अल्पप्राण—जिन वर्णों के उच्चारण में कम परिश्रम करना पड़ता है, उन्हें अल्पप्राण कहते हैं। वर्णों का प्रथम, तृतीय, पंचम वर्ण; य, र, ल, व अनुस्वार (ं) एवं सब स्वर (अ से औ तक) इनका अल्पप्राण प्रयत्न है।

(२) महाप्राण—जिन वर्णों के उच्चारण में श्रम अधिक करना पड़ता है, उन्हें महाप्राण कहते हैं। वर्णों का दूसरा तथा चौथा वर्ण श, ष, स, ह और विसर्ग (:)—इनका महाप्राण प्रयत्न है।

ध्वनियों के गुण

मात्रा, स्वर और बलाघात—ये तीनों ध्वनियों के गुण माने जाते हैं। हिन्दी भाषा एवं उसके व्याकरण को समझने के लिये तथा विश्व की अन्य भाषाओं के साथ उसके वैशिष्ट्य को हृदयगत कर लेने के लिये यह नितान्त आवश्यक है कि हम ध्वनियों के गुण एवं उनके स्वरूप को अच्छी प्रकार समझ लें। यहां हम मात्रा, स्वर और बलाघात इनके स्वरूप का विश्लेषण करते हैं—

मात्रा—काल की उस मात्रा का नाम है जो किसी विशेष ध्वनि के उच्चारण में लगती है। व्यावहारिक दृष्टि से मात्रा ह्रस्व और दीर्घ होती है। हम कह देते हैं—'इस अक्षर की मात्रा ह्रस्व है' 'इसकी मात्रा दीर्घ है'। भाषा की प्रत्येक ध्वनि के बोलने में कुछ न कुछ समय लगता है। प्राचीन भारतीय वैयाकरणों ने केवल स्वरों की ही मात्रा का अपने ग्रन्थों में उल्लेख किया है और उन्हें ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत नाम से पुकारा है। एक मात्रिक ह्रस्व, द्विमात्रिक दीर्घ और त्रिमात्रिक प्लुत कहलाते थे। प्लुत स्वरों का प्रायः सामान्य भाषा में प्रयोग नहीं होता था, पुकारने आदि में उनसे काम लिया जाता था। शेष ह्रस्व और दीर्घ दोनों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में होता रहा है। आधुनिक वैज्ञानिक अनुसन्धानों से इतना और विदित हो गया है कि व्यंजनों के उच्चारण में भी काल की मात्रा की नाप हो सकती है एवं यहां ह्रस्व, दीर्घ आदि संज्ञाओं का व्यवहार किया जा सकता है। जैसे—पका में क् ह्रस्व और पक्का में क दीर्घ, कसक में स् ह्रस्व और कस्स में स् दीर्घ है। व्यंजन या दीर्घत्व लिखने में द्वित्व से व्यक्त किया जाता है। यदि भाषा की सूक्ष्म परीक्षा करके देखा जाय तो हिन्दी में स्वरों की अपेक्षा व्यंजनों को ह्रस्व और दीर्घ कहना अधिक उपयुक्त होगा क्योंकि ऊपर बताये हुए ह्रस्व और दीर्घ स्वरों (अ, आ अथवा इ, ई आदि) में कुछ स्थान भेद भी है, किन्तु ह्रस्व और दीर्घ (क्, क्क आदि) व्यंजनों में स्थान भेद सर्वथा नहीं है। केवल उच्चारण में लगने वाले समय की मात्रा में ही भेद है।

स्वर—स्वर-तन्त्रियों के तनाव के कारण स्वर उत्पन्न होता है। साधारणतः स्वर उच्च, नीच और सम कहा जाता है। हम प्रायः देखते हैं कि वीणा, सितार आदि संगीत के साधनों में तारों के तानने और ढीला करने से संगीत के स्वरों में विभिन्नता पैदा होती है।

यही अवस्था स्वर-तन्त्रियों की है। इनके तनने और ढीला होने से स्वर उत्पन्न होता है। स्वर केवल ऐसी ध्वनियों में सम्भव है जिनमें घोष हो। आर्य भाषाओं के प्राचीन युग में वैदिक संस्कृत एवं ग्रीक भाषा में स्वर के वर्तमान रहने के पर्याप्त प्रमाण उपलब्ध हैं। 'इन्द्रशत्रु' शब्द में अस्थान में स्वर के प्रयोग के कारण ही दैत्यों का नाश हुआ, यद्यपि वे देवों का संहार करने चले थे। वर्तमान काल में आर्य भाषाओं में स्वर का प्रयोग केवल मनोराग, विधि, निषेध, प्रश्न विस्मय आदि को प्रकट करने के लिये ही होता है, अर्थ में भेद नहीं आने पाता। चीनी भाषा में स्वर का अधिक मात्रा में प्रयोग होता है एवं स्वर-भेद से अर्थ-भेद भी हो जाया करता है।

बलाघात—किसी विशेष ध्वनि पर वाक्य अथवा पद की अन्य ध्वनियों की अपेक्षा, उच्चारण में अधिक प्राणशक्ति व्यय करना बलाघात कहलाता है। इसका प्रयोग इंग्लिश आदि यूरोप की भाषाओं में प्रचुर मात्रा में मिलता है। देवनागरी लिपि में इसे अंकित करने का कोई विशेष संकेत नहीं है। बलाघात किस ध्वनि पर कितना हो, यह विभिन्न भाषाओं के प्रवाह पर निर्भर है। सामान्य रूप से इतना कहा जा सकता है कि अघोष ध्वनियों पर सघोष ध्वनियों की अपेक्षा कुछ अधिक बलाघात होता है।

ध्वनियों के गुण, मात्रा, स्वर एवं बलाघात का महत्व प्रत्येक भाषा में समान नहीं है। साधारण रूप से कोई भी भाषा इन तीनों का समान भाव से प्रयोग नहीं करती। हिन्दी में मात्रा (काल) का, इंग्लिश में बलाघात का और चीनी में स्वर का महत्व है और इन भाषाओं में इन गुणों का व्यतिक्रम, अर्थ का अनर्थ कर डालता है। जैसे—मरना, मारना; पिटना, पीटना; सुर, सूर; पता, पत्ता; रसा, रस्सा आदि में अर्थ का भेद मात्रा के भेद के कारण ही है।

अभ्यास

१—स्थान एवं प्रयत्न किसे कहते हैं ?

२—स्थान कितने हैं ?

३—तालव्य वर्ण कौन से हैं ?

४—य, ष, र, फ, ध, ट, च, आ, ऐ—इनके स्थान बताओ ?

५—प्रयत्न कितने प्रकार के हैं ?

६—आभ्यन्तर और वाह्य प्रयत्न दोनों के भेद और उपभेद उदाहरण देकर समझाओ।

७—य, स, भ, क, ज, न, ट, ढ, ऊ, ए, औ, म, त, ख ञ—इनके आभ्यन्तर और वाह्य प्रयत्न बताओ।

८—ध्वनियों के गुण कितने हैं ? उनकी परिभाषा लिख कर परस्पर अन्तर समझाओ। बलाघात किसे कहते हैं ?

द्वितीय खण्ड :: शब्द विचार

शब्द

एक या एक से अधिक अक्षरों के मेल से बने ध्वनि-समूह को शब्द कहते हैं। जैसे—आ, जा, इत्यादि एक अक्षर से और राम, मोहन, यज्ञदत्त इत्यादि अनेक अक्षरों से बने शब्द हैं।

भेद

शब्द दो प्रकार के होते हैं—(१) सार्थक और (२) निरर्थक। सार्थक वे शब्द हैं जो अंश अथवा सामूहिक रूप से किसी-न-किसी अर्थ को बतलाते हैं। ऊपर उदाहरण में दिए हुए सभी शब्द सार्थक हैं। निरर्थक वे शब्द हैं जो स्पष्ट रूप से किसी अर्थ को प्रकट नहीं करते। जैसे—टक्टक्, कड़कड़ आदि। इन शब्दों का स्पष्ट रूप से

कोई अर्थ व्यक्त नहीं होता❀ । व्याकरण में सार्थक शब्दों का ही विचार किया जाता है ।

वर्गीकरण

शब्दों का वर्गीकरण प्रधान रूप से चार प्रकार से किया जाता है—(१) अर्थ के आधार पर (२) व्युत्पत्ति के आधार पर (३) उत्पत्ति के अनुसार और (४) प्रयोग के अनुसार ।

अर्थ के आधार पर—(१) वाचक (२) लक्षक और (३) व्यंजक ये तीन भेद किए जाते हैं ।

वाचक—वे शब्द हैं जो किसी संकेतित अर्थ को बतलाते हैं एवं उन्हें समझने में किसी कठिनाई का अनुभव नहीं होता । जैसे—कुर्सी, कुत्ता, गाय, भैंस आदि । ये शब्द किसी निश्चित अर्थ वाली वस्तु एवं प्राणियों का अर्थ-बोध कराते हैं । इनके समझने में कठिनाई अनुभव नहीं होती ।

लाक्षणिक—वे शब्द हैं जो सीधे मुख्य अर्थ को न बताते हों, परन्तु उससे सम्बन्धित अन्य अर्थ का बोध कराते हों । जैसे—देवदत्त गधा है । यहां देवदत्त गधा तो हो नहीं सकता । अतः गधे का अर्थ मूर्ख लिया जायगा ।

❀भाषा विज्ञान की दृष्टि से शब्दों का विश्लेषण करने पर हम इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि इस अनन्त शब्द-भण्डार में कोई भी शब्द निरर्थक नहीं है । जिन्हें हम निरर्थक समझते हैं उनका भी कोई न कोई अर्थ होता ही है । इसलिये यहाँ पर 'सार्थक' शब्द का ग्रहण सापेक्ष दृष्टि से किया गया है । ब्रह्म की तरह से शब्द भी अनन्त एवं व्यापक हैं । मनुष्य की शक्ति बहुत थोड़ी है अतः वह शब्द के कुछ ही अंश को ग्रहण कर पाता है ।

व्युत्पत्ति के आधार पर—भी शब्दों के तीन भेद होते हैं—(१) रूढ़ (२) यौगिक और (३) योगरूढ़।

रूढ़—वे शब्द हैं जिन के खण्ड सार्थक न हों, पर उन खण्डों से मिलकर बने शब्द किसी विशेष अर्थ का बोध कराते हों। जैसे—जल. घोड़ा, बैल आदि। यहां इन शब्दों के खण्ड, ज, ल, घो, ड़ा, बै, ल किसी अर्थ का बोध नहीं कराते हैं, पर खण्ड मिलने पर किसी विशेष अर्थ के लिये रूढ़ अर्थात् प्रसिद्ध हैं।

यौगिक—वे शब्द हैं जिन के खण्ड सार्थक हों एवं जो मूल धातु के अर्थ को भी व्यक्त करते हों। जैसे—पाचक, और पाठक, जल वाला, घुड़सवार आदि। यहां पर पाचक और पाठक शब्द अपने मूल 'पच्' और 'पठ्' धातु के अर्थ को भी बताते हैं और 'जलवाला' तथा 'घुड़सवार' सार्थक खण्डों वाले शब्द हैं।

योगरूढ़—वे शब्द हैं जो यौगिक होने पर भी किसी विशेष अर्थ में प्रसिद्ध हों। जैसे—पङ्कज। पङ्कज का अर्थ है कीचड़ से पैदा होने वाला, परन्तु यहां यह 'कमल' अर्थ में रूढ़ (प्रसिद्ध) है। यूं कीचड़ से तो कीड़े आदि भी पैदा होते हैं किन्तु उनको पंकज नहीं कहा जाता। इसी प्रकार 'लम्बोदर' 'गिरिधारी' आदि शब्द भी योगरूढ़ हैं।

उत्पत्ति के अनुसार—शब्दों के चार भेद होते हैं—(१) तत्सम (२) तद्भव (३) देशज और (४) विदेशी।

तत्सम—वे शब्द हैं जो संस्कृत के समान ही हिन्दी में प्रयोग किये जाते हैं। जैसे—पुत्र, माता, पिता, भ्राता आदि।

तद्भव—वे शब्द हैं जो संस्कृत के शब्दों से बिगड़ कर बने हैं। जैसे—खेत, दूध, हाथ आदि। ये शब्द क्रमशः संस्कृत के 'क्षेत्र', 'दुग्ध', 'हस्त' से बने हैं। इसलिये ये तद्भव = उससे बने कहलाते हैं।

देशज—वे शब्द हैं, जिनकी उत्पत्ति संस्कृत शब्दों से नहीं हुई है अपितु ये भारत की प्रान्तीय बोलियों से हिन्दी में आये हैं। जैसे—पेट, रोड़ा, पगड़ी, लोटा, कटोरी आदि।

प्रयोग के अनुसार शब्दों के आठ भेद हैं—(१) संज्ञा, (२) सर्वनाम, (३) विशेषण, (४) क्रिया, (५) क्रिया विशेषण, (६) सम्बन्धबोधक, (७) योजक और (८) विस्मयबोधक।

इनमें प्रथम चार, संज्ञा से लेकर क्रिया तक, विकारी हैं, एवं शेष चार अविकारी। प्रथम के चार 'विकारी' इसलिये कहलाते हैं, क्योंकि लिंग, वचन, कारक के अनुसार इनके रूप में विकार अर्थात् परिवर्तन होता रहता है। अन्त के चारों में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता इसीलिये ये अव्यय भी कहलाते हैं।

व्याकरण में इन्हीं आठ प्रकार के शब्दों का विवेचन मुख्य रूप से किया जाता है। अगले अध्यायों में हम इन्हीं का विवेचन करेंगे।

अभ्यास

१ शब्द किसे कहते हैं ?

२ शब्दों का वर्गीकरण कितने प्रकार से किया जाता है ?

३ यौगिक और योगरूढ़ शब्दों का अन्तर उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिये।

४ तत्सम और तद्भव किसे कहते हैं ?

५ प्रयोग के अनुसार शब्द कितने प्रकार के हैं ?

६ विकारी और अविकारी किसे कहते हैं ?

चतुर्थ प्रकरण

संज्ञा

किसी वस्तु, स्थान या व्यक्ति के नाम को संज्ञा कहते हैं। जैसे—घर, अग्नि, दिल्ली, मोहन, गङ्गा आदि।

संज्ञा के भेद

संज्ञा तीन प्रकार की होती हैं—(१) व्यक्तिवाचक (२) जाति-वाचक (३) भाववाचक।

व्यक्तिवाचक—वह संज्ञा है जिसके द्वारा किसी एक व्यक्ति, स्थान अथवा वस्तु का बोध होता हो। जैसे—(१) कृष्ण अपने समय के सबसे बड़े राजनीतिज्ञ थे। (२) बनारस गङ्गा के किनारे पर बसा हुआ है। (३) चन्द्रमा अपनी आह्लादकता के लिये प्रसिद्ध है।

जातिवाचक—वह संज्ञा है जो अपने सदृश रूप और गुण वाली अन्य वस्तुओं का भी बोध कराये। जैसे—(१) आम के बागों की संख्या प्रतिदिन बढ़ ही रही है। (२) शहर के लड़के प्रायः शरारती होते हैं। (३) पशुओं के साथ निर्दयता का व्यवहार करना निन्दनीय है।

उपर्युक्त वाक्यों में बड़े अक्षरों में लिखे शब्द किसी व्यक्ति विशेष का बोध न कराके अपने सदृश्य अन्य वस्तुओं का भी बोध कराते हैं।

कभी कभी व्यक्ति वाचक संज्ञायें अपना ही बोध न कराके अपने विशेष गुणों के कारण जाति का बोध कराने लगती हैं। जैसे—(क) आज घर-घर में सीता की आवश्यकता है—सीता के समान सती

साध्वी की। (ख) कालिदास को भारतवर्ष का शेक्सपियर कहा जाता है—सबसे अधिक प्रसिद्ध और सफल नाटककार। (ग) अब्दुलगफारखां सीमाप्रान्त के गांधी कहे जाते हैं—गांधी जैसे गुण वाले।

भाववाचक—किसी गुण, कार्य अथवा दशा विशेष का बोध कराने वाली संज्ञा भाववाचक कहलाती है। गुण—अच्छाई, भलाई, बुराई, पशुपना। कार्य—चलाव, फिराव, चोरी, निर्णय। दशा—बचपन, निर्धनता, बीमारी आदि।

इनके अतिरिक्त कुछ विद्वान् संज्ञा के दो भेद, द्रव्यवाचक और समूहवाचक और मानते हैं। कुछ जातिवाचक में ही इनका अन्तर्भाव मानते हैं। हमारे अपने विचार में भीड़, कक्षा, सोना, चांदी जाति विशेष का बोधक होने से जाति वाचक के अन्तर्गत हो जाते हैं।

नोट—व्यक्तिवाचक संज्ञा तथा भाववाचक संज्ञा सदा एक ही बचन में प्रयुक्त होती हैं। यदि किसी स्थान पर उपर्युक्त दोनों संज्ञाओं के बहुबचन के रूप मिलें तो यह समझना चाहिये कि उन स्थानों पर इनका प्रयोग जातिवाचक संज्ञा के रूप में किया गया है। जैसे, ऊपर दिये गये, 'आज घर-घर में सीता की आवश्यकता है।'

भाववाचक संज्ञा बनाने के प्रकार

भाववाचक संज्ञा तीन प्रकार के शब्दों से बनती है :—

(१) जातिवाचक संज्ञा (२) विशेषण (३) क्रिया।

(१) जातिवाचक संज्ञा से—पशु से पशुता, लड़का से लड़कपन, मनुष्य से मनुष्यत्व आदि।

(२) विशेषण से—मूर्ख से मूर्खता, दयालु से दयालुता, सुन्दर से सुन्दरता, गर्म से गर्मी, पीला से पीलापन।

(३) क्रिया से—लड़ना से लड़ाई, कमाना से कमाई, उभरना से उभार।

द्रव्यवाचक संज्ञा और साधारण जातिवाचक संज्ञा में अन्तर यह है कि द्रव्यवाचक संज्ञाओं में (सोना, चांदी, अन्न आदि के साथ) परिमाण वाचक शब्द का प्रयोग होता है, जैसे—थोड़ा सोना, थोड़ी चांदी और बहुत-सा अन्न । जातिवाचक संज्ञा के साथ संख्यावाचक शब्द का प्रयोग किया जाता है, जैसे—दो घोड़े, चार हाथी, दस बैल आदि । कोई भी व्यक्ति थोड़ा घोड़ा, बहुत सा हाथी, दो सोना चार चांदी आदि शब्दों का प्रयोग नहीं करता।

अभ्यास

१ संज्ञाओं के कितने भेद हैं ?

२ व्यक्तिवाचक संज्ञा किसे कहते हैं, उदाहरण देकर समझाओ ?

३ जातिवाचक और द्रव्यवाचक संज्ञाओं में क्या अन्तर है ?

४ निम्नलिखित संज्ञाओं का वर्गीकरण करो—

नेहरू, तिलक, लखनऊ, पूना, आर्यसमाज, सनातनधर्म सभा, बालक, टोकरी, अंगूर ।

संज्ञा के रूपान्तर

वाक्य रचना में जब बहुत से शब्द और क्रियायें परस्पर मिलते हैं तो वाक्य के अर्थ के अनुसार विकारी शब्दों में लिंग, वचन, कारक द्वारा परिवर्तन हो जाता है, इसे ही संज्ञा का *रूपान्तर* कहते हैं। जैसे—लड़का पढ़ता है, लड़की पढ़ती है। यहाँ पहले वाक्य में 'लड़का' पुलिंग है, अतः 'पढ़ता है' क्रिया भी पुलिंग की है। दूसरे वाक्य में कर्त्ता और क्रिया दोनों ही स्त्री लिंग के हैं। अत: पहला वाक्य पुलिंग और दूसरा स्त्री लिंग कहलायेगा। यहां लिंग परिवर्तन द्वारा संज्ञा में रूपान्तर हुआ है। 'घोड़ा दौड़ता है' 'घोड़े दौड़ते हैं' यहां प्रथम वाक्य एक वचन का और दूसरा बहुवचन का है। अतः यहाँ वचन परिवर्तन के द्वारा संज्ञा में रूपान्तर हुआ है। 'राम गेंद से खेलता है' 'राम के लिए गेंद लाओ' 'राम का गेंद कहां है ?' यहां पर पहला वाक्य 'करण' कारक का, दूसरा 'सम्प्रदान' कारक का, तीसरा 'सम्बन्ध' कारक का है। अतः यहाँ कारक द्वारा संज्ञा में रूपान्तर हुआ है।

यह स्मरण रखना चाहिए कि यह रूपान्तर केवल विकारी शब्दों में ही होता है, अविकारी शब्दों में नहीं।

अब हम क्रम से संज्ञा के विकार (१) लिंग (२) वचन और (३) कारक के स्वरूप का विचार करेंगे।

लिंग

लिंग का अर्थ है चिन्ह। जिस के द्वारा यह पता चले कि अमुक संज्ञा स्त्री जाति के लिए प्रयुक्त हुई है अथवा पुरुष जाति के लिए, उसे लिंग कहते हैं। संस्कृत में तीन लिंग होते हैं—पुलिंग स्त्रीलिंग और नपुंसकलिंग। पर हिन्दी भाषा में दो ही लिंग होते हैं। तीसरा नपुंसकलिंग नहीं होता।

लिङ्ग की पहिचान के नियम

लिङ्ग की पहचान के लिए किसी प्रकार के निश्चित नियम बना सकना सम्भव नहीं। प्रत्येक नियम के कुछ न कुछ अपवाद अवश्य पाये जाते हैं। यदि स्त्री शब्द का बोध कराने वाले शब्द स्त्रीलिङ्ग में ही प्रयुक्त होते और पुरुष का बोध कराने वाले सारे शब्दों का लिंग यदि पुल्लिंग ही होता तो गड़बड़ होने की सम्भावना बहुत कम थी परन्तु स्त्री जाति का बोध कराने वाले शब्द पुल्लिंग और नपुंसक लिंग में भी पाये जाते हैं, तथा पुरुष जाति का बोध कराने वाले कितने ही शब्द स्त्रीलिंग माने जाते हैं। स्त्री का बोध कराने वाला महिला शब्द स्त्रीलिंग में, दारा पुल्लिंग में और कलत्र नपुंसकलिंग में आता है। इसी प्रकार देवता बोध तो कराता है पुरुष जाति का परन्तु उसका प्रयोग होता है, स्त्रीलिंग में। इस प्रकार हमने देख लिया कि लिंग निर्धारण के लिये किन्ही सुनिश्चित नियमों का बना सकना असम्भव-सा ही है। फिर भी नीचे कुछ नियम दिये जारहे हैं जिनके आधार पर हम बहुत अंश तक लिंग विषय का ठीक ठीक ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं।

पुल्लिंग जानने के कुछ नियम इस प्रकार हैं

(१) संस्कृत आकारान्त शब्दों को छोड़ कर (रमा, कृपा, दया आदि) जिन शब्दों के अन्त में 'आ' आता हो, वे पुल्लिंग कहलाते हैं जैसे—घड़ा, लोटा, सोटा, मोटा, कपड़ा, पैसा, चमड़ा आदि।

(२) वे भाववाचक संज्ञाएं जिनके अन्त में 'अ' आता है:—बचपन, पशुत्व, धैर्य, लाघव, गौरव आदि।

(३) जिन भाववाचक संज्ञकों के अन्त में 'पा' प्रत्यय आता है वे भी पुल्लिंग में ही प्रयुक्त होते हैं—बुढ़ापा, मुटापा, आदि।

(४) पर्वतों के नाम—हिमालय, विन्ध्याचल, सुमेरु, आबू आदि।

(५) महीनों और दिनों के नाम—चैत्र, वैशाख, सोम, मङ्गल आदि ।

(६) पृथ्वी को छोड़ कर अन्य ग्रहों के नाम—सूर्य, चन्द्र, बुध आदि ।

(७) इ, ई, ऋ को छोड़ कर वर्णमाला के सभी अक्षर—अ, आ, उ, ऊ, क, च, प आदि ।

(८) जामुन, मौलसिरी, इमली आदि कुछ वृक्षों को छोड़ कर सभी वृक्ष वाचक शब्द—आम, पीपल, नीम, बड़, गूलर आदि ।

स्त्रीलिंग की पहिचान

(१) प्रायः सभी ईकारान्त शब्द (घी, दही, पानी, मोती आदि को छोड़ कर) स्त्रीलिंग में आते हैं—चिट्ठी, पत्री, नदी आदि ।

(२) संस्कृत के आकारान्त शब्द—सभा, लता, रमा, विद्या आदि ।

(३) नदियों के नाम— गङ्गा, घाघरा, यमुना, सिन्धु, नर्मदा आदि ।

(४) तिथियों के नाम—पूर्णिमा, प्रतिपदा, द्वितीया आदि ।

(५) भाषाओं के नाम—अंग्रेजी, फ्रेंच, हिन्दी, उर्दू आदि ।

(६) वर्णमाला के तीन अक्षर—इ, ई, ऋ ।

(७) ऐसे भाववाचक शब्द, जिनके अन्त में ईर, ई, वट, हट आदि हो । जैसे—तकदीर, तदबीर, चिकनाई, मिठाई, मिलावट, घबराहट आदि ।

(८) 'इया' में अन्त होने वाली संज्ञायें—कुटिया, लुटिया, लठिया, कुतिया आदि ।

(९) ऊकारान्त संज्ञायें—आंसू, आलू, गेरू आदि को छोड़ कर, बालू, लू आदि ।

(१०) तकारान्त संज्ञायें—खेत, सूत आदि को छोड़ कर, बात, लात, छत आदि।

पुल्लिंग से स्त्रीलिंग बनाने की विधि

(१) कुछ शब्दों के लिंग एक दूसरे से एकदम विरुद्ध होते हैं—

पुल्लिंग	स्त्रीलिंग	पुल्लिंग	स्त्रीलिंग
पिता	माता	वर	वधू
भाई	बहिन	राजा	रानी
पुरुष	स्त्री	बैल	गाय

(२) अकारान्त पुलिंग के अन्त में ई लगाने से स्त्रीलिंग हो जाता है—

दास	से	दासी
देव	से	देवी
पुत्र	से	पुत्री
नर	से	नारी

(३) आकारान्त संज्ञाओं के अन्त में ई लगाने से—

लड़का	लड़की	नाना	नानी
गधा	गधी	साला	साली
बकरा	बकरी	चाचा	चाची

(४) कुछ आकारान्त शब्दों के अन्त में इया भी लगता है—
चूहा से चुहिया, लोटा से लुटिया, बेटा से बिटिया।

(५) व्यापार वाचक अकारान्त, आकारान्त और ईकारान्त शब्दों के अन्त में 'इन' लग जाता है:—

कहार	कहारिन	लोहार	लोहारिन	चमार	चमारिन

जुलाहा	जुलाहिन	कसेरा	कसेरिन	ठठेरा	ठठेरिन
नाई	नाइन	धोबी	धोबिन	तेली	तेलिन

(६) कुछ शब्दों के अन्त में बिना किसी विशेष नियम के नी प्रत्यय लगा दिया जाता है—

ऊंट ऊंटनी, सिंह सिंहनी, शेर शेरनी, जाट जाटनी।

(७) कुछ शब्दोंके अन्त में आनी प्रत्यय लगा दिया जाता है—

मेहतर	मेहतरानी	जेठ	जेठानी	चौधरी	चौधरानी

(८) कुछ अकारान्त संस्कृत शब्दों के अन्त में आ लगा कर स्त्रीलिंग बनाया जाता है—

प्रिय प्रिया, सुत सुता, शूद्र शूद्रा, बाल बाला।

(९) जिन अकारान्त शब्दों के अन्त में अक आता है वहां इका कर दिया जाता है—

बालक बालिका, लेखक लेखिका, पाठक पाठिका, गायक गायिका।

(१०) पदवी वाचक शब्दों के अन्त में आइन लग जाने से स्त्रीलिंग बन जाता है—

पाण्डे पण्डाइन, दुबे दुबाइन, ओझा ओझाइन, लाला लालाइन।

इन सभी नियमों में कुछ न कुछ अपवाद अवश्य पाये जाते हैं। इसलिए इस विषय में किसी सर्वव्यापक नियम का बना सकना सम्भव नहीं। इस विषय में अधिकांश ज्ञान तो प्रयोग द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

अभ्यास

१ लिंग का क्या अर्थ है, और उसके कितने भेद हैं ?

२ पुलिंग से स्त्रीलिंग बनाने के कुछ मोटे नियमों का उल्लेख करो ?

१ नीचे लिखे शब्दों में लिंग बताओः—

घास, बरगद, पड़वा, ऊन, नायिका, महिला, रांड, ननद, बच्चा, पुस्तक, बाजार, दही, खेल, आत्मा।

—:०:—

वचन

संज्ञा आदि विकारी शब्दों के जिस रूप से संख्या का बोध होता है, उसे वचन कहते हैं। हिन्दी में वचन दो होते हैं—(१) एकवचन और (२) बहुवचन।

विकारी शब्द के जिस रूप से यह पता चले कि यह एक के लिए प्रयुक्त किया जा रहा है, वह एकवचन कहलाता है। जैसे—राम खाता है, घोड़ा दौड़ता है।

विकारी शब्द के जिस रूप से यह पता चले कि वह एक से अधिक के लिए प्रयुक्त किया जारहा है, वह बहुवचन कहलाता है। जैसे—लड़के खेलते हैं, घोड़े दौड़ते हैं।

कभी कभी आदर के लिये भी एकवचन के स्थान में बहुवचन का प्रयोग किया जाता है। जैसे—गाँधी जी अपने समय के सर्व-श्रेष्ठ महापुरुष थे।

कभी कभी संज्ञाओं के रूप में वचन के कारण अन्तर पड़ जाता है और कभी नहीं। जैसे—'लड़का पढ़ने गया' 'लड़के पढ़ने गये' इन वाक्यों में संज्ञा के रूप में वचन के अनुसार अन्तर पड़ जाता है। पर इसके विपरीत 'चोर पकड़ा गया', 'चोर पकड़े गए' इस उदाहरण में कोई अन्तर नहीं पड़ता। सारांश यह निकला कि यदि संज्ञा का रूप कारक चिन्ह से रहित हो तो कभी उसके रूप में परिवर्तन हो जाता है और कभी नहीं। इसके विपरीत यदि संज्ञा कारक चिन्ह से

युक्त हो तो उसके रूप में परिवर्तन होना अनिवार्य है—चोरों और डाकुओं को सजा अवश्य मिलनी चाहिये। इस वाक्य में चोर और डाकू संज्ञाओं में कर्मकारक 'को' चिन्ह लगे रहने से उनमें विकार हो जाता है। इसके अतिरिक्त यह भी देखा जाता है कि लिंग के अनुसार भी संज्ञाओं के रूप में अन्तर पड़ जाता है। जैसे ऊपर के उदाहरण में चोर शब्द के रूप में कोई अन्तर नहीं पड़ता, वह एकवचन और बहुवचन में एक-सा रहता है। परन्तु स्त्रीलिंग रात शब्द के रूप एकवचन और बहुवचन में एकसे नहीं रहते—'रात शीतल है' रातें शीतल हैं।'

इस प्रकार हमने देख लिया कि संज्ञाओं के रूप-परिवर्तन के दो मुख्य कारण हैं—(१) कारक चिन्हों का प्रयोग और (२) लिंग। अब इन दोनों का विवेचन क्रमशः पृथक् २ रूप में किया जाता है।

एक वचन से बहुवचन बनाने के नियम

पुल्लिंग, कारक चिन्ह-रहित

(१) अकारान्त, इकारान्त, ईकारान्त, उकारान्त, ऊकारान्त, एकारान्त, ओकारान्त, औकारान्त शब्द तथा संस्कृत के आकारान्त और एकारान्त शब्द दोनों वचनों में उसी प्रकार रहते हैं। जैसे—घर, घर; बालक, बालक; मुनि, मुनि; मन्त्री, मन्त्री; सेनानी, सेनानी; चौबे, चौबे; कोदों, कोदों; देवता, देवता आदि।

(२) हिन्दी आकारान्त शब्दों में तथा ऐसे आकारान्त शब्दों में जो फारसी आदि से लिये गये हैं, बहुवचन बनाने के लिये अन्त में 'आ' के स्थान पर 'ए' कर देते हैं:—

लड़का, लड़के, शहज़ादा, शहज़ादे।

निम्नलिखित शब्दों के रूप बहुवचन में भी नहीं बदलते:—

नाना, दादा, मामा, चाचा, काका, लाला, राणा, मुखिया,

सुरमा, बाबा, अगुआ, पुरखा ।

स्त्रीलिङ्ग कारक चिह्न रहित

(१) बहुवचन बनाने के लिये अकारान्त शब्दों के 'अ' को 'ए' कर देते हैं—रात, रातें; बात, बातें; बहिन, बहिनें; आंख, आंखें ।

(२) इकारान्त तथा ईकारान्त शब्दों के अन्त में 'याँ' जोड़ देते हैं और अन्तिम 'ई' के स्थान पर 'इ' हो जाती है :—

नीति, नीतियां रानी, रानियां आदि

(३) जिन शब्दों के अन्त में 'इया' आता है उनके अन्त में अनुस्वार और लगा दिया जाता है—

डिबिया, डिबियां; लठिया, लठियां ।

(४) शेष अर्थात् आकारान्त; उकारान्त, ऊकारान्त और औकारान्त के अनन्तर एं लगा देते हैं और 'ऊ' को 'उ' कर देते हैं—

लता, लताएं, वस्तु, वस्तुएं, बहू, बहुएं, गौ, गौएं ।

ओकारान्त के लिये यह याद रखना चाहिये कि उसके रूप में कोई अन्तर नहीं पड़ता । सरसों, सरसों ।

पुल्लिंग तथा स्त्रीलिंग कारक चिह्न सहित

अकारान्त, आकारान्त, एकारान्त संज्ञाओं के अन्त में 'अ' तथा 'आ' के स्थान पर ओ कर देते हैं—चोर, चोरों; लड़का, लड़कों; चौबे; चौबों ।

संस्कृत आकारान्त, सभी प्रकार के उकारान्त ऊकारान्त और औकारान्त संज्ञाओं के अनन्तर ओं जोड़ दिया जाता है और अन्तिम दीर्घ 'ऊ' के स्थान पर 'उ' कर दिया जाता है—राजा, राजाओं, बहू, बहुओं; गौ, गौओं ।

इकारान्त तथा ईकारान्त संज्ञाओं के अन्त में यों जोड़ दिया

जाता है तथा अन्तिम 'ई' को 'इ' कर दिया जाता है : -

मुनि, मुनियों; रीति, रीतियों; नीति, नीतियों; रानी, रानियों; भाभी, भाभियों ।

कभी-कभी संज्ञा एक वचन में ही प्रयुक्त होती हैं, परन्तु उसे बहुवचन बनाने के लिये गण, जन और लोग आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है । इन शब्दों के प्रयोग द्वारा जो बहुवचन बनाया जाता है, उसकी क्रिया भी बहुवचन की ही होती है । जैसे—

राजा लोग आये हैं, भक्तगण भगवान् के दर्शन करते हैं ।

अभ्यास

१ वचन किसे कहते हैं और वे कितने होते हैं ?

२ वचन के अनुसार संज्ञाओं के रूप में कब परिवर्तन होता है ?

३ इकारान्त और ईकारान्त संज्ञाओं के बहुवचन किस प्रकार बनाये जाते हैं ?

४ संज्ञा के रूप में परिवर्तन किये बिना, बहुवचन बनाये जा सकते हैं या नहीं, यदि हाँ तो किस प्रकार ?

कारक

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उसका सम्बन्ध क्रिया एवं वाक्य के दूसरे शब्दों के साथ जाना जाता है उसे कारक कहते हैं ।

युधिष्टिर ने अश्वमेध यज्ञमें अपने हाथों से ब्राह्मणों को लाखों रुपये दान दिए । इस उपर्युक्त वाक्य में दान दिया क्रिया के साथ युधिष्ठिर, हाथों, ब्राह्मणों ये क्रमशः कर्त्ता, करण और सम्प्रदान कारक हुए ।

नोट—कुछ लेखकों के अनुसार संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप

से उसका सम्बन्ध क्रिया के साथ जाना जाय, उसे ही कारक कहते हैं। पर इस लक्षण के अनुसार सम्बन्ध कारक और सम्बोधन कारक दोनों ही कारक नहीं हो सकते, क्योंकि इन दोनों में किसी का भी क्रिया के साथ सीधा सम्बन्ध नहीं है। इस प्रकार यह लक्षण अधूरा होता है। *यह मोहन की पुस्तक है। हे कृष्ण तम इधर आओ।*

इसमें से दूसरे वाक्य में कृष्ण का सम्बन्ध आओ क्रिया से नहीं। इस लिए यही कहना उचित है कि जिन संज्ञाओं या सर्वनामों का सम्बन्ध वाक्य के अन्य शब्दों के साथ हो, वे भी कारक कहलाते हैं।

कारक भेद

कारक के निम्नलिखित आठ भेद हैं—(१) कर्ता, (२) कर्म (३) करण, (४) सम्प्रदान (५) अपादान (६) सम्बन्ध (७) अधिकरण और (८) सम्बोधन।

कर्ता—संज्ञा के उस रूप को कहते हैं जिससे यह मालूम हो कि जिस वस्तु के लिए संज्ञा आई है वह कुछ क्रिया करती है अथवा क्रिया स्वयं होती है। राम खाता है। कृष्ण अपना कार्य करता है। इन दोनों वाक्यों में राम और कृष्ण कर्त्ता हैं क्योंकि राम खाना क्रिया का करने वाला है और कृष्ण करता क्रिया का।

दावात से स्याही गिरी। यहां गिरना रूपी क्रिया हो रही है।

कर्म—जिस वस्तु के ऊपर क्रिया के कर्म का फल पड़ता हो उसे कर्म कहते हैं। राम रोटी खाता है। इस वाक्य में खाना क्रिया का फल रोटी पर पड़ता है, इस लिये रोटी कर्म कारक है।

करण—जिस साधन के द्वारा क्रिया का सम्पादन हो वह करण कारक कहलाता है। राम ने बाण से बाली को मारा। इस वाक्य में बाण बाली के मारने में साधन है। अतः बाण करण कारक है।

सम्प्रदान—जिसके लिये कुछ किया जाय, वह सम्प्रदान कहलाता है। देवदत्त यज्ञ के लिए समिधा इकट्ठी करता है। इस वाक्य में यज्ञ सम्प्रदान कारक है क्योंकि देवदत्त कर्त्ता यज्ञ के लिये समिधा इकट्ठी करता है।

अपादान—संज्ञा का वह रूप है जिससे अलग होने, दूर होने, निकलने, विद्या सीखने, डरने तथा रक्षा करने के अर्थ का बोध हो। जैसे, *प्रयाग से सन्यासी आया। शिष्य गुरु से विद्या पढ़ता है। वीर ने आततायी से सती की रक्षा की।*

साधारणतया अपादान का अर्थ अलग होना है। पर यह लक्षण अपर्याप्त है। और अपादान के कितने ही सर्वसम्मत उदाहरण इसके अन्तर्गत नहीं आते।

सम्बन्ध—संज्ञाका वह रूप है जिससे उसकी वाच्य वस्तु का सम्बन्ध दूसरी वस्तु के साथ पाया जाय। जैसे, *राम की पुस्तक और लड़कों की पुस्तक से अधिक स्वच्छ है।* इस वाक्य में राम का और पुस्तक का सम्बन्ध होने से राम और लड़कों दोनों सम्बन्ध कारक हैं।

अधिकरण—संज्ञाका वह रूप है जिसमें किसी दूसरी वस्तुके साथ आधार और आधेय सम्बन्ध पाया जाय। जैसे, *साधु चटाई पर सोता है। दूध में मक्खन रहता है।* इन दोनों वाक्यों में चटाई और दूध क्रमशः साधु और मक्खन के आधार हैं और साधु तथा मक्खन आधेय हैं। आधार का आश्रय आधेय कहलाता है।

कारक के चिन्ह

प्रत्येक कारक का चिन्ह होता है जो विभक्ति कहलाता है। संस्कृत में यह कारक चिन्ह संज्ञा शब्द के साथ मिला होता है। पर हिन्दी में यह चिन्ह स्वतन्त्र रूप से प्रायः प्रयोग में आता है। जैसे,

पशुभिः रुद्रान् यजते—पशुओं की बलि द्वारा रुद्रों को यज्ञ से तृप्त करता है। इस उदाहरण में हिन्दी के तृतीया कारक 'द्वारा' और द्वितीया कारक 'को' संस्कृत के 'पशुभिः' और 'रुद्रान्' में इस प्रकार मिले हुए हैं कि उनकी स्वतन्त्र सत्ता एकदम लुप्त प्रतीत होती है। हिन्दी में आठ विभक्तियाँ होती हैं।

कर्ता का चिन्ह 'ने' है। जैसे, *कमला ने खाना खाया, कृष्ण ने अपना काम पूरा किया*। पर यह चिन्ह सर्वत्र काम में नहीं आता—कमला खाती है, कृष्ण अपना काम पूरा करता है इन दोनों वाक्यों में 'ने' का प्रयोग नहीं किया गया है पर फिर भी कमला और कृष्ण दोनों प्रकार के वाक्यों में समान रूप से कर्त्ता कारक माने जाते हैं।

मोटे तौर से निम्नलिखित स्थानों में 'ने' का प्रयोग बिलकुल नहीं होताः—

(१) अकर्मक क्रिया में—राम जाता है। कमला सोती है। खाना पकता है।

(२) सकर्मक क्रिया में—वर्तमान काल और भविष्यत् काल में कमला खाती है; राम खाना खायेगा।

(३) जब शब्द का कथन मात्र हो—राम, कमला, मोहन।

(४) जब किसी निबन्ध का या पाठ का शीर्षक मात्र देना हो।

निम्नलिखित स्थानों में 'ने' का प्रयोग होता है :—

(१) जब क्रिया के व्यापार को बतलाना हो—राम ने कहा। कमला ने खाना खाया।

नोटः— भूतकाल में अपूर्णभूत और हेतु हेतु मद्भूत में 'ने' का प्रयोग नहीं होता। कमला सीता से कह रही थी। यदि सीता कहती तो कमला अवश्य मानती।

(२) सकर्मक क्रिया के भूतकाल में—कमला ने खाना खाया था। कृष्ण ने खाना खाया होगा।

लाना, भूलना, बोलना, जाना, चूकना, लगना, सकना इन क्रियाओं के साथ किसी भी प्रकार के भूत काल में 'ने' का प्रयोग नहीं होता जैसे; *वह खाना लाया। वह रास्ता भूल गया। कृष्ण बोलता ही रहा।*

कर्म कारक—का चिन्ह 'को' है। यह चिन्ह प्रायः प्राणिवाचक, चेतन संज्ञाओं के साथ आता है। राम ने बाली को मारा। पर कभी कभी चेतन वाक्यों के साथ भी इसका प्रयोग नहीं होता, सिपाही ने चोर पकड़ा। अध्यापक ने विद्यार्थी देखा। यदि कर्मसंज्ञाएँ जड़ पदार्थों का बोध कराती हों तो प्रायः 'को' का प्रयोग नहीं होता। जैसे *राम खाना खाता है।* इस वाक्य में खाना कर्म जड़ पदार्थ है, अतः 'को' का प्रयोग नहीं हुआ।

करण कारक—का चिन्ह 'से' है और यह सदा ही प्रयोग में आता है। परन्तु कुछ उदाहरण ऐसे अवश्य हैं जिनमें इसका प्रयोग नहीं देखा जाता—

(१) *अपने हाथों अपना काम करना सफलता की निशानी है।*

(२) *उसने अपने हाथों अपना घर बरबाद कर दिया।* पर इस प्रकार के उदाहरण बहुत थोड़े हैं, और वे अपवाद स्वरूप ही समझने चाहियें। *राम लेखनी से लिखता है, मजदूर दाती से घास काटता है।*

सम्प्रदान कारक—के चिन्ह 'को' 'के लिये' 'वास्ते' 'अर्थ' 'निमित्त' हैं। को चिन्ह कर्म कारक और सम्प्रदान कारक दोनों में ही पाया जाता है। सम्प्रदान सदा द्विकर्मक धातुओं में ही पाया जाता है, पर कर्मकारक 'एककर्मक' धातुओं में भी पाया जाता है। यदि किसी वाक्य में 'को' का प्रयोग दो बार आवे तो जड़ पदार्थ का बोध

कराने वाली संज्ञा प्रायः कर्म और चेतन का बोध कराने वाली संज्ञा सम्प्रदान होगी। राजा ने विप्र को धन दिया। इसमें अचेतन धन कर्म कारक हुआ और चेतन विप्र सम्प्रदान कारक।

अपादान कारक—का चिन्ह से है। यह चिन्ह करण कारक और अपादान कारक दोनों में समान रूप से पाया जाता है। किस स्थान पर करण कारक है और किस स्थान पर अपादान कारक, यह प्रकरण द्वारा स्वयं स्पष्ट हो जाता है। जैसे पहले बताया जा चुका है कि करण कारक में 'से' साधन रूप से प्रयोग में आता है—वह किसी की सहायता करता है—परन्तु अपादान कारक में सहायक या साधन न बन कर किसी वस्तु के पृथक्करण के चिन्ह स्वरूप आता है। राम ने बाण से रावण को मारा और लड़का छत से गिर पड़ा। ये क्रमशः करण व अपादान कारक के उदाहरण हैं।

सम्बन्ध कारक—के चिन्ह का, की, के हैं। इनमें से 'का' और 'के' पुल्लिंग संज्ञा के पूर्व आते हैं और 'की' स्त्रीलिंग संज्ञा के पूर्व। जैसे, *राम का घर और राम की पुस्तक दोनों ही निराली हैं।* 'का' जिस संज्ञा के पूर्व आयेगा, उस संज्ञा के बाद यदि और कोई दूसरा कारक चिन्ह होगा तो 'का' के स्थान में 'के' हो जायेगा। जैसे, *यह राम का खेत है और राम के खेत में बैल घुसे हुए हैं।* इनमें से दूसरे वाक्य में संज्ञा खेत के बाद में यह अधिकरण कारक का चिन्ह होने से 'का' के स्थान में 'के' हो गया।

अधिकरण कारक—का चिन्ह में, पै, पर हैं और ये प्रायः सर्वत्र पाये जाते हैं। कुछ ऐसे स्थानों पर जहाँ वीप्सा विवक्षित होती है अर्थात् किसी विशेष भाव पर बल देने के लिये एक ही संज्ञा का एक से अधिक बार प्रयोग किया जाता है, वहाँ ये चिन्ह लुप्त रहते हैं। जैसे, *कांग्रेस के कार्यकर्ता घर घर घूमा करते थे।*

सम्बोधन कारक—के चिह्न हे, रे, अहो, अजी, अरे इत्यादि हैं। इनमें से हे का प्रयोग प्रेम, घृणा और अनादर की अतिशयता में ही होता है। आजकल सम्बोधन चिह्न लगाने की प्रवृत्ति निरन्तर कम होती जा रही है।

ऊपर दिये हुए कारकों के नियम और चिह्नों को समझने के लिये उदाहरण स्वरूप कुछ शब्दों के रूप नीचे दिये जाते हैं :—

कुछ संज्ञा शब्दों के रूप

अकारान्त पुलिङ्ग 'बालक' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	बालक, बालक ने	बालकों ने
द्वितीया	कर्म	बालक को	बालकों को
तृतीया	करण	बालक से, के द्वारा	बालकों से, के द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	बालकों के लिये, को	बालकों के लिये, को
पंचमी	अपादान	बालक से	बालकों से
षष्ठी	सम्बन्ध	बालक का, के, की	बालकों का, के, की
सप्तमी	अधिकरण	बालक में, पर	बालकों में पर
सम्बोधन	सम्बोधन	हे बालक	हे बालको

सभी अकारान्त पुलिङ्ग कृष्ण, राम, मुकुन्द, गोविन्द, मोहन आदि शब्दों के रूप बालक शब्द की तरह ही लगेंगे।

अकारान्त स्त्रीलिंग 'बहिन' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	बहिन, बहिनने	बहिनें, बहिनोंने
द्वितीया	कर्म	बहिनको	बहिनोंको
तृतीया	करण	बहिन से, के द्वारा	बहिनों से, के द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	बहिन के लिये, को	बहिनों के लिये, को

पंचमी	अपादान	बहिन से	बहिनों से
षष्ठी	सम्बन्ध	बहिन का, के, की	बहिनों का, के, की
सप्तमी	अधिकरण	बहिन में, पर	बहिनों में, पर

सभी अकारान्त स्त्रीलिङ्ग ननद, रात, बात, भैंस आदि शब्दों के रूप बहिन शब्द की तरह ही बनेंगे।

आकारान्त पुलिङ्ग 'घोड़ा' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	घोड़ा, घोड़ेने	घोड़े, घोड़ोंने
द्वितीया	कर्म	घोड़ेको	घोड़ोंको
तृतीया	करण	घोड़ेसे, केद्वारा	घोड़ोंसे, के द्वारा

इसी प्रकार शेष विभक्तियों में एकवचन में 'घोड़े' एवं बहुवचन में 'घोड़ों' के आगे कारकचिह्न लगते जावेंगे।

आकारान्त स्त्रीलिंग 'लता' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	कर्त्ता	लता, लताने	लताएँ, लताओंने
द्वितीया	कर्म	लताको	लताओंको

शेष रूपों में सर्वत्र एकवचन में 'लता' एवं बहुवचन में 'लताओं' के आगे कारक चिह्न लगते चलेंगे।

इकारान्त पुलिंलग 'मुनि' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	मुनि, मुनिने	मुनि, मुनियोंने
द्वितीया	कर्म	मुनिको	मुनियोंको

इसी प्रकार शेष कारकों में 'मुनि' एवं 'मुनियों' रूप के आगे कारक चिन्ह लगते जायेंगे।

इकारान्त पुल्लिग और स्त्रीलिंग दोनों प्रकार के शब्दों के रूप

एक ही प्रकार के होंगे। केवल स्त्रीलिंग के कर्त्ता कारक के बहुवचन में 'इ' को 'इयाँ' हो जाता है।

ईकारान्त पुलिंग 'धोबी' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्ता	धोबी, धोबी ने	धोबी, धोबियों ने
द्वितीया	कर्म	धोबी को	धोंबियों को

शेष रूपों में एकवचन में 'धोबी' और बहुवचन में 'थोबियों के आगे कारक-चिह्न लगाने से बनते चलेंगे।

प्रायः सभी ईकारान्त पुल्लिग एवं स्त्रीलिंग शब्दों के रूप 'धोबी' शब्द की तरह ही चलेंगे। केवल स्त्रीलिंग के कर्त्ताकारक के बहुवचन में 'ई' को 'इयां' से बदल देते हैं।

उकारान्त पुल्लिग 'साधु' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	साधु, साधु ने	साधु, साधुओं ने
द्वितीया	कर्म	साधु को	साधुओं को

शेष सभी कारकों में एकवचन में 'साधु' और बहुवचन में 'साधुओं' के आगे कारक-चिह्न जोड़ देने से रूप बनते हैं।

पुल्लिग तथा स्त्रीलिंग के सभी उकारान्त शब्दों के रूप 'साधु' शब्द की तरह ही चलेंगे, केवल स्त्रीलिंग के कर्ताकारक के बहुवचन में 'उ' को 'ए' से बदल देते हैं। दोनों ही लिंगों के सम्बोधन में 'उ' का 'ओ' हो जाता है।

ऊकारान्त पुल्लिग 'डाकू' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथम	कर्त्ता	डाकू, डाकूने	डाकू, डाकुओं ने
द्वितीया	कर्म	डाकू को	डाकुओं को

शेष रूपों में एकवचन में 'डाकू' और बहुवचन में 'डाकुओं' के आगे कारक-चिन्ह जुड़ते चलेंगे।

स्त्रीलिंग तथा पुल्लिग के ऊकारान्त शब्दों के रूप समान ही रहेंगे। केवल कर्त्ताकारक के बहुवचन में स्त्रीलिंग शब्द के 'ऊ' को 'ए' से बदल देते हैं।

हिन्दी में 'ऋकारान्त' शब्दों का प्रयोग नहीं होता।

एकारान्त पुल्लिग 'दुबे' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	दुबे, दुबेने	दुबे, दुबोंने
द्वितीया	कर्म	दुबे को	दुबों को

शेष कारकों में इसी प्रकार एकवचन में 'दुबे' और बहुवचन में 'दुबों' के आगे कारक-चिन्ह जुड़ते चलेंगे।

एकारान्त और ऐकारान्त शब्दों के रूप पुल्लिग और स्त्रीलिंग में इसी प्रकार बनेंगे।

ओकारान्त पुल्लिग 'माधो' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	माधो, माधो ने	माधो, माधोओं ने
द्वितीया	कर्म	माधो को	माधोओं को

शेष इसी प्रकार एकवचन में 'माधो' और बहुवचन में 'माधोओ' के आगे कारक-चिन्ह लगते चलेंगे।

स्त्रीलिंग में ओकारान्त शब्द नहीं मिलते हैं।

औकारान्त पुलिंग 'जौ' शब्द

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	जौ, जौने	जौ, जौओं ने
द्वितीया	कर्म	जौ को	जौओं को

शेष रूपों में 'जौ' 'जौओ' के आगे कारक-चिन्ह लगते चलेंगे। स्त्री 'लिंग' 'जौ' शब्द के रूप इसी प्रकार से बनते हैं।

अभ्यास

(१) कारक किसे कहते हैं और उसके कितने भेद हैं ?

(२, 'से' यह चिन्ह किन किन कारकों में प्रयुक्त होता है ? यदि एक चिन्ह दो कारकों में प्रयुक्त होता है तो उनमें अन्तर किस उपाय से समझा जा सकता है।

(३) कर्मकारक का चिन्ह क्या है और उसका प्रयोग किन किन स्थानों पर होता है ?

(४) अधिकरण कारक के चिन्ह का प्रयोग किस स्थान पर किया जाता है और किस पर नहीं ? उदाहरण देकर समझाओ।

(५) लता, धोबी, दुबे, बहिन, जौ और धेनु शब्दों के रूप आठों कारकों में लिखो।

पंचम प्रकरण

सर्वनाम

सर्वनाम वह विकारी शब्द है जो संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त होता है। जैसे—मैं, आप, तू, तुम।

यदि एक वाक्य में बार बार एक ही संज्ञा का प्रयोग किया जाय तो वह सुनने में कानों को बहुत बुरा लगता है। इस श्रुति-कटुत्व

दोष को बचाने के लिए सर्वनाम का प्रयोग किया जाता है । सर्वनाम के निम्नलिखित भेद हैं:—

(१) पुरुष-वाचक (२) निश्चयवाचक (३) अनिश्चयवाचक (४) सम्बन्ध-वाचक और (५) प्रश्नवाचक । कुछ व्याकरणकारों ने निजवाचक सर्वनाम को पृथक् छठा भेद माना है, पर अधिकांश विद्वानों की सम्मति में वह पुरुष-वाचक सर्वनाम के अन्तर्गत है ।

पुरुष-वाचक सर्वनाम तीन प्रकार के हैं । उत्तमपुरुष—जिस में वक्ता स्वयं अपने लिए कहता है । जैसे—मैं, हम । मैं एकवचन है, एक के लिए ही प्रयुक्त होता है । हम बहुवचन है और साधारणतया एक से अधिक के लिए ही प्रयुक्त होता है । परन्तु कुछ ऐसे स्थल भी हैं जहाँ एक व्यक्ति के लिए भी हम का प्रयोग होता है—

(१) समाचार पत्रों में सम्पादक और लेखक हम का प्रयोग करते हैं:—हम ने सुना है; हमारा दृढ़ मत है इत्यादि ।

(२) राजा महाराजा अपने लिए हम का प्रयोग करते हैं—हमारी आज्ञा है आदि ।

(३) किसी संस्था या सम्प्रदायके प्रधान या मन्त्री, सभा या संस्था की ओर से बोलते हुए भी हम का प्रयोग करते हैं । हमें डटकर इस बात का विरोध करना है ।

(४) अभिमान और क्रोध की अवस्था में भी प्राय: हम का प्रयोग किया जाता है । संसार में हमारे सामने कौन डट सकता है ?

मध्यमपुरुष, वक्ता जिस से बात-चीत करता है, वह मध्यमपुरुष कहलाता है । जैसे—तू, तुम । 'तू' एकवचन है । वक्ता जिस स्त्री या पुरुष से बात-चीत करता है उसके लिए 'तू' का प्रयोग होना चाहिए । पर आजकल 'तू' का प्रयोग बहुत ही कम स्थानों पर होता है । शिष्टाचार के कारण 'तू' के स्थान पर भी 'तुम' का

प्रयोग होने लगा है। नीचे लिखी अवस्थाओं में अब भी तू का प्रयोग होता है।

ईश्वर अथवा किसी महान् पुरुष के लिए। हे ईश्वर तू मेरी रक्षा कर। गांधी तू अहिंसा का अवतार है। (२) अनादर के लिए, तू बड़ा दुष्ट है। (३) अपने से छोटे के लिए या कभी कभी समान अवस्था वाले घनिष्ट मित्रों के साथ बातचीत करते समय। तू बड़ा नटखट है। तू हमेशा कोई न कोई बहाना बनाये रहता है।

तुम का प्रयोग भी अपने से छोटे के लिये अथवा अपने समान अवस्था वाले के लिए होता है।

अन्यपुरुष— जब किसी तीसरे व्यक्ति के सम्बन्ध में बात-चीत की जाय तो उसके लिए अन्यपुरुष का प्रयोग होता है। जैसे— वह, वे। 'वह' एकवचन है और एक के लिए ही प्रयुक्त होता है। 'वे' बहुवचन है तथा बहुतों के लिए प्रयुक्त होता है। कभी कभी आदरार्थ एक व्यक्ति के लिए भी बहुवचन का प्रयोग होता है और इस प्रकार एकवचन में 'वह' के स्थान पर 'वे' बहुवचन का प्रयोग होता है। इस प्रकार के वाक्यों में संज्ञा या सर्वनाम के अनुसार ही क्रिया के वचन में भी परिवर्तन हो जाता है। कभी कभी बहुवचन में भी 'वह' का प्रयोग किया जाता है, तथा उसके साथ क्रिया का बहुवचन काम में लाया जाता है। ऐसा करना व्याकरण की दृष्टि से गलत है क्योंकि संज्ञा या सर्वनाम के एकवचन के साथ क्रिया का एकवचन और बहुवचन के साथ क्रिया का बहुवचन ही काम में आना चाहिये।

निश्चयवाचक—वे विकारी शब्द हैं जिनमें सुनने वालों को कुछ निश्चित ज्ञान हो। जैसे—वह, वे, यह, ये, सो।

इनमें से वह और वे दूरस्थ वस्तु का संकेत करते हैं तथा यह और ये किसी निकटस्थ वस्तु का। 'सो' का प्रयोग बहुत कम होता

है और वह भी जो के साथ। जो और सो उसी प्रकार नित्य सम्बन्धित हैं जिस प्रकार संस्कृत में यत् और तत्। जो जागत है सो पावत है।

(३) अनिश्चयवाचक—सर्वनाम वे हैं जिनके द्वारा यह तो पता चले कि कोई वस्तु है तो अवश्य, पर किसी प्रकार का निश्चय न हो सके। जैसे—कोई, कुछ इत्यादि। कोई आदमी आ रहा है। दूध में कुछ पड़ा है। इन वाक्यों में कौन आ रहा है, क्या पड़ा है, यह पता नहीं चलता। कोई प्रायः चेतन वस्तुओं के लिये आता है और कुछ अचेतन वस्तुओं के लिये। पर कभी कभी कोई का प्रयोग अचेतन के लिए भी आता है और कुछ का चेतन के लिए। जैसे—रास्ते में कोई ईंट पड़ी होगी। कुछ छात्र पढ़ रहे हैं।

(४) सम्बन्धवाचक—जिसके द्वारा किसी संज्ञा या सर्वनाम से सम्बन्ध स्थापित हो वह सम्बन्धवाचक सर्वनाम है। जैसे—जो, जिसे, इसके, जिन्हें आदि। जो मेहनत करेगा वह अवश्य फल पावेगा। जो विद्यार्थी इस विद्यालय में पढ़ेगा वह अवश्य उत्तीर्ण होगा। जिन्हें ईश्वर की कृपा से धन मिला उन्हें उदार अवश्य होना चाहिये।

प्रश्नवाचक—जिस सर्वनाम का प्रयोग किसी वस्तु के विषय में प्रश्न करने के लिये हो, उसे प्रश्नवाचक सर्वनाम कहते हैं। जैसे—कौन आता है। इस वाक्य में कौन इस शब्द द्वारा प्रश्न किया जा रहा है अतः 'कौन' प्रश्नवाचक सर्वनाम हुआ।

प्रश्नवाचक सर्वनाम दो हैं—(१) कौन और (२) क्या। कौन चेतन प्राणियों के लिये और क्या अचेतन प्राणियों के लिये। जो अन्तर 'कोई' और 'कुछ' के बीच में (अनिश्चय वाचक सर्वनाम के प्रकरण में) दिखाया गया है। वही यहां समझना चाहिये।

सर्वनामों के रूपान्तर

संज्ञा के रूपान्तर की तरह सर्वनामों में भी लिङ्ग, वचन और

कारक द्वारा रूपान्तर होता है। कुछ सर्वनाम शब्दों के रूप आगे दिये जारहे हैं:—

मैं (उत्तमपुरुष)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	मैं, मैंने	हम, हमने
द्वितीया	कर्म	मुझे, मुझको	हमें, हम को
तृतीया	करण	मुझ से, मेरे द्वारा	हम से, हमारे द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	मुझे, मुझको, मेरे लिए	हमें, हमको, हमारे लिये
पंचमी	अपादान	मुझसे	हमसे
षष्ठी	सम्बन्ध	मेरा, मेरी, मेरे	हमारा, हमारी, हमारे
सप्तमी	अधिकरण	मुझ में, मुझ पर	हम में, हम पर

विशेष—सर्वनाम शब्दों का सम्बोधन नहीं होता।

तू (मध्यम पुरुष)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	तू, तूने	तुम, तुमने
द्वितीया	कर्म	तुझे, तुझको	तुम्हें, तुम को
तृतीया	करण	तुझसे, तेरे द्वारा	तुमसे, तुम्हारे द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	तुझे, तुझको, तेरे लिये	तुम्हें, तुमको, तुम्हारे लिये
पंचमी	अपादान	तुझसे	तुमसे
षष्ठी	सम्बन्ध	तेरा, तेरी, तेरे	तुम्हारा, तुम्हारी, तुम्हारे
सप्तमी	अधिकरण	तुझ में, पर	तुम में, पर

वह (अन्य पुरुष)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	वह, उसने	वे, उन्होंने
द्वितीया	कर्म	उसे, उसको	उन्हें, उनको

तृतीया	करण	उससे, के द्वारा	उनसे, के द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	उसे, उसको, उसके लिये	उन्हें, उनको, उनके लिये
पंचमी	अपादान	उससे	उनसे
षष्ठी	सम्बन्ध	उसका, के, की	उनका, के, की
सप्तमी	अधिकरण	उसमें, पर	उनमें, पर

यह (अन्य पुरुष)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	यह, इसने	ये, इन्होंने
द्वितीया	कर्म	इसे, इसको	इन्हें, इनको
तृतीया	करण	इस से, के द्वारा	इन से के द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	इसे, इसको, इसके लिए	इन्हें, इनको, इनके लिए
पंचमी	अपादान	इससे	इनसे
षष्ठी	सम्बन्ध	इसका, के, की	इनका, के, की
सप्तमी	अधिकरण	इसमें, पर	इनमें पर,

आप (आदरसूचक)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	आप, आपने	आप लोग, आप लोगों ने
द्वितीया	कर्म	आपको	आप लोगों को
तृतीया	करण	आपसे	आप लोगों से
चतुर्थी	सम्प्रदान	आपको, आपके लिए	आप लोगों को, आप लोगों के लिए
पंचमी	अपादान	आपसे	आप लोगों से
षष्ठी	सम्बन्ध	आपका, के, की	आप लोगों का, के, की
सप्तमी	अधिकरण	आपमें, पर	आप लोगोंमें, पर

काइ (अनिश्चयवाचक)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	कोई, किसीने	कुछ, किन्हींने
द्वितीया	कर्म	किसी को	किन्हीं को
तृतीया	करण	किसी से	किन्हीं से
चतुर्थी	सम्प्रदान	किसी के लिए	किन्हीं के लिए
पंचमी	अपादान	किसी से	किन्हीं से
षष्ठी	सम्बन्ध	किसी का, के, की	किन्हीं का, के, की
सप्तमी	अधिकरण	किसी में, पर	किन्हीं में, पर

जो (सम्बन्धवाचक)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	जो, जिसने	जो, जिन्हों ने
द्वितीया	कर्म	जिसे, जिस को	जिन्हें, जिनको
तृतीया	करण	जिससे	जिनसे
चतुर्थी	सम्प्रदान	जिसको जिसके लिए	जिसको, जिनके लिए
पंचमी	अपादान	जिस से	जिनसे
षष्ठी	सम्बन्ध	जिसका, के, की	जिनका, के, की
सप्तमी	अधिकरण	जिसमें, पर	जिनमें, पर

सो (सम्बन्धवाचक)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	सो, तिस ने	सो, तिन्होंने
द्वितीया	कर्म	तिसे, तिस को	तिन्हें, तिन को
तृतीया	करण	तिस से	तिन से
चतुर्थी	सम्प्रदान	तिसको, तिस के लिए	तिनको, तिन के लिए
पंचमी	अपादान	तिस से	तिन से

षष्ठी	सम्बन्ध	तिस का, के, की	तिन का, के, की
सप्तमी	अधिकरण	तिस में, पर	तिन में, पर

क्या (प्रश्नवाचक)

विभक्ति	कारक	एकवचन
प्रथमा	कर्त्ता	क्या
द्वितीया	कर्म	किस को
तृतीया	करण	किस से, काहे से, काहे के द्वारा
चतुर्थी	सम्प्रदान	किस को, काहे को, काहे के लिए
पंचमी	अपादान	किस से, काहे से
षष्ठी	सम्बन्ध	किसका, के, की काहे का, के, की
सप्तमी	अधिकरण	किसमें, पर, काहे में, पर

कौन (प्रश्नवाचक)

विभक्ति	कारक	एकवचन	बहुवचन
प्रथमा	कर्त्ता	कौन, किसने	कौन, किन्होंने
द्वितीया	कर्म	किस को, किसे	किनको, किन्हें
तृतीया	करण	किससे	किन से
चतुर्थी	सम्प्रदान	किस के लिए	किनके लिए
पञ्चमी	अपादान	किस से	किन से
षष्ठी	सम्बन्ध	किसका के, की	किनका, के, की
सप्तमी	अधिकरण	किसमें, पर	किनमें, पर

अभ्यास

१ सर्वनाम किसे कहते हैं और उसका क्या उपयोग है ?

२ सर्वनामों के नाम लिख कर उनका संक्षिप्त परिचय दो ?

३ 'कोई' और 'कुछ' में क्या अन्तर है ? उदाहरण देकर समझाओ।

४ 'यह' और 'वह' का प्रयोग कैसे स्थानों पर होता है ?

५ 'सर्वनामों के रूपान्तर' से तुम क्या समझते हो? निम्नलिखित सर्वनामों के रूप लिखोः—

मैं, तू, यह, वह और कौन।

नीचे लिखे वाक्यों में से सर्वनाम चुनो और यह बताओ कि ये किस शब्द के, किस कारक के और किस वचन के रूप हैं:—

१ क्या खाकर सो जाऊँ, कुछ रखा भी है?

२ जिन्होंने रोटी खाई, उन्हें ही मार पड़ी।

३ किसने खाना नहीं खाया?

४ किसी बालक को पकड़ लाओ।

५ जैसे बने इससे काम निकालो।

६ जो प्रातः उठेगा वह अवश्य मेधावी बनेगा।

७ वह तुम्हारा भाई नहीं है क्या?

षष्ठ—प्रकरण

विशेषण

जिस शब्द के द्वारा संज्ञा या सर्वनाम की किसी विशेषता का पता चले वह 'विशेषण' कहलाता है। जिस वस्तु की विशेषता बतलाई जाती है, वह 'विशेष्य' कहलाती है। विशेषण का कार्य विशेष्य को तत्सदृश अन्य वस्तुओं से पृथक करना है। जैसे—काला घोड़ा, सफ़ेद हाथी, पीला वस्त्र आदि उदाहरणों में रेखाङ्कित शब्द उन वस्तुओं को (घोड़ा आदि को) औरों से पृथक करते हैं।

नोट—एक प्रकार से यह भी कहा जा सकता है कि विशेषण विशेष्य के क्षेत्र को मर्यादित कर देता है। ऊपर के उदाहरण में 'घोड़ा' 'हाथी' और 'वस्त्रों' का बोध है परन्तु उनके साथ काला, सफेद और पीला आदि विशेषण लग जाने से केवल 'सफेद हाथी', 'काले घोड़े' और पीले वस्त्र का ही बोध होता है; न कि समस्त जाति का। परन्तु कभी कभी विशेषण विशेष्य के क्षेत्र को मर्यादित न कर, उस वस्तु के स्वाभाविक धर्म या गुण की अतिशयता का बोध मात्र कराता है। जैसे—गर्म आग और ठन्डी बर्फ। आग सदा गर्म ही रहती है और बर्फ सदा ठण्डी ही रहती है, फिर भी इन दोनों की अतिशयता दिखलाने के लिये यहाँ ऐसा प्रयोग हुआ है।

'सफेद हाथी', 'कई घोड़े', 'थोड़ा घी', 'यह वस्त्र' इन उदाहरणों में पहला विशेषण गुण का बोध कराने वाला, दूसरा संख्या बतलाने वाला, तीसरा परिमाण का परिचय देने वाला और चौथा निर्देश करने वाला है।

इस प्रकार से विशेषण के निम्नलिखित चार भेद हुये :—

(१) गुणवाचक (२) संख्यावाचक (३) परिमाणवाचक और (४) निर्देशक।

गुणवाचक

गुणवाचक विशेषण के निम्नलिखित भेद हैं :—

१ कालवाचक—नया, पुराना, ताजा, अगला, प्राचीन, नवीन आधुनिक आदि।

२ स्थानवाचक—ऊँचा, नीचा, शहरी, ग्रामीण आदि।

३ आकारवाचक—गोल, लम्बा, तिरछा, चौड़ा, संकरा, तिकोना।

४ अवस्थावाचक—रोगी, स्वस्थ, गीला, सूखा आदि।

५ गुणवाचक—बुरा, भला, अच्छा आदि।

६ रङ्गवाचक—नीला, पीला, काला, सफेद आदि।

इसके अतिरिक्त दिशावाचक और देशवाचक दो भेद और होते हैं—पूर्वी, पश्चिमी, दक्षिणी और उत्तरी; भारतीय जापानी और जर्मनी क्रमशः इनके उदाहरण हैं।

संख्यावाचक

संख्यावाचक विशेषण दो प्रकार के होते हैं :—

[१] निश्चित संख्यावाचक—दो, तीन, चार आदि [२] अनिश्चित संख्या वाचक—कई, सैकड़ों, सहस्रों आदि।

निश्चित संख्यावाचक के निम्नलिखित भेद होते हैं :—

१ गणना वाचक—जिससे गिनती का बोध हो। एक लड़का दो आम।

२ क्रम वाचक—जिससे संख्या के साथ क्रम का भी बोध हो। पहला दूसरा, तीसरा, चौथा आदि।

३ आवृत्ति वाचक—जिस से गुणन करने वाले का बोध हो। जैसे—तिगुना, चौगुना आदि।

४ समुदाय वाचक—जिस से गणना बोधक संख्या के समुदाय का ज्ञान हो। दोनों आदमी, तीनों स्त्रियां आदि।

५ प्रत्येक वाचक—जिस से कई वस्तुओं में से किसी विशेष का बोध होता हो—प्रत्येक नगर निवासी, हरएक स्त्री पुरुष आदि।

नोट १—यदि निश्चित-संख्यावाचक को अनिश्चित-संख्यावाचक में बदलना हो तो उसके पहले लगभग, करीब, अन्दाजन आदि लगा देना चाहिए। जैसे—लगभग पचास आदमी जा रहे थे, करीब दो हजार आदमी पकड़े गये, अन्दाजन पौने सात बजे होंगे।

२—यदि संख्या के बाद एक लगा दिया जाये तो भी निश्चित संख्या अनिश्चित संख्या में बदल जाती है। जैसे—सांठएक आदमी होंगे। कोई जोड़ देने से भी निश्चित संख्या अनिश्चित संख्या में परिणत हो जाती है। जैसे—कोई दस किताबें थीं।

३—अकारान्त संख्यावाचक विशेषण को यदि ओकारान्त बना दिया जाय, तो भी संख्या अनिश्चित हो जाती है। जैसे सहस्रों घोड़े नीलाम किए गए, पचासों आदमी खो गए आदि।

परिमाणवाचक

जिन शब्दों द्वारा किसी प्रकार को नाप-तोल प्रकट होती हो, उसे परिमाणवाचक विशेषण कहते हैं। जैसे—थोड़ा दूध, आधा सेर पानी।

संख्यावाचक विशेषण के समान परिमाणवाचक के भी दो भेद होते हैं। [१] निश्चित परिमाणवाचक और [२] अनिश्चित परिमाणवाचक। एक सेर दूध, कुछ पानी, थोड़ा दूध आदि क्रमशः उदाहरण हैं।

कभी कभी कुछ शब्द अनिश्चित संख्यावाचक और अनिश्चित परिमाणवाचक दोनों प्रयुक्त होते हैं। किस स्थान पर कौन-सा शब्द संख्यावाचक और किस स्थान पर परिमाणवाचक है, यह प्रकरण के अनुसार जाना जा सकता है।

निर्देशक

जिन से किसी प्रकार का संकेत या निर्देश प्रकट होता है, उन्हें निर्देशक विशेषण कहते हैं। जैसे—यह घोड़ा, वह हाथी। यहाँ 'यह' और 'वह' दोनों, घोड़े और हाथी की ओर संकेत करते हैं। इन में भी 'यह' समीपस्थ वस्तु की ओर संकेत करता है और 'वह' दूरस्थ वस्तु की ओर।

विशेषण में विकार

यद्यपि विशेषण के लिंग, बचन और कारक विशेष्य के लिंग, वचन और कारक के साथ परिवर्तित होने चाहिएँ, किन्तु कितने ही स्थानों पर यह परिवर्तन नहीं होता। साधारणतया यह परिवर्तन आकारान्त शब्दों में ही होता है। अकारान्त शब्द ज्यों के त्यों बने रहते हैं। इस प्रकार हम देख सकते हैं कि विशेषण में विकार के मुख्य कारण तीन हैं। (१) लिंग (२) बचन और (३) कारक।

लिंग—संस्कृत में लिंग के अनुसार सभी विशेषणों में परिवर्तन हो जाता है। जैसे—कृष्णः बालकः, कृष्ण बालिका। पर हिन्दी में इस नियम का पालन उसी रूप में न होकर स्वतन्त्र रूप से होता है। अकारान्त शब्द प्रायः इस परिवर्तन से अछूते रहते हैं:—लाल कपड़ा, लाल धोती आदि।

आकारान्त शब्दों में प्रायः लिंग के अनुसार परिवर्तन अवश्य हो जाता है। जैसे, *मोटा लड़का, मोटी लड़की आदि*।

वचन—वचन के कारण भी परिवर्तन प्रायः आकारान्त शब्दों में ही होता है—मीठा आम, मीठे आम आदि। अकारान्त शब्दों में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता। जैसे, *सुन्दर लड़का, लड़के आदि*।

कारक—कारक के कारण भी प्रायः आकारान्त विशेषणों में ही परिवर्तन होता है—मोटे लड़कों को भगाओ, मीठे आम से रस निकालो।

नोट—ऊपर के उदाहरणों में हमने देखा कि अकारान्त शब्दों में परिवर्तन नहीं होता और इस परिवर्तन का जो कुछ भी प्रभाव होता है वह भी केवल आकारान्त शब्दों में ही होता है। जिन थोड़े से शब्दों में यह परिवर्तन होता भी है वहाँ धीरे धीरे इसके न होने के आसार

स्पष्ट दीख पड़ रहे हैं। हां, कुछ हलन्त शब्द ऐसे अवश्य हैं, जिनके रूपों में परिवर्तन अवश्य होता है—विद्वान् से विदुषी, श्रीमान् से श्रीमती; महान् से महती, सौभाग्यवान् से सौभाग्यवती।

कभी कभी वाक्य में संज्ञा लुप्त रहती है और विशेषण ही संज्ञा के स्थान में प्रयुक्त होता है। ऐसे स्थानों में विशेषणों में भी उसी प्रकार परिवर्तन होते हैं, जिस प्रकार संज्ञा में। जैसे—संसार में विद्वान् और मूर्ख दोनों प्रकार के मनुष्य होते हैं, विद्वानों का आदर होता है और मूर्खों का निरादर। यहां 'विद्वान्' और 'मूर्ख' विशेषण मनुष्य संज्ञा के स्थान पर प्रयुक्त हुए हैं और उस में उसी प्रकार का विकार हुआ है जैसा संज्ञा में हुआ करता है।

तुलना

एक से अधिक पदार्थों में गुण दोष दिखाकर उन्हें श्रेणियों में विभाजित करना तुलना करना कहलाता है। तुलना करने के लिये अधिक, ज्यादा, बढ़कर, अपेक्षा आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता और इस प्रकार विशेषणों के रूप में कोई अन्तर नहीं आने पाता। जैसे—राम कृष्ण की अपेक्षा अधिक बलवान है। चम्पा कमला से ज्यादा चतुर है। पर कभी कभी संस्कृत के अनुकरण पर हिन्दी में भी विशेषणों के रूपों में अन्तर हो जाता है।

जिस प्रकार अंग्रेजी में तुलना के लिये तीन श्रेणियाँ व्यवहृत होती हैं, उसी प्रकार हिन्दी में भी तीन श्रेणियों का प्रयोग किया जाता है—(१) मूलावस्था, (२) उत्तरावस्था (३) उत्तमावस्था।

मूलावस्था—इसमें किसी के साथ तुलना न करके साधारण कथन मात्र होता है—बलदेव चतुर विद्यार्थी है।

उत्तरावस्था—इसमें दो वस्तुओं या दो व्यक्तियों की तुलना रहती है और तुलनात्मक भाव को व्यक्त करने के लिये अपेक्षा आदि

शब्दों के साथ साथ 'तर' प्रत्यय का प्रयोग किया जाता है—प्रियतर, कठोरतर, दृढ़तर।

उत्तमावस्था—में दो से अधिक वस्तुओं या व्यक्तियों की तुलना रहती है और सब से सब में सब की अपेक्षा आदि शब्दों का प्रयोग किया जाता है—राम सबसे अधिक बलवान है, उन सब व्यक्तियों में मोहन अधिक चतुर है। इसके साथ साथ तुलनात्मक भाव व्यक्त करने के लिये 'तम' प्रत्यय का भी प्रयोग किया जाता है—सुन्दरतम, दृढ़तम, कठोरतम आदि।

अभ्यास

१ विशेषण किसे कहते हैं और उसकी क्या उपयोगिता है ?

२ विशेषण के भेदों के नाम गिना कर संख्यावाचक और परिमाणवाचक में क्या अन्तर है ? उदाहरण द्वारा स्पष्ट कीजिये ?

३ निश्चित संख्यावाचक को अनिश्चित संख्यावाचक किस प्रकार बनाया जा सकता है ?

४ क्या हिन्दी में लिङ्ग के अनुसार विशेषण में परिवर्तन होना अनिवार्य है ? यदि हाँ तो, किन किन स्थानों पर ?

५ हिन्दी में तुलनात्मक-भाव व्यक्त करने के लिये किस पद्धति का आश्रय लिया जाता है ?

सप्तम प्रकरण

क्रिया

जिस शब्द से किसी अर्थ का होना या करना पाया जाय उसे क्रिया कहते हैं। जैसे—'राम पानी पीता है' 'रमेश सोता है' यहाँ कर्ता रूप राम और रमेश 'पीने' और 'सोने' रूपी व्यापार के होने का पता लगता है। क्रियायें दो प्रकार की होती हैं—(१) सकर्मक और (२) अकर्मक।

(१) जिन क्रियाओं में व्यापार का फल कर्त्ता के अतिरिक्त किसी दूसरी वस्तु पर भी पड़ता हो उन्हे सकर्मक कहते हैं। जैसे ऊपर दिये 'राम पानी पीता है' इस उदाहरण में राम के पानी पीने रूप व्यापार का फल राम के अतिरिक्त कर्म रूप पानी पर भी पड़ता है, क्योंकि राम की पीने की क्रिया में पानी भी तो समाप्त होता है।

(२) जिन क्रियाओं में व्यापार का फल कर्त्ता पर पड़ता है, उन्हें अकर्मक कहते हैं। जैसे—'रमेश सोता है' इस उदाहरण में 'सोना' क्रिया का फल रमेश पर ही पड़ता है किसी अन्य वस्तु पर नहीं। अतः यह अकर्मक क्रिया है।

कभी कभी वक्ता की विवक्षा के (कहने की इच्छा) अनुसार सकर्मक क्रिया अकर्मक बन जाती है और अकर्मक सकर्मक। जैसे—'कमला देखती है' इस वाक्य में क्रिया द्वारा व्यापार मात्र प्रकट करना ही उद्देश्य है। क्या देखती है, इस ओर कोई लक्ष्य नहीं। इस स्थान पर 'देखना' यह सकर्मक क्रिया भी अकर्मक की तरह प्रयुक्त हुई है।

इसके विपरीत कभी कभी अकर्मक क्रियाओं के व्यापार को एक प्रकार का कर्म मान लिया जाता है और फिर उस अकर्मक क्रिया के

कर्म की विवक्षा हो जाने से उसका प्रयोग सकर्मक क्रिया के समान किया जाता है । जैसे—'मोहन खूब चालें चलता है' 'राम खूब लड़ाई लड़ता है' । यहां पर क्रिया का व्यापार ही कर्म बन गया है ।

ऊपर के उदाहरणों से यह बात स्पष्ट हो गई है कि कुछ क्रियायें तो सकर्मक होती हैं और कुछ अकर्मक । किस स्थान पर एक क्रिया सकर्मक रहती है और किस स्थान पर अकर्मक, इसका ज्ञान बहुत कुछ प्रयोग द्वारा हो जाता है । इसी को स्पष्ट करने के लिए नीचे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं ।

	सकर्मक	अकर्मक
१	मैं घड़ा भर रहा हूं ।	घड़ा भर चुका है ।
२	मोहन सिर खुजलाता है ।	मोहन का सिर खुजलाता है ।
३	उसे लज्जित न करो ।	वह लजाता है ।
४	मोहन पानी गिराता है ।	पानी गिरता है ।

सकर्मक क्रियाओं के भेद

सकर्मक क्रियाएं दो प्रकार की होती हैं—(१) एककर्मक और (२) द्विकर्मक ।

एककर्मक वे क्रियाएं हैं जिन का एक ही कर्म होता है । जैसे—'मोहन पुस्तक पढ़ता है' 'सोहन दूध पीता है' वह बाजार जाता है' यहाँ इन तीनों वाक्यों में 'पुस्तक' 'दूध' और 'बाजार' एकएक कर्म हैं, अतः इन्हें एक कर्मवाली सकर्मक क्रिया कहा जा सकता है ।

द्विकर्मक – वे क्रियाएं हैं जिन का व्यापार और फल दो कर्मों पर पड़ता है । जैसे—'रमेश ने मोहन को आम दिया' 'रामने भिक्षु को अन्न दिया' प्रथम वाक्य में 'दिया' क्रिया का व्यापार और फल दोनों 'मोहन' और 'आम' पर पड़ता है तथा द्वितीय वाक्य में 'भिक्षुक' और "अन्न' पर ।

द्विकर्मक क्रिया में एक कर्म मुख्य और दूसरा गौण होता है ऐसा नहीं कि दोनों ही मुख्य हों अथवा दोनों ही गौण। गौण कर्म प्रायः पहले आता है और प्राणीवाचक होता है, दूसरा कर्म बाद में आता है और प्रायः अप्राणी वाचक होता है। ऊपर दिए हुए उदाहरण इस बात को स्पष्ट कर देते हैं।

अपूर्ण क्रियाएं

कुछ अकर्मक क्रियाएं और कहीं कहीं कुछ सकर्मक क्रियाएं भी ऐसी होती हैं जिन का पूरा आशय केवल कर्त्ता से स्पष्ट नहीं होता है। उनके अर्थ को स्पष्ट करने के लिए किसी अन्य शब्द की आवश्यकता पड़ती है। ऐसी क्रियाएं अपूर्ण क्रियाएं कहलाती हैं। जैसे—'होना' 'रहना' 'ठहरना' आदि। 'यह (चतुर) है।' 'वह (रुग्ण) रहता है', राम (चतुर) बनता है'। इन वाक्यों में कोष्ठ में दिए शब्दों के बिना अर्थ स्पष्टतया प्रतीत नहीं होता है। इसी प्रकार 'मोहन ने आज कमल को खूब (मूर्ख) बनाया' राम विश्वामित्र को (गुरु) मानते थे' आदि वाक्यों में सकर्मक क्रियाओं के रहते हुए भी कोष्ठ में दिये शब्दों के बिना पूरा अर्थ स्पष्ट नहीं होता है। क्रियाओं के अर्थ को पूर्ण करने के लिये जिन शब्दों के जोड़ने की आवश्यकता पड़ती है उन्हें 'पूरक' कहते हैं।

प्रेरणार्थक क्रियाएं

जहाँ कर्ता किसी कार्य को स्वयं न करके किसी दूसरे को करने के लिये प्रेरित करता है वे प्रेरणार्थक क्रियायें कहलाती हैं। जैसे—'जमनसिंह सतीश से पत्र लिखाता है'। इस वाक्य में पत्र लिखने का कार्य जमनसिंह स्वयं न करके सतीश से कराता है। प्रेरणा करने वाले को 'प्रेरक कर्त्ता' तथा जिसे प्रेरणा की जाती है उसे 'प्रेरित कर्त्ता'

कहते हैं। ऊपर के वाक्य में जमनसिंह प्रेरक कर्ता है और सतीश प्रेरित कर्त्ता है।

होना, रुकना, पाना, आना, जाना प्रभृति क्रियाओं को छोड़ कर शेष क्रियाओं से प्राय: दो दो प्रकार की प्रेरणार्थक क्रियायें बनती हैं। मूल में जो क्रियायें अकर्मक होती हैं उनसे क्रमशः सकर्मक एवं प्रेरणार्थक क्रियायें बनती हैं तथा जो यायें सकर्मक होती हैं उनसे क्रमश: द्विकर्मक एवं प्रेरणार्थक। जैसे—'घर गिरता है' (अकर्मक) 'मोहन घर गिराता है' (सकर्मक) 'मोहन बुद्धू से घर गिरवाता है' (प्रेरणार्थक) है।

प्रेरणार्थक क्रिया बनाने के प्रकार

(१) दो अक्षरवाली मूल धातु के अन्त में क्रमशः 'आ' लगाने से पहली प्रेरणार्थक क्रियाएं और 'वा' लगाने से दूसरी प्रेरणार्थक क्रियाएं बनती हैं। 'ऐ' और 'औ' को छोड़कर पहला दीर्घ स्वर भी प्राय: ह्रस्व हो जाता है—

मूल धातु	प्रथम प्रेरणार्थक	द्वितीय प्रेरणार्थक
चलना	चलाना	चलवाना
उठना	उठाना	उठवाना
उड़ना	उड़ाना	उड़वाना
जीतना	जिताना	जितवाना
सुनना	सुनाना	सुनवाना
फैलना	फैलाना	फैलवाना
गिरना	गिराना	गिरवाना
बचना	बचाना	बचवाना
रखना	रखाना	रखवाना
फिरना	फिराना	फिरवाना
चीरना	चिराना	चिरवाना

तोड़ना	तुड़ाना	तुड़वाना

२—कुछ एक अक्षर वाली मूल धातुओं के एकाक्षर के बाद 'ला' लगा देने से पहली प्रेरणार्थक और 'लवा' लगा देने से दूसरी प्रेरणार्थक क्रियायें बनती हैं।

देना	दिलाना	दिलवाना
खाना	खिलाना	खिलवाना
रोना	रुलाना (रुवाना)	रुलवाना
धोना	धुलाना (धुवाना)	धुलवाना
सीना	सिलाना (सिवाना)	सिलवाना
जीना	जिलाना	जिलवाना
सोना	सुलाना	सुलवाना

३—कुछ एक अक्षर वाली मूल धातुओं से एक ही प्रेरणार्थक क्रियायें बनती हैं :—

गाना	गवाना
चूना	चुवाना
खेना	खिवाना

४—यदि मूल धातु के प्रथम व्यंजन में 'ए' अथवा 'ओ' स्वर हो 'ए' को 'इ' और 'ओ' को 'उ' कर देते हैं :—

बोलना	बुलाना	बुलवाना
खोलना	खुलाना	खुलवाना
मोड़ना	मुड़ाना	मुड़वाना
ओटना	उटाना	उटवाना
जोतना	जुताना	जुतवाना
खोलना	खुलाना	खुलवाना
रोकना	रुकाना	रुकवाना

देखना	दिखाना	दिखवाना

४—कुछ धातुओं से अनियमित रूप से प्रेरणार्थक क्रियाएं बनती हैं :—

चुभना	चुभोना	चुभवाना
भीगना	भिगोना	भिगवाना
टूटना	तोड़ना	तुड़वाना
छूटना	छुड़ाना	छुड़वाना
खाना	खिलाना	खिलवाना
बिकना	बेचना	बिकवाना

अकर्मक से सकर्मक बनाने के प्रकार

कुछ प्रकार तो प्रेरणार्थक क्रियाओं के विवेचन में आ चुके हैं और शेष इस प्रकार से हैं :—

१—दो अक्षर वाली धातुओं के प्रथम स्वर को एवं तीन अक्षर वाली धातुओं के द्वितीय स्वर को दीर्घ कर देने से अकर्मक धातु बन जाती हैं :—

लुटना	लूटना
मरना	मारना
गड़ना	गाड़ना
पिसना	पीसना
निकलना	निकालना

२—कभी कभी 'इ' को 'ए' और 'उ' का 'ओ' हो जाता है:—दिखना से देखना, खुलना से खोलना।

३—कुछ धातुओं के अन्तिम 'ट' को 'ड़' होकर पहले 'अ' को 'आ' और 'उ' अथवा 'ऊ' का 'ओ' हो जाता है—फटना से फाड़ना; छूटना से छोड़ना।

४—कुछ अनियमित रूप भी मिलते हैं:—सिलना से सीना, टूटना से तोड़ना, रहना से रखना।

संयुक्त क्रियायें

दो अथवा तीन धातुओं के मेल से जो क्रिया बनती है उसे संयुक्त क्रिया कहते हैं। 'मैं पुस्तक पढ़ चुका हूं' 'तुम पानी पी सकते हो' इत्यादि वाक्यों में 'पढ़ चुका हूं' और 'पी सकते हो' संयुक्त क्रियाएं हैं जो पढ़ना + चुकना और पीना + सकना धातुओं से बनी है। संयुक्त क्रियाओं में पहली क्रिया प्रमुख होती है एवं दूसरी प्रथम क्रिया के ही अर्थ में कुछ विशेषता उत्पन्न कर देती है।

संयुक्त क्रियायें बनाने की रीति

(१) क्रिया के सामान्य रूप के 'ना' को 'न' करके आगे 'लगना' और 'देना' या 'पाना' क्रिया लगाने से क्रमशः आरम्भ-बोधक और अवकाश-बोधक क्रियाएँ बन जाती हैं। जैसे—'पानी बरसने लगा' 'उसे जाने दो' 'वह जाने नहीं पायेगा।'

(२) धातु के आगे 'चुकना' या 'सकता' क्रिया जोड़ने से क्रमशः समाप्ति-बोधक और शक्ति-बोधक संयुक्त क्रियाएँ बनती हैं। जैसे—'राम भोजन कर चुका' 'वह खेल सकता है।'

(३) क्रिया के सामान्य रूप के आगे 'पड़ना' या 'होना' क्रिया जोड़ने से विवशता प्रकट होती है। जैसे—'तुम्हें दूध पीना पड़ेगा' 'उसे वहाँ जाना ही होगा।'

(४) क्रिया के 'ना' को 'या' करके आगे 'करना' क्रिया जोड़ने से नित्यता या सातत्य-बोधक संयुक्त क्रिया बनती हैं। जैसे—'सतीश उद्यान में घूमने आया करता है।'

(५) क्रिया के सामान्य रूप के आगे 'चाहना' क्रिया जोड़ने से

इच्छा-बोधक संयुक्त क्रिया बन जाती है। जैसे—'मैं आज लखनऊ जाना चाहता हूं।'

(६) सामान्य भूत कालिक क्रिया के अन्तिम स्वर को 'ए' में बदल कर आगे 'देना' या 'डालना' क्रिया लगाने से तत्काल-बोधक संयुक्त क्रिया बनती है। जैसे—'मैं राम को अभी भेजे देता हूँ' 'तुम यह काम अभी कर डालो।' 'देना' जोड़ देने से अनुमति-बोधक क्रिया भी बन जाती है—'उसे जाने दीजिए।'

नोट—ध्यान पूर्वक देखने से प्रतीत होता है कि समस्त संयुक्त क्रियायें मुख्य क्रियाओं के अनन्तर कुछ जोड़ देने से बनती हैं। मुख्य क्रियाओं के बाद में कुछ ऐसी क्रियायें लगाई जाती हैं जिनके पहले मुख्य क्रियाओं के स्वरूप में सामान्य-सा परिवर्तन कर दिया जाता है।

नामधातु क्रियाएँ

क्रिया को छोड़ कर इतर शब्दों में प्रत्यय लगाने से जो धातु बनती हैं या जो नाम (संज्ञा) ही धातु के समान प्रयुक्त होते हैं, उन्हें नामधातु कहते हैं। नामधातुओं से जो क्रियायें बनती हैं उन्हें नामधातु क्रियाएं कहते हैं।

जो नामधातु प्रत्यय लगाने से बनते हैं उनमें प्रायः 'आ' 'या' अथवा 'ला' प्रत्यय लगाए जाते हैं। उनका पहला स्वर यदि दीर्घ हो तो ह्रस्व होता है। 'या' आगे होने पर शब्द के अन्तिम स्वर को 'इ' हो जाता है।

शब्द	प्रत्यय	नामधातु	क्रिया का सामान्य रूप
लाज	आ	लजा	लजाना
गर्म	आ	गर्मा	गर्माना

हाथ	या	हथिया	हथियाना
बात	या	बतिया	बतियाना
झूठ	ला	झुठला	झुठलाना

कई नाम ही धातु के समान प्रयुक्त होते हैं:—

रंग	रंगना	गुजर	गुजरना
गाँठ	गाँठना	दुहरा	दुहराना

कुछ शब्द पदार्थों की ध्वनि के अनुसार अनुकरणात्मक नामधातु बन जाते हैं:—

शब्द	नामधातु
भिनभिन	भिनभिनाना
थरथर	थरथराना
चेंचें	चिचियाना
टें टें	टिटयाना
तमतम	तमतमाना
खटखट	खटखटाना
टिमटिम	टिमटिमाना
झरझर	झरझराना

अभ्यास

१ क्रिया की परिभाषा क्या है और उसके कितने भेद होते हैं ?

२ अकर्मक क्रिया और सकर्मक क्रिया में क्या अन्तर है ? उदाहरण देकर समझाओ।

३ पूरक-क्रिया किसे कहते हैं ? द्विकर्मक क्रिया से क्या अभिप्राय है ?

४ कर्म कितने प्रकार का होता है ? अकर्मक धातुओं से सकर्मक धातुएं कैसे बनती हैं ?

५ प्रेरणार्थक क्रियाएं कैसे बनती हैं ? मुख्य नियमों का निर्देश करो।

६ नामधातु क्रियाएं किन्हें कहते हैं और वे किस प्रकार बनाई जाती है ?

क्रियाओं के रूपान्तर

क्रिया में वाच्य, काल, प्रकार, लिंग, वचन तथा पुरुष के कारण विकार होता है।

वाच्य

क्रिया के जिस रूप से यह जाना जाय कि वाक्य में क्रिया द्वारा किये गये विधान का प्रधान विषय कर्त्ता, कर्म या भाव है उसे वाच्य कहते हैं। जैसे, *मैंने, खाना खाया, खाना खाया जाता है, वहाँ खाना नहीं खाया जाता।* इन तीन उदाहरणों में पहले उदाहरण में 'मैंने' कर्त्ता पर बल है, दूसरे उदाहरण में 'खाना' कर्म पर बल है और तीसरे उदाहरण में 'भाव' पर ही वाक्य का जोर है। इस प्रकार हमने देखा कि यद्यपि तीनों वाक्यों में एक ही बात कही गयी है। पर कहने का ढंग अलग अलग होने से पृथक् पृथक् शब्दों की प्रधानता स्पष्ट दीख पड़ती है। इस प्रकार कहने के ढंग के पृथक् होने से वाच्य तीन प्रकार का है।—

(१) कर्तृवाच्य (२) कर्मवाच्य (३) भाववाच्य

(१) जिस वाक्यमें कर्त्ताकी प्रधानता हो वह कर्तृवाच्य कहलाता है। कर्तृवाच्य में क्रिया के लिंग और वचन कर्त्ता के अनुसार होते हैं। जैसे,—*कान्ता आई, राम गया, हमने पाठ पढा।*

कर्तृवाच्य सकर्मक और अकर्मक दोनों प्रकार की क्रियाओं में रहता है और इस प्रकार इस वाक्य में कर्त्ता की उपस्थिति अनिवार्य है।

(२) जिस वाक्य में कर्म की प्रधानता हो वह कर्मवाच्य कहलाता है। कर्मवाच्य में कर्म की प्रधानता होने से क्रिया के लिंग और वचन भी कर्म के अनुसार ही होते हैं। जैसे, *मुझ से रोटी खाई गई, राम से पुस्तक पढ़ी गई, उस से अपना काम पूरा नहीं हुआ।*

कर्मवाच्य केवल सकर्मक क्रियाओं में ही होता है और इस प्रकार के वाक्य में कर्म की विद्यमानता अनिवार्य है।

(३) जिस वाक्य में कर्म की समस्त शक्ति भाव पर ही केन्द्रित रहती है वह भाववाच्य कहलाता है। जैसे, *चला नहीं जाता, खाया नहीं जाता, भागा नहीं जाता।* इस प्रकार के वाक्य में कर्ता या कर्म की आवश्यकता नहीं रहती। जब कभी कर्त्ता का प्रयोग होता है, वह करण कारक के एक वचन के रूप में ही होता है। हमें यह भी स्मरण रखना चाहिए कि भाववाच्य का प्रयोग सदैव अकर्मक क्रियाओं में होता है।

साधारणतया बोल-चाल या लिखने में कर्तृवाच्य का ही प्रयोग किया जाता है। कर्मवाच्य का प्रयोग केवल ऐसे स्थानों पर ही किया जाता है जहाँ या तो कर्त्ता अज्ञात है अथवा उसे जान बूझकर ही छिपाया जा रहा है या वह किसी गुण विशेष की महत्ता स्पष्ट करता हो। इसी प्रकार भाववाच्य का भी प्रयोग ऐसे ही स्थानों पर होता है जहाँ भाव पर बल देना अभीष्ट होता है। सब पापी शीघ्र ही मारे जायेंगे और पापों का नाश होने वाला है—कर्मवाच्य और भाववाच्य के उदाहरण हैं।

कर्मवाच्य और भाववाच्य दोनों प्रकार के उदाहरणों में संयुक्त क्रिया का प्रयोग होता है, इस प्रकार की क्रियाओं में जाना क्रिया मुख्य है।

काल

काल के तीन भेद होते हैः—(१) वर्तमान, (२) भूत और (३) भविष्यत्।

(१) वर्तमान काल—जिस समय बात कही जारही है यदि उस समय क्रिया का व्यापार हो रहा हो तो वह काल वर्तमान कहलायेगा। जैसे, *मैं खाना खा रहा हूं*। जिस समय खाना खाया जा रहा है, उसी समय यह बात कही जा रही है। यहाँ क्रिया के जारी रहने से वर्तमान काल हुआ।

(२) भूतकाल—जिस समय बात कही जा रही है यदि उस समय से पहले क्रिया का व्यापार समाप्त हो चुका है तो वह भूतकाल कहलायेगा। जैसे, *जब मैं वहाँ पहुंचा तो राम कहीं जा चुका था*, यहाँ मैं कर्त्ता के पहुँचने से पहले ही राम का जाना रूप क्रिया हो चुकी थी अतः यह भूतकाल हुआ।

(३) भविष्यत्काल—भविष्य का अर्थ है आगे आने वाला या होने वाला। जो क्रिया इस समय के बाद होने वाली है, उस क्रिया का काल भविष्यत् काल होगा। जैसे, *मैं खेलूंगा*, इस उदाहरण में खेलना रूपी क्रिया आने वाले समय में होगी।

भूतकाल के छै भेद हैंः—(१) सामान्यभूत (२) आसन्नभूत (३) पूर्णभूत (४) अपूर्णभूत (५) संदिग्धभूत (६) हेतुहेतुमद्भूत।

सामान्यभूत—यह सामान्यतया भूत का ज्ञान कराता है। इससे यह पता नहीं चलता कि क्रिया अभी समाप्त हुई है अथवा उसे समाप्त हुए कितना समय बीत चुका है। जैसे, *मदनमोहन ने, पुस्तक चुराई*, इस उदाहरण मे यह पता नहीं चलता कि मदन ने पुस्तक अभी चुराई है अथवा पुस्तक चुराते हुये उसे बहुत समय बीत चुका। सामान्यभूत प्रायः निम्नलिखित प्रकार से बनता है।

(१) यदि धातु के अन्त में ह्रस्व अ हो तो एकवचन में उसे दीर्घ कर देना चाहिये और बहुवचन में ए। जैसे, *पढ़ना*, *लिखना*, *चलना*, *फिरना*, *उठना*, *बैठना*, *से क्रमशः पढ़ा*, *लिखा*, *चला*, *फिरा*, *उठा*, *बैठा*, *आदि* रूप बनते हैं। बहुवचन में पढ़े, लिखे, चले, फिरे, उठे, बैठे रूप बनेंगे।

(२) यदि धातु के अन्त में आ आता हो तो अन्त में या जोड़ देते हैं। जैसे, *रोना*, *खाना*, *पीना*, *समाना*, *से क्रमशः रोया*, *खाया*, *पीया और समाया* रूप बनते हैं। बहुवचन में या के स्थान पर ये का प्रयोग होगा—रोये, खाये, पीये, समायें।

(३) यदि धातु के अन्त में ई या ए हों तो उसके स्थान में इया लग जाता है। जैसे, *पीना*, *लेना*, *देना से क्रमशः पिया*, *लिया और दिया* रूप बनते हैं।

(४) यदि धातु के अन्त में ऊ हो तो उसे ह्रस्व उकार करके अन्त में आ कर देते हैं। जैसे, *छू से छुआ*।

(५) स्त्रीलिङ्ग एकवचन में आ के स्थान में ई और स्त्रीलिङ्ग बहुवचन में ए के स्थान में ईं कर देते हैं। जैसे, *मैं गयी*, *हम गयीं*।

(६) कुछ रूप ऐसे भी बनते हैं जिनमें किसी प्रकार का नियम नहीं बनाया जा सकता। जैसे, *जाना से गया*, *करना से किया*।

आसन्नभूत—क्रिया का वह रूप है जिससे यह पता चले कि क्रिया को समाप्त हुये अभी बहुत काल नहीं हुआ। जैसे, *मैंने खाना खाया है*, अर्थात् मुझे खाना खाये हुये बहुत समय नहीं बीता।

सामान्यभूत में निम्नलिखित विभक्तियाँ लगाने से आसन्नभूत बनता है।

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	हूं	हैं
मध्यम पुरुष	है	हो
अन्य पुरुष	है	हैं

उदाहरण — वह गया है, वे गये हैं, तू गया है, तुम गये हो, मैं गया हूं, हम गये हैं।

पूर्णभूत—क्रिया का वह रूप है जिससे प्रतीत होता है कि क्रिया को समाप्त हुये कुछ समय बीत चुका है। जैसे, *वह लखनऊ गया था।* (२) *पं० जवाहरलाल नेहरू मुरादाबाद पधारें थे।*

सामान्यभूत में निम्नलिखित विभक्तियां बनाने से पूर्णभूत बनता है।

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	था, थी	थे, थीं
मध्यम पुरुष	था, थी	थे, थीं
अन्य पुरुष	था, थीं	थे, थीं

वह गया था, वह गयी थी, वे गये थे, वे गयी थीं, तू गया था, तू गयी थी, तुम गये थे, तुम गयी थीं, मैं गयी थी, हम गये थे, हम गयी थीं।

अपूर्णभूत—क्रिया का वह रूप है जिससे यह तो पता चले कि क्रिया का व्यापार भूत काल में हुआ था परन्तु जिस समय की ओर संकेत है उस समय तक वह व्यापार समाप्त नहीं हुआ था — जब मैं वहाँ गया तो वह गा रही थी। इस उपर्युक्त वाक्य में 'जाना' रूपी क्रिया के समय तक गाना समाप्त नहीं हुआ था।

सामान्यभूत निम्नलिखित परिवर्तन करने से अपूर्णभूत बन जाता है।

	एकवचन	बहुवचन
पुलिङ्ग	ता, था, रहा था	ते, थे, रहे थे
स्त्रीलिंग	ती, थी, रही थी	ती थीं, रही थीं

(४) संदिग्ध भूत—क्रिया का वह रूप है जिससे भूत का बोध तो होता हो परन्तु क्रिया के होने के विषय में संदेह रह जाता हो—शायद वह आया होगा। यहाँ आने के विषय में किसी प्रकार का निश्चय नहीं होता। सामान्यभूत में निम्नलिखित विभक्तियाँ लगाने से संदिग्ध भूत हो जाता है।

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	हूंगा, हूंगी	होंगे, होंगी
मध्यम पुरुष	होगा, होगी	होंगे, होंगी
अन्य पुरुष	होगा, होगी	होंगे, होंगी

हेतुहेतुमद्‌भूत—क्रिया का वह रूप है जिसमें बाद में होने वाली क्रिया का हेतु पहली क्रिया हो। यदि वृष्टि अच्छी होती तो अनाज अच्छा होता, यदि लड़का परिश्रम करता तो उत्तीर्ण अवश्य होता।

वर्तमानकाल

(१) सामान्य वर्तमान (२) संदिग्ध वर्तमान (३) अपूर्ण वर्तमान।

सामान्य वर्तमान—क्रिया का वह व्यापार है जिससे क्रिया के व्यापार का वर्तमान समय में होना पाया जाय। जैसे—*वह आता है, वह पुस्तक पढ़ता है* इत्यादि।

इसकी विभक्तियाँ इस प्रकार हैं :—

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	हूं	हैं
मध्यम पुरुष	है	हो
अन्य पुरुष	है	हैं

संदिग्ध वर्तमान—क्रिया का वह रूप है जिससे क्रिया के व्यापार के वर्तमान काल में होने में सन्देह प्रकट किया जाय। जैसे—*वे लिखते होंगे, वह जाता होगा, सम्भव है मैं लिखता रहूं।*

अपूर्ण वर्तमान—क्रिया का वह रूप है जिससे यह पता चले कि क्रिया का व्यापार तो हो रहा है परन्तु अभी समाप्त नहीं हुआ है। जैसे—*मै अभी खाना खा रहा हूँ, वह पत्र लिख रहा है।* इन उदाहरणों में खाना क्रिया और लिखना क्रिया अभी समाप्त नहीं हुई हैं।

धातु में निम्नलिखित विभक्तियाँ लगाने से अपूर्ण वर्तमान बनता है

	एकवचन	वहुवचन
उत्तम पुरुष	रहा हूं, रही हूं	रहे हैं, रही हैं
मध्यम पुरुष	रहा है, रही है	रहे हो, रही हो
अन्य पुरुष	रहा है, रही है	रहे हैं, रही हैं

भविष्यत् काल

इसके दो भेद हैं—(१) सामान्य भविष्यत् (२) सम्भाव्य भविष्यत्।

सामान्य भविष्यत्—क्रिया का वह रूप है जिसके द्वारा आने वाले समय में किसी क्रिया के होने का पता चले। जैसे—*वह जायगा, मैं जाऊंगा।*

इसमें निम्नलिखित विभक्तियाँ लगती हैं।

	एकवचन	बहुवचन
उत्तम पुरुष	गा, गी	गे, गीं
मध्यम पुरुष	गा, गी	गे, गीं
अन्य पुरुष	गा, गी	गे, गीं

सम्भाव्य भविष्यत्—क्रिया का वह रूप है जिसके द्वारा आने वाले समय में क्रिया के होने की सम्भावना पाई जाय। जैसे—*यदि मैं धोखा दूं तो मुझे मारना*, अर्थात् *यदि मुझ से धोखे की सम्भावना हो तो मुझे मार देना*। इसी प्रकार *वह गया तो काम हो जायेगा*। *यदि तबीयत ठीक रही तो मैं अवश्य आऊँगा*।

प्रकार

क्रिया के जिस रूप से उसके विधान, रीति, आज्ञा आदि का बोध होता है, उसे क्रिया का प्रकार कहते हैं। हिन्दी में क्रियाओं के मुख्य तीन प्रकार होते हैं— (१) निश्चयार्थ (२) सम्भावनार्थ और (३) प्रवर्तनार्थ या विध्यर्थ।

(१) निश्चयार्थ—क्रिया के जिस रूप से किसी विधान का निश्चय जाना जाय, उसे निश्चयार्थ प्रकार कहते हैं। जैसे—*महेश काम करता है, विपिन सो रहा है, प्रकाश पढ़ता था, नरेन्द्र लिख रहा था, सतीश काम करेगा*। इन सब वाक्यों में क्रिया के विधान का निश्चय है। 'निश्चयार्थ प्रकार' को 'साधारण प्रकार' भी कहते हैं। सामान्य-वर्तमान, अपूर्ण-वर्तमान, सामान्य-भूत, आसन्न-भूत, पूर्ण-भूत, अपूर्ण-भूत एवं सामान्य भविष्यत् की क्रियाएँ इसी प्रकार के अन्तर्गत आती हैं। ऊपर दिये उदाहरणों से यह स्पष्ट है।

(२) सम्भावनार्थ—क्रिया के जिस रूप से सम्भावना (अनुमान, इच्छा, कर्तव्य या सन्देह) पायी जाय उसे सम्भावनार्थ प्रकार कहते हैं। सन्दिग्धभूत, हेतु-हेतुमद्भूत, सन्दिग्ध वर्तमान, तथा सम्भाव्य भविष्यत् की क्रियाएँ इसी के अन्तर्गत आती हैं। उदाहरण—(अनुमान) सतीश सम्भवतः मार्ग भूल गया है। (इच्छा) ईश्वर करे तुम अपनी परीक्षा में प्रथम रहो। (कर्त्तव्य) नरेश तुम्हें बड़ों का आदर करना चाहिए। (सन्देह) न जाने मोहन घर पर मिलेगा या नहीं। (हेतुहेतु-

सद्भूत) विजयशङ्कर यदि सच्चाई से परिश्रम करता तो अवश्य सफल होता।

(३) प्रवर्तनार्थ या विध्यर्थ—क्रिया के जिस रूप से किसी कार्य में प्रवृत्त करना पाया जाय उसे प्रवर्तनार्थ प्रकार कहते हैं। आज्ञा, प्रार्थना, अनुमति, प्रश्न, उपदेश आदि को प्रकट करने वाले क्रिया के सब रूप इसके अन्तर्गत हैं।

आज्ञा—रमेश पुस्तक पढ़ो।
प्रार्थना—प्रभु ! हमें पापों से बचाइये।
प्रश्न—क्या मैं लखनऊ चला जाऊँ ?
अनुमति—हाँ जा सकते हो।
उपदेश—अपने बड़ों का कहना मानो।

विध्यर्थ प्रकार के दो भेद होते हैं—(१) सामान्यविधि और (२) परोक्षविधि।

जिस क्रिया से आज्ञा, प्रार्थना आदि का सामान्य रूप से बोध हो उसे सामान्यविधि क्रिया कहते हैं। जैसे—*'घर जाओ' 'आप यहाँ किसलिए'*।

जिस क्रिया में आज्ञा आदि का पालन आगे के लिये (परोक्ष में) हो उसे परोक्षविधि क्रिया कहते हैं। जैसे—*सतीश ! पर्वतों पर सतर्कता से रहना। 'लखनऊ जाकर कुशलपत्र लिखते रहना।*

क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष

संज्ञा और सर्वनाम के समान क्रिया में भी लिंग, वचन और पुरुष होते हैं। लिंग दो हैं—स्त्रीलिंग और पुल्लिंग। वचन दो होते हैं एकवचन और बहुवचन। पुरुष तीन हैं—उत्तम पुरुष, मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष। इनके रूप इस प्रकार हैं:—

क्रियाओं के रूप

यहाँ क्रिया के रूपों की सारिणी दी जाती है।

सकर्मक क्रिया "देखना"

कर्तृवाच्य

सामान्य भूत

	एक वचन	बहु वचन
उत्तम पुरुष	मैंने देखा	हमने देखा
मध्यम पुरुष	तूने देखा	तुमने देखा
अन्य पुरुष	उसने देखा	उन्होंने देखा

आसन्न भूत

उत्तम पुरुष	मैंने देखा है	हमने देखा है
मध्यम पुरुष	तूने देखा है	तुमने देखा है
अन्य पुरुष	उसने देखा है	उन्होंने देखा है

पूर्ण भूत

मध्यम पुरुष	मैंने देखा था	हमने देखा था
मध्यम पुरुष	तूने देखा था	तुमने देखा था
अन्य पुरुष	उसने देखा था	उन्होंने देखा था

अपूर्ण भूत

उत्तम पुरुष

एकवचन		बहुवचन	
स्त्रीलिंग	पुलिंग	स्त्रीलिंग	पुलिंग
मैं देखती थी	मैं देखता था	हम देखती थी	हम देखते थे
मै देख रही थी	मैं देख रहा था	हम देख रही थीं	हम देख रहे थे

मध्यम पुरुष

तू देखती थी,	तू देखता था	तुम देखती थीं	तुम देखते थे
तू देख रही थी	तू देख रहा था	तुम देख रही थीं,	तुम देख रहे थे

अन्य पुरुष

वह देखती थी	वह देखता था	वे देखती थीं	वे देखते थे
वह देख रही थी,	वह देख रहा था	वे देख रही थीं,	वे देख रहे थे

सन्दिग्ध भूत

	एकवचन	बहुवचन
उ० पु०	मैंने देखा होगा	हमने देखा होगा
म० पु०	तूने देखा होगा	तुमने देखा होगा
अ० पु०	उसने देखा होगा	उन्होंने देखा होगा

हेतुहेतुमद्‌भूत

	एकवचन		बहुवचन	
	स्त्री०	पु०	स्त्री०	पु०
उ० पु०	मैं देखती	देखता	हम देखतीं	देखते
म० पु०	तू देखती	देखता	तुम देखतीं	देखते
अ० पु०	वह देखती	देखता	वे देखतीं	देखते

सामान्य वर्तमान

उ० पु०	मैं देखती हूँ	देखता हूँ	हम देखती हैं	देखते हैं
म० पु०	तू देखती है	देखता है	तुम देखती हो	देखते हो
अ० पु०	वह देखती है	देखता है	वे देखती हैं	देखते हैं

सन्दिग्ध वर्तमान

उ०पु०	मैं देखती हूंगी	देखता हूंगा	हम देखती होंगी	देखते होंगे
म०पु०	तू देखती होगी	देखता होगा	तुम देखती होंगी	देखते होंगे
अ०पु०	वह देखती होगी	देखता होगा	वे देखती होंगी	देखते होंगे

सम्भाव्य भविष्यत्

उ० पु०	मैं देखूं	हम देखें
म० पु०	तू देखे	तुम देखो
अ० पु०	वह देखे	वे देखें

सामान्य भविष्यत्

उ० पु०	मैं देखूंगी	देखूंगा,	हम देखेंगी	देखेंगे
म० पु०	तू देखेगी	देखेगा,	तुम देखोगी	देखोगे
अ० पु०	वह देखेगी	देखेगा,	वे देखेंगी	देखेंगे

आज्ञा

म० पु०	तू देखे	तुम देखो

पूर्वकालिक

देख कर — देख के

कर्मवाच्य

सामान्य भूत

		बहुवचन
उ० पु० स्त्री०	मैं देखी गई	हम देखी गईं
पु०	मैं देखा गया	हम देखे गये
म० पु० स्त्री०	तू देखी गई	तुम देखी गईं
पु०	तू देखा गया	तुम देखे गये
अ० पु० स्त्री०	वह देखी गई	वे देखी गईं
पु०	वह देखा गया	वे देखे गये

आसन्न भूत

उत्तम पुरुष स्त्री	मैं देखी गई हूं	हम देखी गई हैं
उत्तम पुरुष	मैं देखा गया हूं	हम देखे गये हैं

मध्यम	स्त्री	तू देखी गई है	तुम देखी गई हो
	पुरुष	तू देखा गया है	तुम देखे गये हो
अन्य	स्त्री	वह देखी गई है	वे देखी गई हैं
	पुरुष	वह देखा गया है	वे देखे गये हैं

पूर्णभूत

उत्तम	स्त्री	मै देखी गई थी	हम देखी गई थीं
	पुरुष	मैं देखा गया था	हम देखे गए थे
मध्यम	स्त्री	तू देखी गई थी	तुम देखी गई थीं
	पुरुष	तू देखा गया था	तुम देखे गये थे
अन्य	स्त्री	वह देखी गई थीं	वे देखी गई थीं
	पुरुष	वह देखा गया था	वे देखे गए थे

अपूर्ण भूत

उत्तम	स्त्री	मैं देखी जाती थीं	हम देखी जाती थीं
	पुरुष	मैं देखा जाता था	हम देखे जाते थे
मध्यम	स्त्री	तू देखी जाती थी	तुम देखी जाती थीं
	पुरुष	तू देखा जाता था	तुम देखे जाते थे
अन्य	स्त्री	वह देखी जाती थी	वे देखी जाती थीं
	पुरुष	वह देखा जाता था	वे देखे जाते थे

संदिग्ध भूत

उत्तम	स्त्री	मैं देखी गई हूंगी	हम देखी गई होंगीं
	पुरुष	मैं देखा गया हूंगा	हम देखे गए होंगे
मध्यम	स्त्री	तू देखी गई होगी	तुम देखी गई होंगी
	पुरुष	तू देखा गया होगा	तुम देखे गये होंगे
अन्य	स्त्री	वह देखी गई होगी	वे देखी गई होंगीं
	पुरुष	वह देखा गया होगा	वे देखे गये होंगे

हेतुहेतुमद्भूत

उत्तम स्त्री	मैं देखी जाती	हम देखी जातीं
पुरुष	मैं देखा जाता	हम देखे जाते
मध्यम स्त्री	तू देखी जाती	तुम देखी जातीं
पुरुष	तू देखा जाता	तुम देखे जाते
अन्य स्त्री	वह देखी जाती	वे देखी जातीं
पुरुष	वह देखा जाता	वे देखे जाते

सामान्य वर्तमान

उत्तम स्त्री	मैं देखी जाती हूँ	हम देखी जाती हैं
पुरुष	मैं देखा जाता हूँ	हम देखे जाते हैं
मध्यम स्त्री	तू देखी जाती है	तुम देखी जाती हो
पुरुष	तू देखा जाता है	तुम देखे जाते हो
अन्य स्त्री	वह देखी जाती है	वे देखी जाती है
पुरुष	वह देखा जाता है	वे देखे जाते हैं

संदिग्ध वर्तमान

उत्तम स्त्री	मैं देखी जाती हूंगी	हम देखी जाती होंगी
पुरुष	मैं देखा जाता हूँगा	हम देखे जाते होंगे
मध्यम स्त्री	तू देखी जाती होगी	तुम देखी जाती होंगी
पुरुष	तू देखा जाता होगा	तुग देखे जाते होगे
अन्य स्त्री	वह देखी जाती होगी	वे देखी जाती होंगी
पुरुष	वह देखा जाता होगा	वे देखे जाते होंगे

अपूर्ण वर्तमान

उत्तम पुरुष	मैं देखा जा रहा हूं	वह देखे जा रहे हैं
स्त्री	मैं देखी जा रही हूं	हम देखी जा रही हैं
मध्यम पुरुष	तू देखा जा रहा है	तुम देखे जा रहे हो
स्त्री	तू देखी जा रही है	तुम देखी जा रही हो

अन्य पुरुष	वह देखा जा रहा है	वे देखे जा रहे हैं
स्त्री	वह देखी जा रही है	वे देखी जा रही हैं

सम्भाव्य भविष्यत्

उत्तम स्त्री	मैं देखी जाऊँ	हम देखी जायें
पुरुष	मैं देखा जाऊँ	हम देखे जायं
मध्यम स्त्री	तू देखी जाय	तुम देखी जाओ
पुरुष	तू देखा जाय	तुम देखे जाओ
अन्य स्त्री	वह देखी जाय	वे देखी जायें
पुरुष	वह देखा जाय	वे देखे जायें

सामान्य भविष्यत्

उत्तम स्त्री	मैं देखी जाऊंगी	हम देखी जायेंगी
पुरुष	मैं देखा जाऊंगा	हम देखे जायेंगे
मध्यम स्त्री	तू देखी जायेगी	तुम देखी जाओगी
पुरुष	तू देखा जायेगा	तुम देखे जाओगे
अन्य स्त्री	वह देखी जायेगी	वे देखी जायेंगी
पुरुष	वह देखा जायेगा	वे देखे जायेंगे

अभ्यास

१ वाक्य किसे कहते हैं और उसके कितने भेद होते हैं ?

२ कर्तृवाच्य और कर्मवाच्य में अन्तर बता कर कर्तृवाच्य, कर्मवाच्य और भाववाच्य के बनाने के नियमों का निर्देश करो ?

३ भूतकाल के कितने भेद होते हैं ? प्रत्येक को उदाहरण देकर समझाओ ।

४ वर्तमानकाल और भविष्यत्‌काल के भेद उदाहरण देकर लिखो ?

५ 'प्रकार' से तुम क्या समझते हो ? उदाहरण देकर समझाओ ?

६ काल कितने हैं और प्रत्येक काल के कितने भेद होते हैं ?

अष्टम–प्रकरण

क्रिया विशेषण

पिछले प्रकरणों में जिन शब्दों का विवेचन किया है, वे सब विकारी शब्द हैं, क्योंकि उनमें रूप, लिङ्ग, वचन, पुरुष, वाच्य, काल आदि के कारण विकार होता रहता है। इस प्रकरण में हम जिन शब्दों का विवेचन करने लगे हैं, वे अविकारी हैं, क्योंकि इनमें लिंग, वचन, काल, पुरुष आदि के कारण किसी प्रकार का विकार (परिवर्तन) उत्पन्न नहीं होता है। ये शब्द तीनों कालों, दोनों वचनों में तथा अन्यत्र सदा परिवर्तनशील रहते हैं।

'अरबी घोड़ा तेजी से दौड़ता है' 'मोहन जल्दी जल्दी चलो' 'तुम अभी यहाँ आओ' 'सतीश भलीभाँति घर पहुँच गया'। इन वाक्यों में 'तेजी से' 'जल्दी' 'अभी' 'भलीभांति' क्रिया विशेषण हैं। क्रिया विशेष की विशेषता प्रकट करने वाले शब्द भी क्रिया विशेषण कहे जाते हैं :—

'बहुत थोड़ा चले' इस वाक्य में 'बहुत' शब्द भी क्रिया विशेषण है। क्रियाविशेषण उस अविकारी शब्द का नाम है जो क्रियाकी विशेषता तथा क्रियाविशेषणकी विशेषता प्रकट करता है।

भिन्न-भिन्न अर्थों को लक्ष्य में रख कर क्रिया विशेषण के मुख्य भेद निम्नलिखित हैं :—

(१) कालवाचक (२) स्वीकारवाचक (३) विधिवाचक (४) परिमाणवाचक (५) स्थानवाचक (६) निषेधवाचक (७) कारण-वाचक और (८) संख्यावाचक।

(१) कालवाचक—जिसके द्वारा यह पता चले कि यह कार्य किस समय किया गया। जैसे—*अब, तब, आज, कल, परसों, आजकल आदि*।

(२) स्थानवाचक—जिसके द्वारा यह पता चले कि अमुक कार्य किस स्थान पर हुआ, उसे स्थानवाचक क्रिया विशेषण कहते हैं। जैसे—*यहां, वहां, ऊपर, नीचे, भीतर इत्यादि*। जगत प्रसिद्ध सन्यासी यहां रहते थे। हमारे मित्र का मकान वहां है। इनमें यहाँ और वहाँ स्थानवाचक क्रिया विशेषण हैं।

(३) विधिवाचक—जिसके द्वारा यह पता चले कि यह कार्य किस विधि, रीति या प्रकार से किया गया। यह काम आसानी से किया जायेगा। कृष्ण को आते देख कर अचानक ही मोर नाच उठे। यहाँ रेखांकित शब्द विधि के सूचक हैं। लड़का कठिन परिश्रम करता है, (२, हमने बहुत दुखभरे हृदय से उसे कब्र में रख दिया।

(४) परिमाण वाचक—जिससे माप या परिमाण की सूचना मिलती हो। जैसे—*अत्यन्त, बहुत, पूरी तरह, इतना, उतना, जितना*। (१) जितनी शक्ति हो उतना ही परिश्रम करना चाहिये। (२) मैं आने वाली विपत्तियों के लिये पूरी तरह तैयार हूं। (३) आज मैं इतना अधिक प्रसन्न हूं।

(५) स्वीकार वाचक—जिसमें किसी प्रकार की स्वीकृति मिलती हो। जैसे—*मैं यह काम अवश्य करूंगा, भले ही लोग मुझे बुरा क्यों न कहें*।

(६) निषेधवाचक—जिसमें किसी प्रकार का निषेध मिलता हो। जैसे—*मैं यह काम कभी नहीं कर सकूंगा। मैं उसे नहीं जानता*।

(७) कारणवाचक—जिसमें किसी कारण का बोध होता

हो। जैसे—*वह मेरा कहना नहीं मानता, इसलिए मैं उसकी आप से सिफारिश नहीं कर सकता।*

(८) संख्यावाचक—जिससे किसी प्रकार की संख्या का बोध हो। जैसे—*मैं उसे सैकड़ों बार कह चुका, पर सब व्यर्थ रहा।*

हमारे मत में कारणवाचक और प्रयोजनवाचक एक दूसरे से मिलते हैं, इसलिये उनका पृथक् पृथक् वर्णन नहीं किया गया। कुछ विद्वान् लेखकों के अनुसार क्रियाविशेषण के मुख्य भेद चार ही होते हैं। परन्तु हमारे मत में इन सब में कुछ सूक्ष्म अन्तर रहने से उनका अलग अलग वर्णन ही उचित है।

क्रियाविशेषण अविकारी होते हैं इसलिए साधारणतया उनका रूपान्तर नहीं होता।

क्रियाविशेषण की बनावट

सामान्यतः क्रियाविशेषण दो प्रकार के होते हैं, एक मूल क्रियाविशेषण और दूसरे यौगिक। मूल क्रियाविशेषण किसी दूसरे शब्द में प्रत्यय लगा कर नहीं बनाये जाते। जैसे—*दूर, अचानक, फिर, नहीं* आदि। यौगिक क्रियाविशेषण प्रत्यय अथवा अन्य शब्द के योग से बनते हैं। ये निम्नलिखित शब्दों से बनते हैं:—

संज्ञा से—सबेरे, क्रमशः, प्रेमपूर्वक, प्रेमवश, नियमानुसार, क्षणमात्र, दिनभर आदि।

सर्वनाम से—यहां, वहां, अब, कब, इधर, उधर, जिधर, इतना, उतना, जितना, अभी, तभी, ज्यों, त्यों आदि।

विशेषण से—धीरे, चुपके, ऐसे, पहले, बहुधा आदि।

क्रिया से—आ-जाते, करते हुए, चाहे आदि।

अव्ययों के मेल से—यहां तक, झट से, नीचे को, ऊपर को आदि।

शब्दों की द्विरुक्ति से—*दिन-दिन, हाथों हाथ, साफ-साफ एकाएक, धीरे-धीरे, जहाँ-तहाँ* आदि।

भिन्न-भिन्न शब्दों के मेल से—*देश-विदेश, रात-दिन, जब-तब, कल-परसों, जब-कभी, हर-घड़ी, एक-साथ, सरासर, तड़ातड़* आदि।

संस्कृत के अव्ययीभाव समासान्त कुछ पद, तृतीया विभक्त्यन्त कुछ शब्द, एवं 'तः' प्रत्ययान्त शब्द भी क्रियाविशेषण के रूप में प्रयुक्त होते हैं। जैसे—*प्रति दिन खेलने जाया करो, कृपया मेरी बात का शीघ्र उत्तर दीजिये, वस्तुतः सतीश सच्चा है।*

अभ्यास

१ क्रियाविशेषण किसे कहते हैं ?

२ क्रियाविशेषण के मुख्य भेद गिना कर विधिवाचक और निषेधवाचक के अन्तर को स्पष्टतया समझाओ।

३ क्रियाविशेषण कितने प्रकार के होते हैं एवं किस प्रकार बनते हैं ?

४ क्रियाविशेषण के रूपों में अन्तर होता है या नहीं, और यदि होता है तो किस प्रकार ? उदाहरण देकर समझाओ।

-:o:-

नवम प्रकरण

सम्बन्धबोधक अव्यय

जो शब्द संज्ञा अथवा उसके स्थान पर आने वाले शब्दों के पूर्व अथवा पश्चात् उनका सम्बन्ध किसी अन्य शब्द के साथ करा देते हैं, उन्हें सम्बन्ध बोधक अव्यय कहते है।

सम्बन्धबोधक अव्ययों को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—(१) जिन का प्रयोग विभक्तियों के साथ होता है—पीछे, आगे, पहले, परे, भीतर, समीप, बराबर, पास आदि । उदाहरण के लिए—मोहन के आगे, घर के पीछे, सतीश की ओर, घर से दूर ।

(२) कुछ अव्यय ऐसे हैं जिन से पूर्व विभक्ति रहित संज्ञा का ही प्रयोग होता है—पर्यन्म, तक, मात्र, भर, सा, पर, समेत, सहित आदि । सालपर्यन्त रमेश यहीं रहेगा । दिन भर उसने कुछ नहीं खाया ।

(३) कुछ अव्यय ऐसे हैं जिन के पूर्व विभक्ति सहित एवं विभक्ति रहित दोनों प्रकार की संज्ञाएं प्रयुक्त होती हैं—अनुसार, बिना, योग्य, द्वारा आदि । सतीश द्वारा यह विदित हुआ । प्रयोजन के बिना मत बोलो । नीचे कुछ मुख्य सम्बन्धबोधक अव्ययों की सूची दी जारही है—

ओर, नाईं, सामने, रहे, ऊपर, नीचे, तले, भीतर, पास, निकट समीप, तक, निमित्त, कारण, योग्य, आगे, पीछे, पहले, द्वारा, सदृश, प्रतिकूल, विरुद्ध, बाहर, परे, अपेक्षा, समेत, आदि ।

कुछ कालवाचक और स्थानवाचक अव्यय सम्बन्धबोधक तथा क्रिया विशेषण दोनों होते हैं । जिस समय उनका प्रयोग संज्ञा या सर्वनाम के साथ होता है, उस समय वे सम्बन्धबोधक अव्यय होते हैं, और जिस समय क्रिया की विशेषता प्रकट करते हैं तब वे क्रिया विशेषण होते हैं । जैसे—राम यह पुस्तक पहले पढ़ो । (क्रिया विशेषण), यह पुस्तक सतीश से पहले समाप्त करो । (सम्बन्धबोधक)

अभ्यास

१ सम्बन्धबोधक अव्यय किसे कहते हैं ? विभक्ति सहित और विभक्ति रहित सम्बन्धबोधक अव्ययों से क्या अभिप्राय है । प्रत्येक के तीन तीन उदाहरण देकर समझाओ ।

२ सम्बन्धबोधक अव्ययों का क्रियाविशेषण से अन्तर उदाहरण देकर स्पष्ट करो।

दशम प्रकरण

समुच्चयबोधक अव्यय

दो शब्दों, वाक्यों या वाक्यांशों को परस्पर मिलाने वाले अव्ययों को समुच्चयबोधक अव्यय कहते हैं। जैसे—*सीता और मोहन दोनों खेलते है। सीता तथा कृष्ण यह पुस्तक पढें।* यहाँ 'और' 'तथा' समुच्चयबोधक हैं, क्योंकि ये सतीश और मोहन एवं सीता और कृष्ण शब्दों को परस्पर मिलाते हैं। समुच्चयबोधक अव्यय को योजक भी कहते हैं। समुच्चबोधक अव्यय के मुख्य तीन भेद हैं—(१) संयोजक (२) विकल्प बोधक और (३) भेदबोधक।

संयोजक—जो दो शब्दों अथवा वाक्यों का मेल प्रकट करते हों। जैसे—*और एवं, तथा, भी*। उदाहरण क्रमशः—सतीश और प्रमोद मसूरी जायेंगे। विष्णु एवं कमल सुशील बालक हैं। विनोद तथा रमेश दोनों को पारितोषिक मिले। विजय दिल्ली आज ही जा रहा है, तुम भी साथ चले जाओ।

विकल्पबोधक—जो अव्यय शब्द वाक्यार्थ में विकल्प की प्रतीति करायें। जैसे—*या, वा, अथवा, किंवा, कि, नहीं, न-न, तो*

।

उदाहरण—कवियों में कालिदास श्रेष्ठ हैं या भवभूति। मोहन जाय अथवा रमेश, बात एक ही है। समझ में नहीं आता गाऊं कि न गाऊं। चाहे विज्ञान ले चाहे कला, यह उसकी रुचि पर निर्भर है। न माया मिली न राम।

भेदबोधक—एक बात का दूसरी बात से भेद बतलाने वाले अव्ययों को भेदबोधक कहते हैं। ये चार प्रकार के होते हैं :—

(१) विरोध बोधक, (२) परिणाम बोधक, (३) संकेत बोधक और (४) स्वरूप बोधक।

विरोध बोधक—*पर, परन्तु, किन्तु, वरन, मगर, बल्कि, लेकिन, आदि*। उदाहरण—मैं उत्तीर्ण तो हो जाता परन्तु अकस्मात् अस्वस्थ हो जाने के कारण अनुत्तीर्ण हो गया।

परिणाम बोधक—*अतः, इसलिए, अतएव, क्योंकि, जो कि, ताकि आदि*।

उदाहरण—मैंने इसलिये उसे पत्र लिख दिया कि समय पर उसे सूचना मिल जाय। अब आपके दर्शन दिल्ली ही करूंगा क्योंकि मैं अन्तिम सप्ताह में वहीं आ रहा हूँ। जो हो मुझे तो वहाँ जाना ही है। पण्डित जवाहरलाल नेहरू भारत के प्रधान-सचिव हैं अतः समस्त मन्त्रि-मण्डल उनके नेतृत्व में कार्य करता है। वह देहरादून आ गया अतएव मेरा परिश्रम बच गया।

संकेत-बोधक—*यद्यपि, जो, तो, चाहे, यदि आदि*।

उदाहरण—यदि ऐसा है तो तुम जा सकते हो। जो यह बात थी तो तुम वहाँ क्यों गये। यद्यपि मैं बम्बई जाना तो चाहता था तथापि कुछ समय के लिये यात्रा स्थगित कर दी है। चाहे जो हो मैं आज तुम्हारे साथ नहीं जाऊंगा।

स्वरूप-बोधक—*अर्थात्, मानो कि, यहां तक, कि, आदि*।

उदाहरण—अर्थात् आपके कहने का यह तात्पर्य है कि आज आप मेरे साथ घूमने नहीं चलेंगे। काश्मीर तो मानो स्वर्ग है। अब तो उसका साहस बहुत बढ़ गया है, यहाँ तक कि उसने मुझे मार्ग में आज पकड़ लिया।

अभ्यास

१ समुच्चयबोधक किसे कहते हैं और उसके कितने भेद होते हैं ?

२ निम्नलिखित वाक्यों में से समुच्चयबोधक अव्यय पृथक करो—

(१) मैं जाता तो सही किन्तु मेरे पिता जी ने वहां मुझे जाने नहीं दिया। (२)अर्थात् मेरा तात्पर्य यह है कि मुझे यहीं रहने दिया जाय (३) तुम यद्यपि पढ़ना चाहते हो किन्तु परिश्रम बिलकुल नहीं करते हो, (४) रमाकान्त और शैलेन्द्र में लड़ाई नहीं बल्कि खूब मारपीट हुई। (५) आप आयेंगे तो अवश्य ही, क्योंकि आपको काम हैं।

एकादश-प्रकरण

विस्मयादिबोधक

जिन अव्ययों द्वारा विस्मय, हर्ष, शोक, लज्जा, ग्लानि आदि मनोभाव प्रकट होते हैं उन्हें विस्मयबोधक अव्यय कहते हैं। भिन्न-भिन्न मनोभावों को व्यक्त करने के लिए भिन्न-भिन्न अव्ययों का प्रयोग किया जाता है।

हर्षबोधक—*अहा, वाह वाह, धन्य धन्य, शाबाश आदि।*

आहा ! मैं भी मंसूरी जाऊंगा ।

शाबाश बेटा ! तुमने बहुत अच्छा किया ।

विस्मयबोधक—*हैं, ऐं, ओहो, क्या, अरे आदि ।*

हैं ! शैलेन्द्र यह तुमने क्या किया ?

ऐं ! आप यहां खड़े क्या कर रहे हैं ?

ओहो ! आप ? आप यहां कैसे ?

स्वीकारबोधक—*ठीक, अच्छा, जी हां, हां आदि ।*

ठीक ! बहुत अच्छा कर रहे हो ।

अच्छा ! तो अब तुम जा सकते हो ।

तिरस्कार बोधक—*छिः, धिक्, दुर; अरे, हट आदि ।*

छिः ! उसका नाम मत लो ।

धिक् ! कहीं ऐसा भी कोई करता है ।

दुर ! पगली यह तूने क्या किया ?

आशीर्वाद बोधक—*आयुष्मान, चिरंजीव हो, जीते रहो आदि ।*

आयुष्मान् बेटा ! कहो कब आये ?

सुशील, चिरंजीवी हो !

सम्बन्धबोधक—*अरे, रे अरी, री, अजी, ओ जी, ओ आदि ।*

अरे ! तू कौन है ?

क्यों रे ! अभी गया नहीं ?

अरी ! यहां क्या कर रही है ?

अनुमोदन बोधक—*ठीक, वाह, शाबाश, हां हां आदि ।*

ठीक ! ऐसा ही होना चाहिए ।

वाह वाह ! कितना अच्छा खेलते हो ।

अभ्यास

१ विस्मयादि बोधक अव्यव किसे कहते हैं तथा उसके कितने प्रकार होते हैं ?

२ पांच ऐसे वाक्य बनाओ जिन से हर्ष, घृणा और शोक के भाव व्यक्त हों।

३ हाय, धिक्, अहो, रे, ठीक, छिः, इन अव्ययों का अपने वाक्यों में प्रयोग करो।

द्वादश-प्रकरण

शब्द व्युत्पत्ति

अब तक हमने वर्ण, शब्द एवं विभिन्न प्रकार के शब्दों के रूपान्तरों आदि का वर्णन किया है। अब हम विवेचन करेंगे कि संज्ञा आदि शब्दों के, पारस्परिक मेल से अथवा अन्य प्रकार के शब्द या शब्दांशों के मेल से किस प्रकार नवीन शब्दों की रचना होती है। शब्दों की बनावट को रचना कहते हैं तथा बने हुए शब्दों का मूल, धातु, प्रत्यय आदि के बताने को शब्द-व्युत्पत्ति कहते हैं।

जैसा कि हम पहले बता चुके हैं कि यौगिक तथा योगरूढ़ि शब्द किसी शब्द तथा शब्दांश के योग से या दो शब्दों के योग से बनते हैं। इस प्रकार से शब्दों की रचना तीन प्रकार से होती (१) शब्द के पूर्व शब्दांश लगाने से, (२) शब्द के अन्तर्गत शब्दांश लगाने से, तथा (३) दो शब्दों के योग। शब्द के पूर्व जो शब्दांश लगाये जाते

हैं उन्हें उपसर्ग कहते हैं, शब्द के अनन्तर जो शब्दांश जोड़े जाते हैं उन्हें प्रत्यय कहते हैं। जिस समय दो अथवा दो से अधिक शब्द मिल कर किसी स्वतन्त्र शब्द का निर्माण करते हैं तब इस योग को समास तथा सन्धि कहते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि नवीन शब्दों की रचना उपसर्ग या प्रत्यय के योग से अथवा समास और सन्धि के द्वारा होती है।

उपसर्ग

उपसर्ग वे शब्दांश है, जो किसी शब्द के आदि में प्रयुक्त होकर उसके अर्थ में विशेषता उत्पन्न कर देते हैं या उसके अर्थ को एकदम परिवर्तित कर देते हैं। प्रबल = प्र + बल, अधिक बलशाली। संस्कृत में 'हृ' (हर्) धातु का अर्थ है 'चुरा लेना' या 'बलात् छीन लेना', इसी से 'हार' शब्द भी बनता है, जिसका अर्थ होता है 'गले का हार'। इसके पूर्व यदि 'प्र' उपसर्ग लगा दिया जाय तो 'प्रहार' का अर्थ हो जाता है 'मारना' और यदि 'आ' लगा दिया जाय तो 'आहार' का अर्थ हो जाता है 'भोजन' और यदि 'वि' जोड़ दिया जावे तो विहार का अर्थ हो जाता है 'घूमना' अथवा सं जोड़ देने से 'संहार' का अर्थ हो जाता है 'नाश'। इन उदाहरणों से यह स्पष्ट होगया कि उपसर्ग लगाने से अर्थ में विशेषता आजाती है और कहीं कहीं अर्थ सर्वथा बदल ही जाता है।

हिन्दी में तीन प्रकार के उपसर्ग प्रयुक्त होते हैं (१) संस्कृत के उपसर्ग, (२) हिन्दी के उपसर्ग, और (३) उर्दू के उपसर्ग। हिन्दी में संस्कृत के उपसर्गों की प्रचुरता है। संस्कृत उपसर्गों के अतिरिक्त हिन्दी के अपने उपसर्ग बहुत ही कम हैं।

संस्कृत के उपसर्ग

उपसर्ग	उपसर्ग का अर्थ	उपसर्ग के योग से निर्मित शब्द
प्र =	अधिक, प्रकर्ष	प्रलय, प्रबल, प्रकर्ष ।
परा =	पीछे, उल्टा	परावृत्ति, पराभव, पराजय ।
अति =	अधिक, ऊपर	अतिदीन, अतिरिक्त ।
अप =	बुरा, विरुद्ध	अपमान, अपकर्ष ।
अभि =	ओर, सामने, विरुद्ध	अभिमुख, अभ्यागत, अभियोग ।
अधि =	ऊपर, श्रेष्ठ	अधिराज, अध्यक्ष, अधिपति ।
अनु =	पीछे, सदृश	अनुज, अनुचर, अनुरूप ।
अव =	नीचे, हीन, बुरा	अवतार, अवनति, अवगुण ।
आ =	तक, उल्टा	आजीवन, आगमन, आकर्षण ।
सम् =	अच्छा, साथ	सम्मान, संस्कार, संयम ।
उत् =	ऊपर, श्रेष्ठ	उत्पन्न, उत्कर्ष, उत्तम ।
सु =	अच्छा, सरल	सुकर्म, सुगम, सुपुत्र ।
उप =	समीप, गौण	उपकूल, उपनयन, उपनाम, उपवन ।
वि =	भिन्न, विशेष	विदेश, वियोग, विख्यात ।
नि =	नीचे, विशेष	निष्फल, नियोग ।
परि =	आसपास	परितोष, परिक्रमा, परितुष्टि ।
प्रति =	विरुद्ध, सामने	प्रतिकूल, प्रत्यक्ष, प्रतिदिन ।
निस्, निर् =	निषेध	निर्मम, निराधार, निराश्रम ।
दुस्-दुर् =	कठिन, बुरा	दुर्गम, दुष्कर, दुराचार ।

कुछ शब्द दो या तीन उपसर्ग एक साथ जोड़कर, बनाये जाते हैं—

निर + आ	निरा+करण = निराकरण ।
सम् + आ	समा+लोचन = समालोचन ।
प्रत्यु + उप	प्रत्युप+कार = प्रत्युपकार ।

वि+आ	व्या+करण=व्याकरण ।
प्रति+आ	प्रत्या+ख्यान=प्रत्याख्यान ।
प्रति+अप	प्रत्यप+कार=प्रत्यपकार ।
सु+सं	सुसं+स्कृत=सुसंस्कृत ।
सम्+नि	सन्नि+पात=सन्निपात ।
सम्+उत्	समुत्+ज्वल=समुज्ज्वल ।
सम्+अन+आ	समन्वा+गत=समन्वागत ।
सम्+अधि	समधि+कार=समधिकार ।

संस्कृत के कुछ अव्यय एवं विशेषण भी उपसर्गों की तरह ही शब्दों के आदि में प्रयुक्त होते हैं :—

जिन शब्दों के आरम्भ में स्वर होता है, उनके पहले 'अ' को 'अन्' हो जाता है—अ+एक=अनेक, अ+अन्त=अनन्त, अ+ईश्वर=अनीश्वर आदि ।

अधस् = नीचे	...	अधोगति, अधःपतन ।
अन्तर = भीतर	...	अन्तःकरण, अन्तर्नाद ।
न = अभाव	...	नास्तिक, नगण्य ।
पुरः = सामने	...	पुरस्सर, पुरोहित ।
पुरा = पहले	...	पुरातन, पुरावृत्त ।
बहिर् = बाहर	...	बहिर्गमन, बहिष्कार ।
स = सहित	...	सजीव, सफल ।
पुनर् = फिर	...	पुनर्जन्म, पुनर्विवाह ।
सत् = अच्छा	...	सज्जन, सत्पात्र ।
सह = साथ	...	सहचर, सहोदर, सहपाठी ।
कु = (का) = बुरा	...	कुपुत्र, कापुरुष

हिन्दी के उपसर्ग

अ, अन = अभाव ... अचेत, अजान, अनाड़ी, अनमेल।

अध (सं० अर्ध) = आधा ... अधपका, अधकचरा।

औ (सं० अव) = हीन, नीचे ... औगुन, औतार, औघट।

नि (स० निर्) = रहित ... निकम्मा, निडर।

भर = पूर्णता ... भरपेट, भरपूर, भरसक।

सु, स = अच्छा ... सुजान, सुडौल, सपूत।

कु, का = बुरा ... कुठौर, कुचाली, कपूत, कायर।

उर्दू के उपसर्ग

कुछ उपसर्ग मूलतः उर्दू के होते हुए भी हिन्दी में रल-मिल गये हैं, एवं बहुत अंश में हिन्दी के द्वारा अपना भी लिये गये हैं। नीचे कुछ ऐसे ही उपसर्ग दिये जा रहे हैं :—

ना, बे, ला = अभाव ... नापसन्द, बेचैन, लाचार।

ब = अनुसार सहित ... बाकायदा, बाहिफाजत, बातमीज।

बे = बिना ... बेकायदा, बेबुनियाद।

दर = में ... दरअसल, दरहकीकत।

हर = प्रति .. हरएक, हररोज, हरघड़ी।

खुश = प्रसन्न ... खुशमिजाज, खुशदिल।

बद = बुरा ... बदकिस्मत, बदमिजाज, बदकिस्मत।

गैर = अनुचित ... गैरकायदा।

ना = बुरा .. नामुनासिब, नामुमकिन,।

खूब = अधिक ... खूबसूरत।

प्रत्यय

उपसर्गों के समान प्रत्यय भी अकेले कभी प्रयुक्त नहीं होते,

अपितु शब्दों के अन्त में लग कर उनके अर्थ में परिवर्तन कर देते हैं। इसके दो भेद होते हैं :—

कृत और तद्धित

कृत प्रत्यय—क्रियात्मक शब्दों के पीछे लगने कृत प्रत्यय कहलाते हैं। कृत प्रत्ययों से बनने वाले शब्द कृदन्त कहलाते हैं। इस प्रकार के शब्दों के पाँच भेद होते हैं।

(१) कर्तृवाचक
(२) कर्मवाचक
(३) करणवाचक
(४) भाववाचक
(५) क्रियाद्योतक

कर्तृवाचक—जिन प्रत्ययों से क्रिया के होने या करने का बोध होता हो वे कर्तृवाचक कहलाते हैं। जैसे—*वाला, हारा, सार, आका, आलू, आऊ, ओड़ा, ऐत, अक्कड़, वैया*। नीचे इनके कुछ उदाहरण दिये जाते हैं :—

क्रिया	प्रत्यय	उदाहरण
चाहना	वाला	चाहने वाला
खेलना	वाला	खेलने वाला
बेचना	वाला	बेचने वाला
सृजन	हारा	सृजनहारा
करना	हारा	करने हारा
मिलना	सार	मिलनसार
खाक	सार	खाकसार
लड़ना	आका, आक	लड़ाका
तैरना	आका, आक	तैराक

झगड़ना	आलू	झगड़ालू
बिकना	आऊ	बिकाऊ
टिकना	आउ	टिकाऊ
भागना	ओड़ा	भगोड़ा
लड़ना	ऐत	लड़ैत
कुदकना	अक्कड़	कुदक्कड़
गाना	वैया	गवैया

मूल धातु में प्रत्यय लगा कर नये शब्द बनाते समय क्रिया के 'ना' को 'ने' कर लिया जाता है—चाहना से चाहने वाला। कुछ स्थानों पर 'ना' का एकदम ही लोप हो जाता है—लड़ना से लड़ैत।

कर्मवाचक—जिन प्रत्ययों से संज्ञा कर्म का बोध कराने लगती है वे प्रत्यय कर्मवाचक कहे जाते हैं।

जैसे—*औना, ना, नी, आदि*। इस प्रकार के उदाहरणों में कार्य पर ही सारा बल रहता है। नीचे कुछ उदाहरण दिये जाते हैं:—

मूल शब्द	प्रत्यय	उदाहरण
बिछाना	औना	बिछौना
खिल	औना	खिलौना
फूंक	ना, नी	फूँकना, फूंकनी
चूक	ना, नी	चूकना, चूकनी

करण वाचक—जिन प्रत्ययों के लगाने से क्रिया के साधन का बोध होता है, वे करण वाचक कहे जाते हैं।

जैसे—*आ, ई, अन, ना, आनी, ऊ, नी आदि*।

मूल शब्द	प्रत्यय	उदाहरण
झूल	आ	झूला
फांस	ई	फांसी

चल	अन	चलन
बोल	ना	बोलना
ओढ़	ना	ओढ़ना
मथ	आनी	मथानी
झाड़	ऊ	झाड़ू
कतर	नी	कतरनी

भाववाचक—वे प्रत्यय हैं जिनके द्वारा संज्ञाओं के भाव अथवा क्रियाओं के व्यापार का पता चले।

जैसे—*अ, आ, आई, आन, आप, आव, आवट, आत्रा, आहट, ई, औती, औता, त, तीं, न, ना, नी आदि।*

मूलशब्द	प्रत्यय	उदाहरण
समझ	अ	समझ
फेर	आ	फेरा
	आई	लड़ाई
मिल	आन	मिलान
मिल	आप	मिलाप
चढ़	आव	चढ़ाव
लिख	आवट	लिखावट
बोल	ई	बोली
बस	एरा	बसेरा
मन	औती	मनौती
समझ	औता	समझौता
चल	न	चलन
उठ	ना	उठना
मिल	नी	मिलनी

क्रियाद्योतक—क्रियाद्योतक या क्रियार्थक वे हैं जिन के लगाने से भूत अथवा वर्तमान बतलाने वाले विशेषण या अव्यय बनते हैं। जैसे—आ, या आदि।

क्रिया	प्रत्यय	विशेषण	विशेष्य	
आना	हुआ	आता हुआ	मनुष्य या पशु	
खाना	,,	खाता हुआ	,,	,,
जाना	,,	जाता हुआ	,,	,,
जोतना	,,	जोतता हुआ	,,	,,

क्रियाद्योतक कृदन्तों के अन्तिम 'आ' को 'ए' कर देने से अव्यय बन जाते हैं—उसने लेटे लेटे तलवार चलाई, सोते जागते तुम्हारा ही ध्यान बना रहता है।

तद्धित प्रत्यय—जो प्रत्यय संज्ञा के पीछे लगकर मूलशब्द के अर्थ में परिवर्तन कर देते हैं वे तद्धित कहलाते हैं। तद्धित प्रत्ययों के भेद निम्नलिखित है। (१) अपत्यवाचक (२) कर्तृवाचक (३) भाववाचक (४) गुणवाचक (५) ऊनवाचक (६) स्त्रीवाचक।

अपत्य वाचक - वे प्रत्यय हैं जिन के जुड़ जाने से शब्द के रूप में आन्तरिक परिवर्तन हो जाता है और मूल शब्द का अर्थ सन्तानवाचक हो जाता है। इसमें भिन्न भिन्न प्रत्ययों के लग जाने से मूल शब्दों के स्वरूप में भी परिवर्तन हो जाता है।

मूल शब्द	प्रत्यय	नया शब्द
रघु	अण्	राघव
सुमित्रा	अण्	सौमित्र

कर्तृवाचक—वे प्रत्यय हैं जिन के जुड़ जाने से शब्द का कर्तृत्व बन जाता है।

मूल शब्द	प्रत्यय	नया शब्द
लकड़	हारा	लकड़हारा
गाड़ी	वाला	गाड़ीवाला

भाववाचक—वे प्रत्यय हैं जिन के जुड़ जाने से संज्ञा या विशेषण भाव का बोध कराने लगते हैं। जैसे—*आ*, *आई*, *आका*, *आटा*, *आनो*, *आपा*, *आयत*, *आस*, *औती*, *त*, *ता*, *पन*।

मूल शब्द	प्रत्यय	नया शब्द
आप	आ	आपा
ऊंचा	आई	ऊंचाई
धम	आका	धमाका
सन्न	आटा	सन्नाटा
ऊंच	आन	ऊंचान
बूढ़ा	आपा	बूढ़ापा
बहुत	आयत	बहुतायत
मीठा	आस	मिठास
चालाक	ई	चालाकी
बाप	औती	बपौती
रंग	त	रंगत
मूर्ख	ता	मूर्खता
मूर्ख	पन	मूर्खपन

ऊनवाचक (लघुतावाचक)—वे प्रत्यय हैं जिन के जुड़ जाने से मूल शब्द में लघुता का बोध होने लगता है। जैसे—*आ*, *इया* से मनुआ, खटिया।

गुणवाचक—वे प्रत्यय है जिन के लगने से किसी पदार्थ का

गुण प्रकट होता हो। जैसे—*आ, इक, इत, ईय, ईला, आऊ, ऐल, हा*, इत्यादि।

मूल शब्द	प्रत्यय	नया शब्द
भूख	आ	भूखा
धर्म	इक	धार्मिक
आनन्द	इत	आनन्दित
प्रान्त	ईय	प्रान्तीय
रंग	ईला	रंगीला
आगे	आऊ	अगाऊ
दूध	ऐल	दुधैल
पानी	हा	पनिहा

स्त्रीवाचक—वे प्रत्यय हैं जिन के लगने से मूल शब्द परिवर्तित होकर स्त्रीवाचक बन जाता है। जैसे—*आ, ई*।

मूल शब्द	प्रत्यय	नया शब्द
शिव	आ	शिवा
पति	ई	पत्नी

अभ्यास

१ उपसर्ग और प्रत्यय में क्या अन्तर है ? उदाहरण देकर स्पष्ट करो।

२ उपसर्ग से शब्दों के अर्थ में कैसे अन्तर हो जाता है ?

३ कृत् प्रत्यय और तद्धित प्रत्यय का अन्तर उदाहरण देकर स्पष्ट करो।

४ कृत् और तद्धित प्रत्यय कितने प्रकार के होते हैं।

५ निम्नलिखित शब्द किस किस उपसर्ग से बने हैं—

सजातीय, अनुज, अग्रज, निर्मल, निडर, कायर, उदाहरण, समागम, प्रत्याख्यान, समाचार, कुठौर, उद्गम, आदान, पराभव, खुशबू और बेचैनी।

निम्नलिखित शब्दों की व्युत्पत्ति लिखो—

भूखा, रंगीला, तैराक, गवैया, सुनार, लुहार, मारपीट,, सौंदर्य।

त्रयोदश प्रकरण

तत्सम और तद्भव

तृतीय प्रकरण में शब्दों के भेद बतलाते हुए हमने हमने व्युत्पत्ति के अनुसार शब्दों को चार भागों में विभाजित किया है—(१) तत्सम, (२) तद्भव, (३) देशी और (४) विदेशी। यहाँ हम प्रथम दो, तत्सम और तद्भव शब्दों के सम्बन्ध में विचार करेंगे।

तत्सम—वे शब्द हैं जो संस्कृत से ज्यों के त्यों हिन्दी में ले लिए गए हैं। जैसे—पिता, पुत्र, नारी, देवी, आत्मा आदि। संस्कृत भाषा हिन्दी की जननी मानी जाती है। इसलिए हिन्दी के शब्द-भण्डार का उद्गम-स्थान प्रधान रूप से संस्कृत ही रही है और आज उसके राज्य भाषा के पद पर प्रतिष्ठित हो जाने पर नवीन शब्दों के लिए संस्कृत ही उसका प्रधान स्रोत रहेगी।

तद्भव—वे शब्द हैं जो शुद्ध संस्कृत के शब्दों से ही बिगड़ कर आज प्रयोग में आ रहे हैं। प्रत्येक भाषा का प्रवाह नदी के प्रवाह की तरह सदा चलता रहता है। जैसे गङ्गा हिमालय से बङ्गाल की

खाड़ी तक बहती है। प्रदेश के भेद से उसके कितने ही गङ्गा, अलखनन्दा, भागीरथी, जाह्नवी, हुगली आदि नाम पड़ गए हैं, परन्तु हिमालय से बङ्गाल की खाड़ी तक उसका प्रवाह अविच्छिन्न बना रहता है। इसी प्रकार भाषा का प्रवाह भी एक बना रहता है किन्तु उसके नाम और रूप में अन्तर आ जाता है। यही अन्तर अलग अलग भाषा के नाम से पुकारा जाता है। प्रवाह में पड़ कर संस्कृत के जो शब्द अपना रूप बदल चुके हैं उन्हीं को तद्भव शब्द कहते हैं। बच्चों के समझने के लिए नीचे हम कुछ शब्दों की तालिका दे रहे हैं और साथ में मूल शब्दों का रूप भी—

तत्सम	तद्भव	तत्सम	तद्भव
काष्ठ	काठ	आश्रय	आसरा
कूप	कुआं	अश्रु	आंसू
कुठार	कुल्हाड़ी	उत्साह	उछाह
कपाट	किवाड़	स्थल	थल
उलूक	उल्लू	स्तन	थन
आम्र	आम	दधि	दही
अक्षत	अच्छत	लवण	लून, नून
अर्ध	आधा	धूम्र	धुवां
अज्ञ	अजान	मित्र	मीत
अद्य	आज	मस्तक	माथा
यश	जस	अग्नि	आग
स्त्री	तिरिया, तिय	पत्र	पत्ता, पात
जिह्वा	जीभ	हस्त	हाथ
कातर	कायर	पुत्र	पूत
स्वामी	साईं	प्रिय	पिय

सौभाग्य	सुहाग	वधू	बहू
शय्या	सेज	भगिनी	बहिन
क्षोभ	छोह	बिवाह	ब्याह
पूर्ण	पूरा	शिक्षा	सीख
घृत	घी	भ्राता	भाई
गृह	घर	प्रस्तर	पत्थर
गर्दभ	गधा	ओष्ठ	ओठ
चूर्ण	चून	मूर्ति	मूरत
चन्द्र	चांद	हृदय	हिय
दुग्ध	दूध	स्वप्न	सपना
क्षेत्र	खेत	सत्य	सच
श्यामल	सांवला	श्वेत	सेत
वत्स	बच्छा, बछड़ा	शत	सौ
गृहिणी	घरनी	रोष	रिस
धरणी	धरती	रूक्ष	रूखा
पौत्रवधू	पतोहू	ज्येष्ठ	जेठा
चैत्र	चैत		

इन शब्दों के अतिरिक्त देशी और विदेशी शब्द और रह जाते हैं।

देशी या देशज—वे शब्द हैं जो आवश्यकतानुसार अन्य प्रांतीय भाषाओं से हिन्दी में अपना लिए गए हैं। जैसे *पेट, पगड़ी पिल्ला, बिल्ली आदि।*

हिन्दी में ऐसे शब्दों की संख्या बहुत अधिक नहीं है।

विदेशी—वे शब्द हैं जो समस्त भारत के क्षेत्र से बाहर की भाषाओं से हिन्दी में आए हैं। ऐसे शब्दों में अरबी, फारसी तथा

अंग्रेज़ी के शब्दों की संख्या अधिक है। जैसे—*मदरसा, मुन्शी, कलम, किताब, स्कूल, स्टेशन, अफसर, रपट, अर्दली, टैम, टैट, कचहरी, जज* आदि विदेशी शब्द हैं, परन्तु हिन्दी ने इन्हें अपना लिया है, इसलिए धीरे धीरे ये अपना विदेशीपन छोड़ते जारहे हैं।

चतुर्दश-प्रकरण

समास

दो या दो से अधिक शब्दों के संयोग को समास कहते हैं। इस प्रकार समास के द्वारा संयुक्त पदों को समस्तपद या समस्त शब्द कहते हैं। शब्दों के बीच में विभक्ति चिन्ह तथा प्रत्ययों का लोप हो जाता है। जैसे—रसोईघर, घुड़सवार। यहां 'रसोई का घर' और 'घोड़े पर सवार' में 'रसोई' और 'घोड़े' के आगे के विभक्ति चिन्हों का लोप होगया है। समस्त पदों को जब तोड़ा जाता है तो इसको विग्रह या व्यास कहते हैं। विग्रह करने पर शब्द के जो अलग अलग भाग हो जाते हैं उन्हें खण्ड कहते हैं। खण्डों के मेल को समास और समस्त-पद के अलग अलग करने को विग्रह कहते हैं।

समास और सन्धि में अन्तर

जैसा कि ऊपर बताया गया है दो या दो से अधिक पदों के शब्दों के मेल को समास कहते हैं तथा दो वर्गों के मेल को सन्धि। जब पदों या शब्दों का समास किया जाता है तो विभक्ति चिन्हों का लोप हो जाता है और पद या शब्द प्रायः अविकृत रहते हैं अर्थात

कहीं कहीं दीर्घ को ह्रस्व करने के अतिरिक्त और किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता है। परन्तु सन्धि में अनिवार्य रूप से दो वर्णों के मिलने पर विकार होता है। यथा, धन का मद—धनमद, काठ की पुतली—कठपुतली। यहां पर प्रथम पद में केवल विभक्ति चिन्ह 'का' का लोप हुआ है—और दूसरे में विभक्ति चिन्ह के साथ 'काठ' पद के दीर्घ 'का' को ह्रस्व 'क' भी हुआ है। परन्तु रमा+ईश=रमेश, तथा + एव = तथैव, यदि + अपि = यद्यपि, चिद् + मात्र = चिन्मात्र, यशः+कर = यशस्कर आदि सन्धि के उदाहरणों में दो वर्णों के मेल के बाद मिले हुये दोनों ही वर्णों में विकार परिवर्तन होकर एक तीसरी ध्वनि बन जाती है।

किसी समास में प्रथम खण्ड प्रधान होता है तो किसी में द्वितीय, किसी में कोई भी प्रधान नहीं होता और किसी में दोनों खण्ड। इस प्रकार समास के मुख्य चार भेद होते हैं—(१) अव्ययीभाव, (२) तत्पुरुष, (३) द्वन्द्व और (४) बहुब्रीहि। तत्पुरुष समास के दो उपभेद—द्विगु और कर्मधारय होते हैं। इन दोनों को सम्मिलित करके कई लोग समास के छः भेद मानते हैं—अव्ययीभाव, तत्पुरुष, कर्मधारय, द्विगु, द्वन्द्व और बहुब्रीहि।

अव्ययीभाव

जिस समास में पहला खण्ड प्रधान हो उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं। अव्ययीभाव में पहला खण्ड अव्यय होता है एवं समस्त पद भी अव्यय ही बन जाता है। इसलिये इस समास का नाम भी अव्ययीभाव रक्खा है। अव्ययीभाव का अर्थ है 'अव्यय हो जाना'। अव्ययीभाव समस्त-पद क्रिया में अपनी विशेषता प्रकट करता है। जैसे—*यथाशक्ति* (शक्ति के अनुसार) *भरपेट* (पेट भर कर) *धड़ाधड़*,

प्रतिदिन, हाथोंहाथ आदि। इन उदाहरणों में सब जगह प्रथम खण्ड प्रधान है।

तत्पुरुष

जिस समास में दूसरा खण्ड प्रधान हो उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। इसमें समस्त बल दूसरे खण्ड पर ही रहता है। जैसे—*'राजसभा'* राजा की सभा, यहाँ सभा की प्रधानता है, राजा की नहीं। तत्पुरुष दो प्रकार का होता है—(१) व्यधिकरण (२) समानाधिकरण। समस्त पदों के विग्रह करने पर प्रथम और द्वितीय खण्ड में जहां भिन्न-भिन्न विभक्तियाँ होती हैं उसे *व्यधिकरण* कहते हैं। जैसे—*'राजपुरुष'* राजा का पुरुष यहाँ पर प्रथम खण्ड में सम्बन्ध कारक विभक्ति है और द्वितीय खण्ड में कर्त्ता कारक की। समानाधिकरण-तत्पुरुष उसे कहते हैं जिसमें दोनों खण्डों की विभक्तियां समान हों। जैसे—*चन्द्रमुख = चन्द्र जैसा मुख।* समानाधिकरण तत्पुरुष को ही कर्मधारय समास कहते हैं।

व्यधिकरण तत्पुरुष—विग्रह करने पर प्रथम खण्ड के साथ जो विभक्ति लगती हो उसी के अनुसार इस समास का नाम होता है। द्वितीया से लेकर सप्तमी विभक्ति तक यह समास छः प्रकार का होता है।

द्वितीया तत्पुरुष—माखन-चोर (माखन को चुराने वाला), स्वर्ग-प्राप्त (स्वर्ग को प्राप्त) चिड़ीमार (चिड़ियों को मारने वाला)।

तृतीया तत्पुरुष—गुणहीन (गुणों से हीन), रेखांकित (रेखाओं से अंकित) तुलसी कृत (तुलसी के द्वारा कृत-निर्मित)।

चतुर्थी तत्पुरुष—हवन सामग्री (हवन के लिये सामग्री), राह-खर्च (राह के लिये खर्च), भगवदर्पण (भगवान के लिये अर्पण)।

पञ्चमी तत्पुरुष—धर्मभ्रष्ट (धर्म से भ्रष्ट), जन्मान्ध (जन्म से अन्धा), अधिकारच्युत (अधिकार से च्युत-गिरा हुआ)।

षष्ठी तत्पुरुष—सेनापति (सेना का पति), बैलगाड़ी (बैलों की गाड़ी), घुड़दौड़ (घोड़ों की दौड़)।

सप्तमी तत्पुरुष—वनवास (वन में वास), कविशिरोमणि (कवियों में शिरोमणि), जलमग्न (जल में मग्न)।

कभी कभी तत्पुरुष में प्रथमखण्ड में भी विभक्ति का लोप नहीं होता है। ऐसे समास को अलुक तत्पुरुष कहते हैं। जैसे—*युधिष्ठिर* (युधि+स्थिर)=युद्ध में स्थिर रहने वाला, *खेचर* (खे+चर)=आकाश में विचरने वाला।

कर्मधारय

समानाधिकरण तत्पुरुष या कर्मधारय—जिसमें विशेष्य-विशेषण अथवा उपमान और उपमेय का समास हो तथा विग्रह करने पर दोनों खण्डों में एक ही कर्ता कारक की विभक्ति रहे, उसे समानाधिकरण तत्पुरुष या कर्मधारय समास कहते हैं। जैसे—*पीतवस्त्र* (पीला कपड़ा), *नीलाम्बर* (नीला अम्बर) *चन्द्रमुख* (चन्द्र सदृश मुख) यहां पर प्रथम दो उदाहरणों में विशेष्य-विशेषण भाव हैं और तृतीय उदहारण में उपमान-उपमेय भाव है।

जिस कर्मधारय में सम्बन्ध बताने वाले मध्य के पद का लोप हो जाता है, उसे मध्यम पद लोपी समास कहते हैं। जैसे—*घृतान्न* (घृत मिश्रित अन्न), *दहीबड़ा* (दही में डूबा हुआ बड़ा)।

द्विगु

जिस समास में प्रथम खण्ड संख्यावाचक हो और जिससे किसी समुदाय का बोध होता हो, उसे द्विगु समास कहते हैं। जैसे—

त्रिभुवन (तीन भुवनों का समूह), *त्रिलोकी* (तीनों लोकों का समाहार), *पञ्चवटी* (पांच बटों-बड़ों का समूह), इसी प्रकार *सतसई*, *दोपहर*, *पंसेरी* ।

द्वन्द्व

जिस समास में सभी खण्ड प्रधान होते हैं एवं विग्रह करने पर जिसमें 'और' अथवा इसके समानार्थक अव्यय लगते हैं, उसे द्वन्द्व समास कहते हैं। जैसे—*पापपुण्य* (पाप और पुण्य), *अन्नजल* (अन्न और जल), *दालरोटी* (दाल और रोटी)। द्वन्द्व समास में समस्त पदों का लिंग प्रायः अन्तिम खण्ड के अनुसार होता है, परन्तु यदि पूर्व खण्ड प्रधान या श्रेष्ठ हो तो उसके अनुसार ही लिंग का प्रयोग होता है। जैसे *सागरोटी खाई*, *राजा रानी आए*।

बहुब्रीहि

जिसमें अन्य पद प्रधान होता है उसे बहुब्रीहि कहते हैं। इसमें प्रथम या द्वितीय कोई भी खण्ड प्रधान नहीं होता अपितु समस्त शब्द अपने पदों से भिन्न किसी अन्य पद का विशेषण होता है। जैसे—*पीताम्बर*, पीत पीले हैं अम्बर-वस्त्र जिसके (कृष्ण), *दशग्रीव* (दस हैं ग्रीवाएं जिसकी) रावण का विशेषण है। *चतुर्मुख* (चार हैं मुख जिसके) ब्रह्मा का विशेषण है।

बहुब्रीहि और कर्मधारय में अन्तर—इन दोनों में यह अन्तर है कि कर्मधारय समास में तो समस्त पद का प्रथम खण्ड द्वितीय खण्ड का विशेषण होता है, परन्तु बहुब्रीहि समास में सम्पूर्ण समस्त पद ही अपने पदों से भिन्न किसी अन्य पद का विशेषण या वाचक होता है—

समास का विचार करते हुए हमें इस बात का ध्यान रखना चाहिये कि समास का प्रयोग बहुत अंश तक वक्ता की इच्छा पर निर्भर

करता है और वक्ता की इच्छानुसार अर्थभेद हो जाने से समासभेद हो जाता है। जैसे—

नीलकण्ठ	नीलकण्ठ	कर्मधारय
नीलकंठ	नीला है कण्ठ जिस का	बहुव्रीहि
लालकुर्ती	लालकुर्ती	कर्मधारय
लालकुर्ती	लाल है कुर्ती जिस की	बहुव्रीहि

अभ्यास

१ समास और विग्रह में क्या अन्तर है ?

२ समास कितने हैं ? प्रत्येक का लक्षण और दो-दो उदाहरण लिखो।

३ तत्पुरुष समास के कितने भेद होते हैं और क्यों ?

४ मध्यमपदलोपी समास किसे कहते हैं ? उदाहरण देकर समझाओ।

५ समास और सन्धि में क्या अन्तर है ?

६ नीचे लिखे शब्दों का विग्रह करो एवं समास का नाम बताओ—
परमात्मा, नरेश, फलफूल, पुरुषोत्तम, राजपुरुष, दण्डभय, व्यवहार-कुशल, दशकन्धर, कनफटा, कमचोर, कृष्णार्पण, ईश्वरदत्त, अमृतधारी, गंगाजल, कनफोड़ा, ग्रंथकार, चिड़ीमार, सचझूठ, भलामानस, पवित्रकीर्ति, मार्गव्यय, महारानी, अपुत्र, चतुर्भुज, निर्धन, पतझड़, त्रिलोकी, नरनारी, दालभात, अठन्नी, गोबर-गणेश, मूलचन्द्र, चन्द्रमुख, वाचस्पति, चक्रपाणी, घनश्याम, आपबीती, आजन्म, धड़ाधड़, मृगलोचन, दुरंगा।

पंचदश–प्रकरण

सन्धि

दो वर्णों के परस्पर मिलने से जो विकार उत्पन्न हो जाता है उसे सन्धि कहते हैं। जैसे—हिम+अंशु = हिमांशु। यहां पर 'हिम' के अन्त्य 'अ' और अंशु के आदि 'अ' को मिलाकर दीर्घ 'आ' हो गया। इसी प्रकार तद्+मात्रा=तन्मात्रा, दुः+कर=दुष्कर। यहाँ प्रथम उदाहरण में 'द्' को 'न्' और द्वितीय में विसर्ग को 'ष' हो गया है। इस परिवर्तन को सन्धि कहते हैं।

सन्धि तीन प्रकार की होती है—(१) स्वरसन्धि, (२) व्यंजन-सन्धि, और (३) विसर्ग सन्धि।

स्वर सन्धि

जिस सन्धि में स्वर के पश्चात् दूसरा स्वर आता है और दोनों स्वरों के स्थान पर एक नया स्वर आ जाता है, उसे स्वर सन्धि कहते हैं।

(१) यदि एक प्रकार के स्वर के पश्चात् उसी प्रकार का दूसरा स्वर आ जाय तो उन दोनों के स्थान में उसी स्वर का दीर्घ स्वर हो जाता है:—जैसे, देव+आलय, दोनों में अ और आ को मिलाने से क्रमशः देवालय और वाचनालय शब्द बनते हैं। अन्य उदाहरण—नदी+ईश=नदीश। इस सन्धि को दीर्घसन्धि कहते है।

(२) यदि अ या आ के बाद इ या ई आजाय तो दोनों के स्थान पर 'ए' हो जाता है। जैसे—गणेश, गण+ईश, यहाँ अ और ई दोनों को मिला कर 'ए' आजाने से गणेश बन गया। अन्य उदाहरण—सुरेश, धर्मेन्द्र, महेश।

यदि अथवा आ के बाद उ या ऊ आए तो दोनों को मिला कर ओ हो जाता है। जैसे, भाग्योदय, भाग्य+उदय; अ और उ को मिला कर ओ हो गया। इसी प्रकार गंगा+उदक और नव+ऊढा के क्रमशः गंगोदक और नवोढा रूप बनते हैं।

यदि अ और आ के बाद ऋ आवे तो दोनों के स्थान पर अर् हो जाता है। जैसे—देव+ऋषि और महा+ऋषि में क्रमशः अ और ऋ को तथा आ और ऋ को मिला कर अर् हो जाने से देवर्षि और महर्षि रूप बनते हैं।

उपर्युक्त तीनों प्रकार की सन्धि को गुण सन्धि के नाम से पुकारते हैं। इसमें होने वाले विकार ए ओ तथा अर् हैं।

(३) यदि अ अथवा आ के बाद ए अथवा ऐ आये तो दोनों के स्थान पर ऐ हो जाता है। जैसे—मत+एक्य, इस प्रयोग में अ और ए को मिला कर ऐ हो जाता है और इस प्रकार मतैक्य यह रूप बनता है।

यदि अ और आ के बाद ओ अथवा औ हो तो दोनों के स्थान पर औ हो जाता है। जैसे—परम+औषध और महा+औषध के स्थान पर क्रमशः परमौषध और महौषध रूप बनते हैं। इस सन्धि को वृद्धि कहते हैं।

यदि अ अथवा ई के पश्चात् कोई स्वर आवे तो ई के स्थान पर य हो जाता है।

प्रति+एक=प्रत्येक, इति+आदि=इत्यादि

उ और ऊ के पश्चात् किसी स्वर के आने पर व हो जाता है। जैसे—सु+आगत और मनु+आदि के स्थान में क्रमशः स्वागत और मन्वादि शब्द बनते हैं।

ऋ के पश्चात् यदि कोई स्वर आवे तो ऋ के स्थान पर र् हो जाता है। जैसे—भ्रातृ+अनुमति = भ्रात्रनुमति।

ए, ऐ, ओ, औ के पश्चात् यदि कोई स्वर आजाए तो इन के स्थान पर क्रमशः अय्, आय्, अव्, आव् हो जाते हैं। जैसे—

ने + अन = नयन गै + अक = गायक

गो + ईश = गवीश पौ + अक = पावक

पो + अन = पवन

ए और ओ के बाद अ हो तो उसका लोप हो जाता है। जैसे—ते + अपि = तेऽपि, मनो+अनुकूल = मनोऽनुकूल। संस्कृत में लिपि की स्थिति प्रकट करने के लिए 'ऽ' यह चिन्ह लगाया जाता है पर हिन्दी में सर्वत्र इसका प्रयोग नहीं किया जाता।

व्यंजन सन्धि

जब व्यंजन के पश्चात् किसी व्यंजन अथवा स्वर के आने के कारण जो विकार होता है उसे व्यंजन संधि कहते हैं। जैसे—जगत्+नाथ = जगन्नाथ, दिक्+अम्बर = दिगम्बर, इन दोनों उदाहरणों में त और क के स्थान में क्रमशः न और ग हो जाते हैं।

किस वर्ण के पश्चात् कौन सा वर्ण आने पर क्या विकार हो जाता है उसके लिए कुछ संक्षिप्त नियम नीचे दिए जाते हैं :—

(१) सकार के आगे च आवे तो स् को ष् और तवर्ग के आगे चवर्ग आवे तो तवर्ग का रूप भी चवर्ग जैसा बन जाता है। जैसे—दुस् + चरित = दुश्चरित्त ; उत् + चारण = उच्चारण, उत् + ज्वल = उज्ज्वल।

(२) सकार या तवर्गीय वर्णों के पश्चात् षकार या टवर्गीय अक्षर आये तो सकार को षकार और तवर्गीय के स्थान पर उसी क्रम से टवर्गीय अक्षर आ जाता है। जैसे—दुस् + त = दुष्ट, उत् + डयन = उड्डयन।

(३) यदि त और श का प्रयोग एक ही स्थान पर आ जाये तो त को च और श को छ हो जाता है—सत्+शास्त्र = सच्छास्त्र।

(४) यदि त और ल का प्रयोग एक स्थान पर हो जाये तो त के स्थान पर ल हो जाता है—उत् + लास = उल्लास।

(५) यदि छ से पहले ह्रस्व स्वर हो तो दोनों के बीच में च का आगम हो जाता है—परि+छेद = परिच्छेद, अनु+छेद = अनुच्छेद।

(६) क, च, ट, त, प, से परे किसी स्वर के होने पर या वर्गों के तृतीय, चतुर्थ वर्ण अथवा कोई अन्तस्थ वर्ण (य, र, ल, व) हो तो क को ग, च को ज, ट को ड, और प को ब हो जाता है। जैसे—

दिक् + अम्बर = दिगम्बर
दिक् + गज = दिग्गज
षट् + रिपु = षड् रिपु = षड्रिपु
षट् + दर्शन = षड् दर्शन
कृत् + अन्त = कृदन्त

(७) यदि किसी वर्ग के प्रथम अक्षर के पश्चात् अनुनासिक वाला वर्ण हो तो उस प्रथम अक्षर को उसी वर्ग का अन्तिम अक्षर हो जाता है। जैसे—

वाक् + मय = वाङ्मय
षट् + मास = षण्मास
जगत् + नाथ = जगन्नाथ
दिक् + नाग = दिङ्नाग

(८) म के पश्चात् यदि स्पर्श वर्ण हो तो उसी वर्ग का अनुनासिक अक्षर या अनुस्वार हो जाता है—

सम् + योग = संयोग (२) सम् + वाद = संवाद
(३) सम् + शय = संशय (४) सम् + सार = संसार।

हलन्त म के पश्चात् यदि कोई स्वर हो तो म स्वर में मिल जाता है और उसमें किसी प्रकार का विकार नहीं होता—

सम् + आचार = समाचार

(६) र या ष से परे न होने पर अथवा बीच में स्वर, कवर्ग पवर्ग, य, र, व और ह की रुकावट होने पर भी न को ण होजाता है—

परि+नाम=परिणाम (२) विष्+नु=विष्णु (३) प्रमा+न=प्रमाण

(१०) इ, ई, उ, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, से परे यदि स हो तो प्रायः उसके स्थान पर ष हो जाता है। (१) वि + सम = विषम, (२) अभि + सेक = अभिषेक, (३) सु + सुप्ति = सुषुप्ति। कुछ स्थानों पर स ज्यों का त्यों रह जाता है, उसमें किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं होता :—

(१) अनु + सार = अनुसार (२) वि + स्मरण = विस्मरण

(११) सकारान्त शब्दों के अन्तिम स का लोप हो जाता है, चाहे कोई वर्ण परे हो या न हो। जैसेः-

मनस् = मन (२) यशस्=यश (३) तपस् = तप।

विसर्ग सन्धि

विसर्ग के साथ स्वर या व्यंजन के संयोग को विसर्ग संधि कहते हैं। विसर्ग के पहले किसी न किसी स्वर का होना अनिवार्य है। उसके पीछे चाहे कोई स्वर आये अथवा व्यंजन। संक्षेप से विसर्ग सन्धि में विसर्ग से पहले और पिछले दोनों रूपों का विचार करना होता है। विसर्ग सन्धि के मोटे मोटे नियम इस प्रकार है—

(१) यदि विसर्ग से पहले अ हो और बाद में भी अ हो तो पहले अ और विसर्ग के स्थान में ओ हो जाता है तथा दूसरे अ का लोप हो जाता है। इस लोप वाले अ की सत्ता दिखाने के लिए ऽ इस

चिन्ह का प्रयोग किया जाता है । जैसे—यशः + अधिकार = यशोऽधिकार (२) तेजः + असि = तेजोऽसि ।

(२) यदि विसर्ग से पहले अ हो तथा बाद में कोई घोष व्यंजन हो या तीसरा, चौथा, पांचवां वर्ण हो अथवा य, र, ल, व, ह हो तो अ और विसर्ग दोनों के स्थान में ओ हो जाता है । जैसे—

मनः + हर = मनोहर, मनः + रथ = मनोरथ, पयःनिधि = पयोनिधि, तपः + वन = तपोवन ।

(३) यदि विसर्ग से पहले अ, आ को छोड़कर कोई दूसरा स्वर हो तो विसर्ग के स्थान पर र् हो जाता है । जैसे—

दुः+गुण = दुर्गुण, निः+गुण = निर्गुण, दुः+दशा = दुर्दशा ।

(४) यदि विसर्ग के पहले अ हो और बाद में कोई दूसरा स्वर हो तो विसर्ग का लोप हो जाता है तथा फिर किसी प्रकार की सन्धि नहीं होतीः—

अतः + एव = अत एव, यहाँ अ और ए को मिलाकर स्वरसन्धि नहीं होती ।

(५) विसर्ग के पश्चात् च या छ होने पर विसर्ग को श हो जाता है, ट या ठ परे होने पर ष हो जाता है, तथा त या थ परे होने पर स् हो जाता है । जैसे—

निः+चिन्त = निश्चिन्त, निः + छल = निश्छल, धनुः+टंकार = धनुष्टंकार, दुः+तर = दुस्तर, मनः+ताप = मनस्ताप ।

(६) श, ष तथा स परे होने पर विसर्ग के स्थान में वैकल्पिक रूप से वही (परे वाला) हो जाता है । जैसे—दुः+शासन = दुश्शासन ।

विसर्ग के पहले ई या ऊ हो और पीछे क, ख, प, फ हो तो विसर्ग के स्थान में ष् हो जाता है । जैसे—दुः+काम = दुष्काम, निः+फल = निष्फल, दुः+प्रकृति = दुष्प्रकृति, निः+पाप = निष्पाप ।

(७) यदि विसर्ग के पहले कोई ह्रस्व स्वर हो और पीछे रेफ़ हो तो विसर्ग के स्थान पर र हो जाता है और र का लोप होकर पहले ह्रस्व स्वर के स्थान में दीर्घ स्वर हो जाता है। जैसे—निः+रस= निर् रस, नीर्+रस=नीरस, निः+रोग=निर् रोग, नीर्+रोग= नीरोग।

अभ्यास

१ सन्धि किसे कहते हैं ?

२ सन्धि कितने प्रकार की हैं ?

३ सन्धि का क्या कार्य है ?

४ स्वर सन्धि के कितने भेद हैं ?

५ अयादि और गुण सन्धि किसे कहते हैं ? उदाहरण देकर समझाओ।

६ निम्नलिखित शब्दों का सन्धि विच्छेद करके उनके भेदों को बताओः—

गणेश, निजेच्छा, मदिरालय, भोजनालय, अत्यधिक, मुनीश्वर, भगवद्भक्ति, उद्गार, तल्लीन, उच्छ्वास, भास्कर, छन्दोऽलंकार, निस्तार, निस्सन्देह, अन्वित, दुष्प्राप्य, उज्ज्वल, दिगम्बर, सच्चिदानन्द, यशोभिलाषी, संचय, सद्धर्म, शरच्चन्द्र, निश्चिन्त, रवीन्द्र, नीरव, राजर्षि, भारतेन्दु, अत्यावश्यक, तृष्णा, स्वेच्छा, उपर्युक्त, शरदिन्दु, नवेन्दु।

निम्नलिखित शब्दों में सन्धि करोः—

भाव+उदय, प्रति+उत्तर, स्व+छन्द, रीति+अनुसार, तत्+हित, यशः+दा, सु+आगत, अन्+अन्तर, चेतः+हर, प्रायः+चित, सत्+शास्त्र, भानु+उदय, चरण+अमृत, देव+आलय, सर्व+ईश्वर, दिक्+विजय, उत्+शिष्ट, अतः+एव, उत् लास, तत्+मय, परम+आत्मा, तत्+लीन।

तृतीय-खण्ड

वाक्य विचार

—:०:—

षोडश-प्रकरण

क्रम और अन्वय

हमारी भाषा हमारी विचारधारा का प्रतिरूप है तथा उसका एक बहुत छोटा अंश है। जिस समय हम इस वाक्य रूपी अति छोटे अंश का विवेचन करने लगते हैं तो हमें इसमें भी कितने ही छोटे छोटे अंश मिलते हैं। ये अंश संसार की विभिन्न भाषाओं में विभिन्न क्रम से मिले रहते हैं। हिन्दी में साधारणतया पहले कर्ता, फिर कर्म और अन्त में क्रिया क्रम रहता है। जैसे—*'मोहन पानी पीता है'* इस वाक्य में कर्ता, क्रम और क्रिया इसी क्रम से हैं। परन्तु अंग्रेजी भाषा में यह क्रम बदल जाता है *Mohan drinks water* इस वाक्य में क्रिया कर्ता के बाद में आती है और कर्म क्रिया के बाद में। अत: वाक्य का एक सर्वमान्य लक्षण बनाना कठिन है। फिर भी हम कह सकते हैं कि वाक्य सार्थक शब्द का समूह है। वस्तुतः मूल ध्वनियों से वर्ण, वर्णों से पद, पदों से शब्द और शब्दों से वाक्य बनाते हैं। वाक्य में अर्थ को स्पष्टरूप से व्यक्त करने के लिए शब्दों का कोई न कोई विशिष्ट क्रम रहता है, एवं क्रम के साथ शब्दों का मेल। वाक्य विचार में मुख्य रूप से तीन बातों का विचार किया जाता है—(१) शब्दों का क्रम, (२) शब्दों का अन्वय तथा (३) वाक्य विश्लेषण।

क्रम

वाक्य में शब्द अपने अर्थ के अनुसार उचित स्थान पर रहने पर ही अपने विवक्षित अर्थ को स्पष्ट रूप में व्यक्त करते हैं। वाक्य में शब्दों को उनके उचित स्थान पर रखने का नाम ही क्रम कहा जाता है। यह क्रम प्रत्येक भाषा के अपने प्रवाह के अनुसार भिन्न २ रहता है और इसीलिए क्रम सम्बन्धी कोई विशिष्ट एवं अपवाद रहित नियम निर्धारित नहीं किए जा सकते। फिर भी विभिन्न प्रकार के वाक्य प्रयोगों को ध्यान में रखने के लिए कुछ नियम दिये जाते हैं—

(१) हिन्दी भाषा में प्रवाह के अनुसार सामान्यतया वाक्य में, जैसा कि ऊपर बताया गया है, पहले कर्ता फिर कर्म और तदनन्तर क्रिया आती है। जैसे—*राम पुस्तक पढ़ता है।*' जहाँ पर वाक्य में दो कर्म होते हैं वहां अप्रधान कर्म पहले और प्रधान बाद में आता है। जैसे—*ऋषि कण्व ने शकुन्तला को उपदेश दिया।*' यहां पर 'शकुन्तला' और 'उपदेश' दो कर्म हैं। 'उपदेश' प्रधान कर्म हैं जो कि 'शकुन्तला' के बाद में आया है। विशेषण शब्द तथा वे शब्द जिनका सम्बन्ध अन्य शब्दों के साथ होता है, पहले आते हैं। जैसे—'*योग्य विद्यार्थी अपने अध्ययन को मुख्य कर्तव्य समझते हैं।*'

(२) प्रश्नवाचक शब्द उसी शब्द से पूर्व रखे जाते हैं जिन के सम्बन्ध में कुछ पूछा जाता है। जैसे—'*सतीश क्या खा रहा है।*' यहां जिज्ञासा खाद्य वस्तु के सम्बन्ध में की जारही है। यदि इस वाक्य में प्रश्नवाचक 'क्या' को हम सतीश से पूर्व रख दें तो '*क्या सतीश खा रहा है?*' यहां पर वाक्य का अर्थ ही बदल जाएगा।

(३) करण, सम्प्रदान, अपादान और अधिकरण चारों कारक वाक्य में प्रायः कर्म से पूर्व ही आते हैं और सम्बोधन कारक

सर्वत्र प्रथम ही आता है। जैसे—'*सतीश लेखनी से लिखता है*।' (करण) '*वेद सतीश के लिए आम लाया*' (सम्प्रदान), *राम ने वृक्ष से फूल तोड़ा*' (अपादान) '*महेन्द्र टांड पर खेत देखता है*।' (अधिकरण) '*हे ईश्वर ! हमारी रक्षा करो*' (सम्बोधन) । इन सभी उदाहरणों में पांचों कारक कर्म से पूर्व प्रयुक्त हुए हैं।

(४) भी, ही, तो, भर, तक, मात्र आदि शब्द उन्हीं के अनन्तर आते हैं जिनका निश्चय कराते हैं। इसी प्रकार केवल, सिर्फ आदि शब्द जिसका निश्चय कराते हैं उनसे पूर्व आते हैं। जैसे—*मैं भी पढ़ रहा हूँ*' '*आज केवल हम चार छात्र ही क्रीड़ा में थे*।' यहां अनन्तर और पूर्व आने वाले 'भी' और 'केवल' ने अवधारण (निश्चय) कराया है।

(५) पूर्वकालिक क्रिया मुख्य क्रिया से पूर्व आती है। जैसे—*वह नहा कर गया है*।' यहां 'नहाकर' पूर्वकालिक क्रिया 'गया' मुख्य क्रिया से पूर्व आयी है।

(६) विधेय विशेषण, विशेष्य के बाद में आते हैं—'*आपकी पुस्तक सुन्दर है*' यहां 'सुन्दर' बाद में आया है। परन्तु पदवी-सूचक शब्द विशेश्य से पूर्व आते हैं—'*सर राधाकृष्णन्*', '*महामहोपाध्याय डाक्टर गंगानाथ झा*'।

यहां हमने क्रम को समझाने के लिए कुछ नियम दिए हैं। परन्तु किसी शब्द की प्रधानता बतलाने के लिए अथवा अवधारण के लिए इन नियमों का उल्लंघन भी हो जाता है—*पीटना था सतीश को, पिट गया वेद*' यहां कर्ता से पूर्व क्रिया आगयी है। '*योग्यों में अयोग्य रह कर योग्य बन जाते हैं*' यहां पूर्वकालिक क्रिया कर्ता से पूर्व आगयी है। कविता में तो कवि की इच्छानुसार सभी शब्दों का स्थान परिवर्तन होता रहता है।

अन्वय

वाक्यों में पदों का एक दूसरे से लिंग, वचन, कारक, पुरुष, काल आदि के अनुसार जो मेल कराया जाता है उसे अन्वय कहते हैं।

क्रिया का कर्ता अथवा कर्म से अन्वय—

(१) जहाँ पर कर्ता विभक्ति रहित होता है वहां क्रिया का अन्वय कर्ता के साथ होता है एवं क्रिया के लिंग, वचन और पुरुष कर्ता के अनुसार ही होते हैं। जैसे, *राम पुस्तक पढ़ता है, लड़के पुस्तक पढ़ते हैं, लड़कियां पुस्तक पढ़ती हैं।*

(२) जब कर्ता विभक्ति सहित और कर्म विभक्ति रहित होता है तो क्रिया कर्म के लिंग, वचन, पुरुष के अनुसार आती हैं। जैसे, *राम से पुस्तक पढ़ी गयी, विनय ने पुस्तक पढ़ी।*

(३) जब कर्ता और कर्म दोनों ही विभक्ति सहित होते हैं तो क्रिया अन्य पुरुष की, और एकवचन की तथा पुल्लिग की होती है। जैसे, *दुष्यन्त ने शकुन्तला को फुसलाया।*

(४) यदि वाक्य में एकवचन में एक से अधिक विभक्ति रहित कर्ता हों और वे योजक द्वारा संयुक्त हों तो क्रिया बहुवचन की होती है। जैसे, *रमेश और हरीश खेलते हैं।*

(५) यदि विभक्ति रहित बहुवचन कर्ता भिन्न भिन्न लिंगों के हों तो क्रिया बहुवचन की होगी, किन्तु उसका लिंग अन्तिम कर्ता के अनुसार होगा—उत्तरप्रदेश में प्रति वर्ष लगभग एक लाख लड़कियां और लड़के हाईस्कूल परीक्षा में बैठते हैं।

(६) जब लिंग में सन्देह होता है तो क्रिया पुल्लिग की आती है—कौन खटखटा रहा है ? 'मसूरी में तुमने क्या देखा।

संज्ञा एवं सर्वनाम का अन्वय

सर्वनाम शब्द के लिंग और वचन वही रहते हैं जिस के स्थान पर वह प्रयुक्त होता है, अर्थात् जिस संज्ञा शब्द के स्थान पर सर्वनाम शब्द का प्रयोग होता है तो उसके लिंग और वचन उस संज्ञा शब्द के अनुसार ही होंगे। जैसे, *जो पुस्तक तुमने कल साहित्य सदन से खरीदी थी, वही मैंने आज रमा के पास देखी। कुन्ती ने कहा कि मैं आज नहीं खेलूंगी।*

सम्बन्ध एवं सम्बन्धी का अन्वय

सम्बन्ध कारक के विभक्ति चिह्न में कहीं लिंग और वचन वे ही होते हैं जो सम्बन्धी के—रमेश की पुस्तकें, मोहन के ग्रन्थ, मेरा घर, तुम्हारी बगीची आदि, यहाँ पर जो लिंग सम्बन्ध शब्द का है उसी के अनुसार सम्बन्धी शब्द के कारक चिन्ह में लिंग है। प्रथम उदाहरण में 'पुस्तक' स्त्रीलिंग है अतः रमेश के आगे 'की' भी स्त्रीलिंग ही आया है। ग्रन्थ पुल्लिग है अतः 'के' पुल्लिग।

विशेष्य एवं विशेषण का अन्वय

साधारणतया विशेषण के लिंग, वचन और कारक विशेष्य के अनुसार होते हैं।* लिंग और वचन आदि के कारण विशेषण के रूपों में विकार कहाँ पर होता है और कहाँ पर नहीं, उसका विवेचन हम विशेषण के षष्ठ प्रकरण में कर चुके हैं।

---

*संस्कृत में निरपवाद रूप से इस नियम का पालन किया जाता है। यही बतलाने के लिए व्याकरण की यह कारिका प्रसिद्ध है—

यल्लिंग यद्वचनं या च विभक्तिर्विशेष्यस्य।
तल्लिंगं तद्वचनं सा च विभक्तिर्विशेषणस्य

वाक्य के भाग

ऊपर कह चुके हैं कि सार्थक शब्दों के समूह को वाक्य कहते हैं अर्थात् उच्चारण के अनन्तर जहां वक्ता का आशय समझने में कठिनता न हो। जैसे, 'सतीश अपनी पुस्तकें लेकर विद्यालय गया।' यहां पर वाक्य का अर्थ समझने में कठिनाई नहीं हो रही है। परन्तु बहुत से ऐसे स्थल होते हैं कि जहां पर अर्थ स्पष्ट नहीं होता है। जैसे, 'उसने कहा था'। यहां पर उसने क्या कहा था, यह नहीं बतलाया गया है, अतः इसका भाव स्पष्ट नहीं है। वस्तुतः शब्दों में सार्थकता होने पर भी जिसमें योग्यता, आकांक्षा और आसत्ति हो वही वाक्य ठीक माना जाता है। *

वाक्य में मुख्य रूप से दो खण्ड होते हैं—एक प्रधान और दूसरा आश्रित। प्रधान वाक्य-खण्ड स्वतन्त्र होता है और आश्रित

---

*योग्यता का अर्थ है क्षमता। यदि यह कहा जाय कि 'रमेश अग्नि से वृक्ष को सींचता है' यहां शब्दों में सार्थकता होने पर भी अग्नि में वृक्ष को सींचने की योग्यता नहीं है, अतः यह वाक्य पूर्ण नहीं कहा जायगा। आकांक्षा का अर्थ है इच्छा। सुनने वाले के हृदय में वक्ता के कथन को सुनने की उत्कण्ठा बराबर बनी रहनी चाहिये और यह तभी सम्भव है जब कि शब्दों का प्रयोग यथास्थान पर यथोचित रीति से किया गया हो। आसत्ति का अर्थ है समीपता। यदि हम अभी कहें 'राम ने' और एक घन्टे बाद 'रावण को' तथा दो घन्टे बाद 'मारा' तो सुनने वाले की समझ में इसका अर्थ नहीं आयेगा क्यों कि वाक्य के शब्दों में परस्पर मेल (समय की समीपता) नहीं है। अतः यह आवश्यक है कि वाक्य के प्रयोग में यथासम्भव इन तीनों चीजों का ध्यान रखा जाय।

वाक्य-खण्ड प्रदान वाक्य-खण्ड के आश्रित होता है। जैसे, *विपिन ने कहा कि मैं सतीश को मारूंगा*, यहां पर *विपिन ने कहा* यह वाक्य-खण्ड है अतः यह स्वतन्त्र है क्योंकि अपने भाव को स्पष्ठ करने के लिए किसी के आश्रय की अपेक्षा नहीं रखता। परन्तु दूसरा *मैं सतीश को मारूंगा* खण्ड स्वतन्त्र नहीं है। यह अपने अर्थ को स्पष्ट करने के लिए 'विपिन ने कहा वाक्य-खण्ड पर आश्रित है, अतः यह आश्रित वाक्य है।

उद्देश्य और विधेय

प्रत्येक वाक्य के दो भाग होते हैं (१ उद्देश्य और (२) विधेय। (१) जिसके विषय में कुछ कहा जाय उसे उद्देश्य कहते हैं। जैसे—*सतीश पढ़ता है*, यहां सतीश के सम्बन्ध में यह कहा गया कि वह पढ़ने का कार्य करता है। अतः इस वाक्य में सतीश उद्देश्य है।

(२) उद्देश्य के सम्बन्ध में जो कुछ कहा जाय उसे विधेय कहते हैं। ऊपर के 'सतीश पढ़ता है' इस उदाहरण में सतीश (उद्देश्य) के सम्बन्ध में कहा गया है कि वह 'पढ़ता है' अर्थात् पढ़ने की क्रिया 'सतीश' रूपी कर्ता के द्वारा सम्पादित हो रही है। यदि 'सतीश' (कर्ता) न होता तो 'पढ़ता है' (विधेय) क्रिया न हो सकती। जहाँ पर वाक्य में कर्ता और क्रिया दो ही शब्द होते हैं, वहां तो उद्देश्य और विधेय को समझने में कठिनाई नहीं होती, परन्तु बड़े वाक्यों में विद्यार्थियों को अवश्य ही निर्णय में कुछ कठिनता का अनुभव होता है। फिर भी यह ध्यान में रखना चाहिये कि बड़े वाक्यों में भी इन दोनों का ही विस्तार होता है। हम कह सकते हैं कि वाक्य में दो बातें मुख्य रहती हैं—(१) उद्देश्य और उद्देश्य का विस्तार। (२) विधेय और विधेय का विस्तार।

उद्देश्य की रचना साधारणतया चार प्रकार से हो सकती है—

(१) संज्ञा से — सतीश पुस्तक पढ़ता है।

(२) सर्वनाम से — आप पानी पी रहे हैं।

(३) विशेषण से — गुणी पूजे जाते हैं।

(४) वाक्यांश से — सत्य बोलना प्रशंसनीय है।

उद्देश्य का विस्तार

उद्देश्य का विस्तार निम्नलिखित चार शब्द-भेदों से होता है।

(१) विशेषण से—जैसे, मीठे आम सब को भाते हैं।

(२) सम्बन्धकारक से—जैसे, तुम्हारा हाथ कभी खाली नहीं रहता।

(३) समानाधिकरण से—जैसे, मैं सतीश आज प्रतिज्ञा करता हूँ।

(४) वाक्यांशसे-जैसे, मैं अपमानित होकर नहीं जीना चाहता।

विधेय का विस्तार

राम पढ़ता है, मोहन खेलता है, पानी गिरा आदि। ऐसे दो शब्दों के वाक्य में उद्देश्य की तरह विधेय में केवल एक क्रिया ही रहती है। किन्तु उद्देश्य की तरह विधेय का भी विस्तार हो जाता है। निम्न शब्द-भेदों से विधेय का विस्तार हो जाता है—

(१) यदि क्रिया सकर्मक हो तो उसके पूरक से—जैसे, विनय भोजन करता है।

(२) यदि क्रिया अकर्मक हो तो उसके पूरक से—जैसे नरेश बड़ा चतुर है।

(३) क्रिया विशेषण से—जैसे, तुम धीरे-धीरे चलो।

(४) करण, सम्प्रदान, अपादान, अधिकरण आदि कारकों से—जैसे, रमेश लेखनी से लिखता है। नरेन्द्र सतीश के लिए आम लाया है। राम घोड़े से गिर पड़ा आदि।

(४) पूर्वकालिक क्रिया या क्रियाद्योतक अव्यय से—जैसे, खाना खाकर पढ़ना। भूख के मारे मर गये।

अष्टादश प्रकरण

वाक्य के भेद

वाक्य-रचना के अनुसार वाक्य के तीन भेद होते हैं—(१) सरल, (२) मिश्र, (३) संयुक्त।

(१) सरल वाक्य

जिस वाक्य में एक उद्देश्य और एक विधेय हो उसे सरल वाक्य कहते हैं। जैसे, *'मोहन पढ़ता है'*। इसमें 'मोहन' यह एक उद्देश्य है और 'पढ़ता है' यह एक विधेय है। *'नरेन्द्र के आम पेड़ के पके हैं'* यह भी सरल वाक्य है। इसमें 'आम' एक उद्देश्य और 'पके हैं' यह एक विधेय है। 'नरेन्द्र के' और 'पेड़ के' ये उद्देश्य और विधेय के विस्तार हैं।

(२) मिश्रित वाक्य

जिस वाक्य में एक प्रधान वाक्य हो और उसके आश्रित एक या एक से अधिक उपवाक्य हों, उसे मिश्रित वाक्य कहते हैं। और उन छोटे-छोटे वाक्यों को जिनसे बड़ा वाक्य बनता है आश्रित वाक्य कहते हैं। जैसे, *'राम ने कहा कि मैं रावण को मारूंगा'* इसमें 'राम ने कहा' यह प्रधान वाक्य है और 'मैं रावण को मारूंगा' यह उसका आश्रित उपवाक्य है।

आश्रित वाक्य तीन प्रकार के होते हैं—(१) संज्ञा-वाक्य, (२) विशेषण-वाक्य, (३) क्रियाविशेषण-वाक्य।

(१) संज्ञा-वाक्य— जिस आश्रित-वाक्य का प्रयोग प्रधान-वाक्य की किसी संज्ञा के स्थान पर होता है, उसे संज्ञा-वाक्य कहते हैं। जैसे, *कौन नहीं जानता कि दुर्योधन अति दुष्ट था'* इसमें 'दुर्योधन अति दुष्ट था' आश्रित उपवाक्य है और 'जानता' क्रिया का कर्म है। संज्ञा उपवाक्य प्रायः समुच्चयबोधक शब्दों से आरम्भ होता है।

संज्ञा उपवाक्य के उदाहरण—हमारी धारणा है कि वह धर्मात्मा था। मैं नहीं कह सकता कि वह कहां है। मोहन आयेगा यह सन्देह युक्त है। क्या आप मुझे बता सकते हैं कि हरि का घर कहां है?

विशेषण उपवाक्य के उदाहरण—हम उन विद्यार्थियों की प्रशंसा करते हैं जो परिश्रमी होते हैं। वह स्थान जहां युद्ध हुआ था पानीपत में है। अध्यापक ने उसे दण्ड दिया जिसने पुस्तक खो दी थी। सोहन ऐसे व्यक्ति का पुत्र है जिसका समाज में बड़ा आदर है। जो काम तुमने किया मुझे दिखाओ।

मुझे आश्चर्य है कि यह लड़का कैसे पास हो गया जिसने साल भर खेला

	वाक्य	भेद	सम्बन्ध
१	मुझे आश्चर्य है	प्रधान वाक्य	
२	कि यह लड़का कैसे पास हो गया।	संज्ञा उपवाक्य नं० १ का आश्रित	आश्चर्य है का पूरक
३	जिसने साल भर खेला	विशेषण उपवाक्य नं० २ का आश्रित	लड़का शब्द का विस्तार विशेषण रूप से।

सम्पूर्ण वाक्य मिश्र वाक्य है।

मोहन खेलने गया, पर हरि न जा सका क्योंकि उसकी परीक्षा निकट थी।

	वाक्य	भेद	सम्बन्ध
१	मोहन खेलने गया	प्रधान वाक्य	
२	पर हरि न जा सका	प्रधान वाक्य नं० १ का समानपदी	विरोध दर्शक
३	उसकी परीक्षा निकट थी	क्रिया विशेषण उपवाक्य नं० २ का आश्रित	कारण दर्शक

सम्पूर्ण वाक्य मिल कर संयुक्त वाक्य है।

(२ विशेषण वाक्य—जिस समय कोई आश्रित-वाक्य प्रधान वाक्य की किसी संज्ञा के विशेषण का काम देता है तब उसे 'विशेषण-वाक्य कहते हैं। जैसे, 'वे लोग, जिन्हें दूसरों की कमाई का धन मिल जाता है, धन का आदर नहीं करते हैं'। यहाँ रेखांकित उपवाक्य विशेषण के रूप में आया है। विशेषण-वाक्य प्रायः जो, जिसने, जिसे, जिन्हें आदि शब्दों से आरम्भ होते हैं।

(३) क्रिया-विशेषण-वाक्य—जो आश्रित-वाक्य किसी क्रिया के विशेषण का काम देता है उसे 'क्रिया विशेषण-वाक्य कहते हैं'। जैसे, 'जब तुम खाओगे रमेश भी साथ खालेगा', 'जहां पहले कमलों के बन होते थे वहां अब एक भी फूल नहीं दीखता', 'बन्दर जैसा मनुष्य को करते देखते हैं, वैसा करने लगते हैं।' इन वाक्यों में रेखांकित वाक्य क्रमशः कालवाचक, स्थानवाचक, रीतिवाचक और परिणामवाचक क्रियाविशेषण हैं।

संयुक्त-वाक्य

जिनमें दो अथवा दो से अधिक सरल या मिश्रित-वाक्य परस्पर निरपेक्ष रूप से मिले रहते हैं, संयुक्त-वाक्य कहलाते हैं। संयुक्त-वाक्य चार प्रकार के होते हैं:—

(१) संयोजक—इनमें एक वाक्य दूसरे से योजक अव्यय के द्वारा संयुक्त रहता है। जैसे, 'तुम खाते हो और रमेश गाता है', 'मोहन पढता है और नरेन्द्र खेलता है'।

(२) विभाजक—जिन वाक्यों में एक वाक्य का दूसरे वाक्य से विरोध-मूलक भेद होता है, उन्हें विभाजक वाक्य कहते हैं। जैसे, "मैंने उसे बहुत समझाया, किन्तु वह माना ही नहीं" यहाँ उसे समझाने का उस पर प्रभाव न पड़ना भेदमूलक है।

(३) विकल्पसूचक—वे वाक्य कहलाते हैं, जिन में दो बातें कही जाँय, किन्तु स्वीकृत एक ही बात हो। जैसे, '*या तो तुम मेरी चारों पुस्तकें लौटा दो या यह एक भी रखलो*'।

(४) परिणामबोधक—जिन में एक वाक्य दूसरे का परिणाम होता हो। जैसे, '*कल हमारे यहां साहित्य-गोष्ठी होगी, आप अवश्य पधारें*।

वाक्य विग्रह

वाक्य के उद्देश्य, विधेय एवं दूसरे अंशों को पृथक् पृथक् करके दिखाने की रीति को वाक्य-विग्रह अथवा वाक्य-विश्लेषण कहते हैं। ऊपर बताये हुए तीनों ही प्रकार के वाक्यों के विग्रह की विधि नीचे दी जा रही है। छात्र को सर्वप्रथम जिस वाक्य का विग्रह करना है उसके प्रकार का निश्चय कर लेना चाहिये, फिर निम्नलिखित विधि के अनुसार उसका विग्रह करना चाहिये।

सरल वाक्य का विग्रह

सरल वाक्य का विग्रह करते समय निम्नलिखित बातें दिखानी चाहियेः—

१—उद्देश्य पद (कर्ता)।

२—उद्देश्य पद का जिन पदों के द्वारा विस्तार किया गया हो, वे पद।

३—विधेय पद (क्रिया)। यदि क्रिया पद का कोई पूरक हो तो वह भी दिखाना चाहिये।

४—विधेय का विस्तार। इसमें प्रथम यदि कर्म हो तो उसे बताना चाहिये, कर्म का यदि कोई विस्तार हो तो उसे भी साथ ही दर्शा देना चाहिये, इसके बाद क्रिया विशेषण एवं अन्य पद जिन से क्रिया का विस्तार हुआ हो, दर्शाने चाहिए।

मिश्रित वाक्य का विग्रह

मिश्रित वाक्य का विग्रह करते समय सब से पहले यह देखना चाहिये कि प्रधान खण्ड वाक्य कौनसा है और आश्रित वाक्य कौनसा। इसके अनन्तर यह दर्शाना चाहिये कि आश्रित खण्ड वाक्य संज्ञा वाक्य है, विशेषण वाक्य है या क्रिया विशेषण वाक्य। फिर प्रत्येक खण्ड का विग्रह सरल वाक्य की तरह करना चाहिये।

संयुक्त वाक्य का विग्रह

संयुक्त वाक्य का विग्रह करते हुए सर्वप्रथम जिन निरपेक्ष योजक अव्ययों द्वारा वाक्य परस्पर संयुक्त हुए हैं, उन योजकों को पृथक्-पृथक् बतलाना चाहिये, इसके बाद प्रत्येक वाक्य खण्ड का (चाहे वह सरल हो, या मिश्रित) स्पष्ट रूप से विग्रह करना चाहिये।

उदाहरण स्वरूप हम आगे तीनों प्रकार के वाक्यों का विग्रह दे रहे हैं।

सरल वाक्य का विग्रह

वाक्य	उद्देश्य		विधेय				
	कर्ता	कर्ता का विस्तार	क्रिया	क्रियापूरक	कर्म	कर्म का विस्तार	क्रिया का अन्य विस्तार
मैं बहुत दिनों से रामायण पढ़ रहा हूं	मैं		पढ़ रहा हूं		रामायण		बहुत दिनों से
सतीश ने मोहन का नदी तक पीछा किया	सतीश ने		किया		पीछा	मोहन का	नदी तक
दुर्जन व्यक्ति भी सज्जनों की संगति प्राप्त कर भद्र बन जाते हैं।	व्यक्ति	दुर्जन	बन जाते हैं	भद्र	संगति	सज्जनों की	प्राप्त कर, भी

वाक्य का विग्रह

वाक्य	वाक्य-खण्ड का भेद	योजक	उद्देश्य, विस्तार		विधेय और विधेय-विस्तार				
			कर्त्ता	कर्त्ता का विस्तार	क्रिया	पूरक	कर्म	कर्म का विस्तार	क्रिया का अन्य विस्तार
जो परिश्रम से कार्य करते हैं, वे अवश्य सफलता प्राप्त करते हैं	आश्रित खण्ड वाक्य		जो		करते हैं		कार्य		परिश्रम से
	प्रधान खण्ड वाक्य		वे		प्राप्त करते हैं		सफलता		अवश्य
जब तुम पैदा हुए थे तब मैं दो वर्ष का हूँगा	प्रधान खण्ड वाक्य		तुम		पैदा हुए थे	दो वर्ष का			जब
	आश्रित खण्ड वाक्य		मैं		हूंगा				तब
सतीश ने कहा कि मेरी बहिन मसूरी गयी है	प्रधान खण्ड वाक्य	कि	सतीश ने		कहा				
	आश्रित खण्ड वाक्य		बहिन	मेरी	गयी है		मसूरी		

वाक्य का विग्रह

वाक्य	वाक्य खण्ड के भेद	योजक	उद्देश्य एवं उसका विस्तार		विधेय तथा विधेय का विस्तार				
			कर्त्ता	कर्त्ता का विस्तार	क्रिया	पूरक	कर्म	कर्म का विस्तार	क्रिया विशेषण आदि
मैं पुस्तक दूंगा पर	सरल	पर	मैं		दूंगा		पुस्तक		प्रथम ही
आधा मूल्य प्रथम ही ले लूंगा।	सरल				ले लूंगा		मूल्य	आधा	
शेरमें प्राण-शक्ति तीव्र नहीं होती	सरल		शक्ति	प्राण	होती				शेर में, तीव्र, नहीं
इसलिये जब कोई शिकार उसकी दृष्टि से बाहर निकल जाता है	आश्रित वाक्य (क्रिया विशेषण)	इसलिए	शिकार		निकल जाता है				जब, उसकी दृष्टि से बाहर
	मिश्रित								
तब वह अपने आवास को लौट आता है।	प्रधान वाक्य		वह		लौट आता है		आवास को	अपने	तब

वाष्प जिस समय भूमि के समीप एकत्रित हो जाती है तब उसे कुहरा कहते हैं	आश्रित वाक्य (क्रिया विशेषण) मिश्रित		वाष्प		हो जाती है	एक-त्रित			जिस समय भूमि के समीप तब
			(लोग)		कहते हैं		उसे कुहरा		
और जब वह वायु में कुछ ऊपर एकत्रित होती है तब उसे बादल कहते हैं	आश्रित वाक्य (क्रिया विशेषण) मिश्रित	और	वह		होती है	एक-त्रित			वायु में कुछ ऊपर तब
	प्रधान वाक्य		(लोग)		कहते हैं		उसे बादल		

एकोनविंशति प्रकरण

पद-व्याख्या (पद-परिचय)

पद-व्याख्या का अर्थ ही पद का विशेष वर्णन होता है, जिसमें वाक्य में आए हुए शब्दों और क्रियाओं के भेद, लिंग और यथासम्भव वचन, पुरुष और काल इत्यादि का विशेष वर्णन किया जाता है तथा वाक्य के अन्य शब्दों से उसका सम्बन्ध भी बताया जाता है। पद-व्याख्या को पदान्वय, पद परिचय तथा शब्द-निरुक्ति भी कहते हैं। वाक्य में किस शब्द के लिए क्या-क्या विवरण किस प्रकार देना चाहिए, यह हम नीचे लिखते हैं—

(१) संज्ञा—संज्ञा के पदान्वय में उसका भेद, लिंग, वचन तथा कारक बताना चाहिए, साथ ही साथ क्रिया से जो सम्बन्ध हो उसका भी उल्लेख करना चाहिए।

वाक्य— राम ने भारत में अवतार लिया था।

राम—व्यक्तिवाचक संज्ञा, एकवचन, पुल्लिंग, कर्ता कारक, "लिया था" क्रिया का कर्ता।

भारत—व्यक्तिवाचक संज्ञा, एकवचन, पुल्लिंग, अधिकरण-कारक।

अवतार—भाववाचक संज्ञा, एकवचन, पुल्लिंग, कर्मकारक, 'लिया था' क्रिया का कर्म।

(२) सर्वनाम—सर्वनाम के पदान्वय में उन सभी बातों का परिचय देना होता है जो संज्ञा के पदान्वय में बताई जाती हैं। केवल पुरुष अधिक बताना होता है।

वाक्य—उन्होंने यह देशभक्ति मुझे प्रसादस्वरूप दी है।

उन्होंने—पुरुषवाचक सर्वनाम, उत्तम पुरुष, पुल्लिंग, बहुवचन (आदरार्थक होने के कारण बहुवचन बन गया है) कर्ताकारक 'दी है' क्रिया का कर्ता।

मुझे—पुरुषवाचक सर्वनाम, उत्तम पुरुष, पुल्लिंग, एकवचन सम्प्रदानकारक, 'दी है' क्रिया के लिए।

(३) विशेषण—विशेषण के पदान्वय में उसके लिंग, वचन, भेद तथा उसके विशेष्य का उल्लेख करना चाहिए।

वाक्य—भारतीयों के महान् बलिदानों से ब्रिटिशसत्ता का वज्र-हृदय दहल गया।

महान्—परिमाणवाचक विशेषण (बलिदानों की अतिशयता दिखाता है) पुल्लिंग, बहुवचन। इसका विशेष्य 'बलिदानों' है।

वज्र—गुणवाचक विशेषण (हृदय की कठोरता का द्योतन करता है) पुल्लिंग, एकवचन। इसका विशेष्य 'हृदय' है।

(४) अव्यय—अव्यय के पदान्वय में केवल उसका भेद बताना होता है। साथ ही यह भी बताना पड़ता है कि उसका सम्बन्ध किस संज्ञा या सर्वनाम से है। किन शब्दों या वाक्यों को जोड़ता अथवा विभक्त करता है, या कौन से मनोभाव का द्योतक है।

वाक्य—ओह! हत्यारे ने महात्मा गांधी को अपनी गोली का निशाना बना ही लिया।

ओह—विस्मयादिबोधक अव्यय, व्यथा प्रकट करता है।

ही—विधिवाचक क्रिया-विशेषण (निशाना बनाने का निश्चय प्रकट करता है)।

नोट—सम्बोधनकारक और विस्मयादिबोधक अव्यय का सम्बन्ध वाक्य से नहीं होता।

(५) क्रिया—क्रिया व्याकरण के सब पदान्वयों में विशिष्ट है तथा इसमें क्रिया का भेद, काल और उसका भी भेद, पुरुष, लिंग वचन आदि, उसका कर्त्ता-कर्म या पूरक से सम्बन्ध बताना चाहिए। क्रिया के पदान्वय में वाच्य का भी निरूपण करना पड़ता है।

वाक्य—नेता जी सुभाषचन्द्र ने कहा—तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा।

कहा—सकर्मक क्रिया, सामान्य भूतकाल, अन्यपुरुष, एकवचन, कर्तृवाच्य, इसका कर्त्ता "नेता जी सुभाषचन्द्र" और "तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूँगा" कर्म है।

दो—सकर्मक क्रिया, सामान्य भविष्यत्, मध्यम पुरुष, बहुवचन ('तुम' सैनिकों के एक समूह के लिये प्रयुक्त हुआ है) इसका कर्त्ता 'तुम' तथा 'खून' कर्म है।

दूंगा—सकर्मक क्रिया, संदिग्ध भविष्यत्, उत्तम पुरुष, एकवचन, 'मैं' इसका कर्त्ता है तथा 'आजादी' कर्म।

पद-परिचय की मुख्य बात उस शब्द का, वाक्य का अन्य शब्दों से सम्बन्ध दिखाना है; यदि यह सम्बन्ध न दिखाया जाय तो पदपरिचय अपूर्ण ही समझना चाहिये।

वाक्य—जो अपने वचन को नहीं पालता, वह विश्वास योग्य नहीं है।

जो—सम्बन्धवाचक सर्वनाम, 'मनुष्य' संज्ञा की ओर संकेत करता है, अन्य पुरुष, पुलिंग, एकवचन, प्रधान कर्ता कारक 'पालता' क्रिया का।

अपने—सर्वनाम, निजवाचक, 'जो' सर्वनाम की ओर संकेत करता है, अन्यपुरुष, एकवचन, सम्बन्धकारक, सम्बन्धीशब्द 'वचनको'।

बचनको—संज्ञा, भाववाचक, पुलिंग, एकवचन, कर्मकारक, 'पालता' सकर्मक क्रिया से अधिकृत।

नहीं—क्रियाविशेषण, निषेधवाचक, विशेष्य 'पालता' क्रिया।

पालता—क्रिया, सकर्मक, कर्तृवाच्य, निश्चयार्थ, सामान्य वर्तमान काल, अन्यपुरुष, पुलिंग, एकवचन, 'गो' कर्ता से अन्वित, 'वचनको' कर्म पर अधिकार, कर्तरि प्रयोग।

वह—सर्वनाम, निश्चयवाचक, 'जो' सर्वनाम की ओर संकेत करता है, अन्यपुरुष, पुलिंग, एकवचन, प्रधानकर्ता, 'है' क्रिया का।

विश्वासके—संज्ञावाचक, पुलिंग, एकवचन, सम्बन्धकारक, सम्बन्धीशब्द 'योग्य'।

योग्य—विशेषण, गुणवाचक, विशेष्य 'वह', पुलिंग, एकवचन, विधेयविशेषण।

नहीं—क्रियाविशेषण, निषेधवाचक, विशेष्य 'है'।

है—स्थितिबोधक, अकर्मक, अपूर्ण क्रिया, कर्तृवाच्य, निश्चयार्थ, सामान्य वर्तमानकाल, अन्य पुरुष, पुलिंग, एकवचन 'वह' कर्ता से अन्वित, कर्तरि प्रयोग।

अभ्यास

(१) पदान्वय किसे कहते हैं तथा इसकी क्या विशेषता है ?

(२) क्रिया, अव्यय, तथा विशेषण के पदपरिचय करो ?

(३) निम्नलिखित वाक्य में संज्ञा और सर्वनाम का पदपरिचय करो:—

(क) मोहन ! तुम नहीं जानते कि आज गांधी जयन्ती है।
हमको स्थान स्थान पर आन्दोत्सव मनाना चाहिये।

(ख) मैंने कहा—वाह ! जवाहरलाल कुशल राजनीतिज्ञ हैं।

(४) निम्नलिखित वाक्यों का सम्पूर्ण पद परिचय करो :—

(क) भारत आज स्वतन्त्र है। (ख) माननीय नेहरू भारत के प्रधानमन्त्री हैं।

(ग) गांधी जी का त्याग तथा बलिदान अनुपम है।

विंशति प्रकरण

वाक्य-संकोचन और वाक्य-विस्तार

पिछले प्रकरण में हमने वाक्य के निर्माण और प्रकार पर विचार किया है। इस प्रकरण में हम वाक्य के संकोचन और विस्तार पर विचार करेंगे। बड़े वक्तव्य को संक्षिप्त करने का नाम 'संकोचन' है और अतिसंक्षिप्त बात को कुछ बढ़ा कर कहने को 'विस्तार' कहा जाता है। इसके लिये निश्चित नियम नहीं बनाये जा सकते। यह अपने अपने अभ्यास और आवश्यकता पर निर्भर है। बहुत से स्थलों पर हमें अपनी बात को बढ़ा कर कहने की आवश्यकता होती है और दूसरे स्थान पर संक्षिप्त करके कहने की।

वाक्य-संकोचन

दो या दो से अधिक पदों के स्थान में बिना भाव और अर्थ को परिवर्तित किये एक या थोड़े शब्दों का प्रयोग वाक्य-संकोचन कहलाता है। यह संकोचन कई प्रकार से किया जाता है—

(१) मिश्रित एवं संयुक्त वाक्यों को सरल वाक्यों में परिवर्तित करने से। जैसे—

रमेश ने भोजन किया और घर को चला गया		(संयुक्त)
रमेश भोजन करके घर को चला गया	...	(सरल)

हनुमान अकेले थे तब भी उन्हों ने राक्षसों के साथ
खूब युद्ध किया (संयुक्त)

अकेले होते हुए भी हनुमान ने राक्षसों के साथ
खूब युद्ध किया
हनुमान ने अकेले ही राक्षसों से खूब युद्ध किया } (सरल)

रमेश ने कहा कि मैं सर्वथा निर्दोष हूं .... (मिश्रित)

रमेश ने अपने को सर्वथा निर्दोष बताया ... (सरल)

नगर समिति का यह नियम है कि जो नगर के
निषिद्ध प्रदेश में जायगा वह पकड़ा जायगा (मिश्रित)

नगर-समिति के नियमानुसार निषिद्ध प्रदेश में
जाने वाला पकड़ा जायगा (सरल)

सतीश तब तक पुस्तक नहीं देगा जब तक कि
उसे बाध्य न कर दिया जाय (मिश्रित)

सतीश बाध्य किये जाने पर ही पुस्तक देगा (सरल)

(२) उपसर्ग एवं प्रत्ययों के योग तथा समास से :

अच्छे आचरण वाले	...	...	सदाचारी
जो दान करते रहे	...	...	दानी
जो केवल दुग्ध पीता हो	...	....	दुग्धाहारी
जब तक जीता रहे	...	...	आजीवन
जिसके अन्दर दया हो	...	...	
जो धर्म के अनुसार आचरण करता हो		...	धार्मिक
जो प्रति तीन महीने बाद होता हो		...	त्रैमासिक
जो वर्ष के बाद होता हो		...	वार्षिक
जो सप्ताह के बाद होता हो	...	...	साप्ताहिक
जो व्याकरण अच्छी प्रकार से जानता हो		...	वैयाकरण

जिसे किसी बात को जानने की इच्छा हो	...	जिज्ञासु
जो मुक्त होने की इच्छा करता हो	...	मुमुक्षु
जिसकी तुलना न हो सके ...	...	अतुलनीय
जिसके पास धन न हो ..	...	निर्धन
जिसे लज्जा न हो ..	...	निर्लज्ज
जिनके चार मुख हों ..	...	चतुर्मुख
जिसकी सहस्र भुजायें हों ...	...	सहस्रबाहु
शक्ति के अनुसार ...	...	यथाशक्ति

वाक्य-विस्तार

वाक्य-विस्तार वाक्य-संकोचन से ठीक विपरीत है। संकोचन में तो अधिक शब्दों के स्थान में न्यून शब्दों का प्रयोग किया जाता है, परन्तु विस्तार में न्यून शब्दों द्वारा प्रकाशित अर्थ को बहुत से शब्दों में व्यक्त किया जाता है। इसके लिये भी उन्हीं प्रकारों का प्रयोग किया जाता है जिनका वाक्य-संकोचन में किया जाता है। कुछ उदाहरण नीचे दिये जा रहे हैं—

(१) सरल वाक्यों को संयुक्त एवं मिश्रित वाक्यों में परिवर्तित करना—

विश्व गांधी जी की सर्वप्रियता का कारण जानता है। [सरल]

विश्व जानता है कि गांधी जी क्यों सर्व प्रिय थे। [मिश्रित]

मोहन मेरे अध्ययन-कक्ष को जानता है। [सरल]

जहां मैं अध्ययन करता हूं उस कमरे को मोहन जानता है। [मिश्रित]

सतीश और उसका भाई कलकत्ता गये हैं [सरल]

सतीश कलकत्ता गया है साथ साथ ही उसका भाई भी गया है। [संयुक्त]

(२) समस्त पदों का विग्रह कर देना और उपसर्ग तथा प्रत्यय का अर्थ पृथक् पृथक् पदों में व्यक्त कर देना—

अदृश्य	जो देखा न जा सके ।
विषैला	जिसमें विष भरा हो ।
शैव	जो शिव का उपासक हो ।
अनादि	जिसका आदि न हो ।
निष्कपट	जिसमें कपट न हो ।
दुष्कर	जो करना कठिन हो ।
अपार	जिसका पार न हो ।
सुकर	जिसका करना सरल हो ।

एकविंशति-प्रकरण

विरामचिन्ह

जब हम बातचीत करते हैं या कोई व्याख्यान देते हैं तो लगातार बोलते ही नहीं रहते, अपितु बीच बीच में रुक भी जाते हैं। इस उदाहरण के अनुसार लिखित भाषा में जो चिह्न लगाये जाते हैं, वे विराम-चिन्ह कहलाते हैं। बातचीत में हम किसी स्थान पर अधिक ठहरते हैं, किसी पर कम। कहीं कहीं आश्चर्य एवं भय आदि के भाव भी व्यक्त किये जाते हैं। इन सब कारणों से मुख्य विरामचिन्ह इस प्रकार हैं:—

(१) पूर्ण विराम	(।)	Full Stop
(२) अल्पविराम	(,)	Comma
(३) अर्ध विराम	(;)	Semi Colan
(४) विवरण चिन्ह	(:-)	Colan
(५) प्रश्न चिन्ह	(?)	Note of Interogation
(६) भाव बोधक	(!)	Note of Exclamation
(७) निर्देश चिन्ह	(—)	Dash
(८) संबन्ध ,,	(-)	Hyphen
(९) अवतरण चिन्ह	(" ")	Inverted Commas
(१०) लाघव ,,	(o)	Initial
(११) कोष्ठक	{ }	Brackets

वाक्यों में यदि इन विराम चिन्हों का प्रयोग न किया जाय तो कभी अर्थ का अनर्थ हो जाने की सम्भावना हो सकती है। बातचीत करते समय तो किसी शब्द-विशेष पर बल देने से अर्थ को स्पष्ट किया जा सकता है पर लिखित वाक्यों में इस प्रकार की सुविधा न रहने से विराम-चिन्हों का प्रयोग ही एकमात्र ऐसा साधन है जिस के द्वारा ठीक ठीक अर्थ व्यक्त किया जा सकता है। जैसे, *पकड़ो, मत जाने दो।* इस वाक्य में यदि विरामचिन्ह का प्रयोग पकड़ो के बाद किया जाय तो अर्थ होगा कि जाने वाले व्यक्ति को पकड़ लो और किसी भी तरह उसे जाने न दो। इसके विपरीत यदि विरामचिन्ह का प्रयोग मत के बाद लगाया जाय तो अर्थ होगा कि जाने वाले व्यक्ति के मार्ग में बाधा मत डालो और उसे जाने दो। इस प्रकार एक विरामचिन्ह के इधर उधर कर देने से अर्थ में किस प्रकार अन्तर आ जाता है, यह ऊपर के उदाहरण से स्पष्ट हो गया होगा। प्रत्येक विरामचिह्न का प्रयोग किस प्रकार किया जा सकता है इस के संक्षिप्त नियम नीचे दिये जाते हैं:-

पूर्ण विराम—जब वाक्य की आकाँक्षा समाप्त हो जाती है और कुछ कहने के लिये शेष नहीं रह जाता, तभी इस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है । जैसे, व्याकरण पढ़ाने का उद्देश्य भाषा को पुष्ट करना है, व्याकरण शास्त्र का आचार्य बनाना नहीं । अतएव जिस विस्तार से पुस्तक लिखी गई है वह बोधगम्य होने के लिये है, न कि मुखाग्र करने लिये ।

(अ) पद्य के द्वितीय चरण में भी इसका प्रयोग किया जाता है । जैसे,

तो डूबता भारत न यों रणरक्त पारावार में ।
ले डूबता है एक पापी नाव को मझधार में ॥

अल्पविराम—इसका प्रयोग निम्नलिखित स्थानों पर होता है :—

(अ) जहाँ बहुत से शब्दों का जमाव हो—राम, मोहन, कृष्ण और यज्ञदत्त सब एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं । जिन्हें खेलने, कूदने, गाने-बजाने और नाच-कूद से ही अवकाश न मिलता हो, वे दूसरों के दुःख दर्द को क्या समझ सकते हैं ।

नोट—और से पहले इस चिन्ह का प्रयोग नहीं किया जाता जैसा कि ऊपर के उदाहरण से स्पष्ट है ।

(ब) जहां, और तथा यह लुप्त रहते हैं । जैसे, *राम गाता गा रहा था (और) चन्द्रमोहन ऊघ रहा था ।*

(स) जहां सम्बोधन प्रकट करना हो—मोहन, क्या तुम एक बार भी मुझे क्षमा न कर सकोगे ? नहीं पिता जी, मैं अब कभी ऐसा काम नहीं करूंगा ।

साधारणतया सम्बोधन वाक्य के आरम्भ में ही आता है पर

कभी कभी भावावेश में वाक्य के बीच में भी इसका प्रयोग किया जाता है। सम्बोधन के लिये (!) यह चिन्ह लगाना अशुद्ध है।

(ड) अवतरण चिन्ह से पहले—स्वर्गीय तिलक ने नारा लगाया था, "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।"

(इ) भावों की प्रबलता प्रकट करने के लिये जब किसी शब्द को बार-बार दुहराया जाता है—बस, सोना, सोना, सोना, दिन रात इसी की रट लगी रहती है, उन्होंने झुंझलाते हुए अपनी पत्नी से कहा।

(एफ़) मिश्रित वाक्यमें आश्रित वाक्य और मुख्य वाक्य को अलग करने के लिये—यदि मुझे इसका कुछ भी आभास होता, तो मैं पहले से ही सावधान रहता।

अर्धविराम—पूर्णविराम की अपेक्षा कम और अल्पविराम की अपेक्षा अधिक विराम दिखाने के लिये इसका प्रयोग किया जाता है। जैसे, *सावन के दिनों में नन्ही नन्ही बूंदें गिर रही थीं; सब उत्फुल्ल थे; पर मेरा सर्वस्व लुट चुका था।*

विवरण चिन्ह—इसका प्रयोग उस समय होता है जब कई बातें क्रम से लिखी जांय। जैसे, *भर्तृहरि ने मनुष्य तीन प्रकार के गिनाए हैं:—उत्तम (२) मध्यम (३) अधम। भारत के राजनीति मंच पर आजकल तीन ही नेता हैं:—नेहरू, पटेल और राजेन्द्रबाबू।*

प्रश्न चिन्ह—इसका प्रयोग ऐसे स्थानों पर किया जाता है जहां किसी से कोई प्रश्न किया जाय। जैसे, *क्या सचमुच तुम खाना खा चुके ?*

भाव बोधक—जब कभी विस्मय, घृणा, भय एवं दुःख आदि विषयक भाव का प्रकाशन किया जाता है तो इस चिह्न का प्रयोग किया जाता है।

विस्मय—ओह ! मैं अब तक सोता रहा ।

घृणा—अरे ! क्या तुम भी सिर उठाने लगे हो ।

भय—ओह ! उस विकराल मूर्ति को देख कर तो मानों मेरा दम निकल गया ।

दुःख—हाय ! क्या पिता का वियोग भी इन्हीं आंखों को देखना था ।

अवतरण चिन्ह—किसी के कथन को जहां अक्षरशः उद्धृत किया जाय—नेता जी का नारा था, "दिल्ली चलो" ।

निर्देश-चिन्ह—इसका प्रयोग प्राय: निम्नलिखित स्थलों पर होता है—वार्तालाप विषयक लेखों में वक्ता के नाम के आगे जहां उसकी उक्ति आरम्भ होती है एवं 'कहा', 'बोला', 'पूछा' आदि शब्दों के आगे । जैसे—

(१) राम—'द्वारपाल'

द्वारपाल—'क्या आज्ञा है स्वामी ।'

(२) सतीश ने कहा—'मोहन इधर आओ' ।

(३) वाक्य के बीच में कोई स्वतन्त्र पद या वाक्यांश आ जाय तो उसके दोनों ओर इसका प्रयोग किया जाता है । जैसे, *मेरे पति ने—ईश्वर उनकी सदा रक्षा करे—विदेश यात्रा की है ।*

(४) अर्थ को स्पष्ट करने के लिये जहां किसी बात को दुहराना हो—जैसे, *यह उसकी एक दृष्टि पर न्योछावर है—केवल एक दृष्टि पर ।*

सम्बन्ध चिन्ह—यह दो शब्दों के बीच के सम्बन्ध को प्रकट करता है । जैसे, *राज-पुत्र के लिये यह शोभा की बात नहीं ।* कवि-

सम्मेलन की सफलता के लिये प्रचुरमात्रा में पैसा इकट्ठा होना अनिवार्य है।

लाघवचिन्ह—जहां पूरे शब्द न कह कर उनके स्थान पर संक्षिप्त रूपों का प्रयोग किया जाय, वहां इस चिन्ह का प्रयोग किया जाता है। जैसे, *महामहोपाध्याय, म० म०। गुरुकुल महाविद्यालय ज्वालापुर, गु० म० वि० ज्वा०। काशीनागरी प्रचारिणी सभा, का० ना० प्र० स०।*

कोष्ठक—उन शब्दों या वाक्यों को, कि जिनका सम्बन्ध मुख्य वाक्य से नहीं होता किन्तु वाक्य का अर्थ स्पष्ट करने के लिए आवश्यक होते हैं, इन कोष्ठकों में बन्द कर देते हैं। जैसे, *महामना मालवीय (हिन्दू विश्वविद्यालय के संस्थापक) को कौन भारतीय नहीं जानता।*

कभी कभी कोष्ठक के स्थान में निर्देशक का भी प्रयोग किया जाता है।

अभ्यास

नीचे लिखे वाक्य सन्दर्भ में विराम चिह्न लगाओ :—

महाकाल के सामने प्रतिज्ञा करता हूं भद्र तुम्हारे काव्य के लिए तुम्हारी वाणी के ओज के लिए मैं इन क्षत्रियों का ध्वंस करूंगा आचार्य विक्रमादित्य का त्याग मेरे इस जीवन का प्रकाश होगा भीमराज और कार्तिकेश्वर के शास्त्र मेरे निर्देशक होंगे कुमार शातकर्णि तुम्हारा और मान्धाता का प्रेम मेरा कवच होगा जातीय परम्परा के प्रति श्रद्धा और अनुरक्ति जो आज महात्मा काशीराज की विभूति हो रही है मेरी भी होगी।

द्वाविंशति-प्रकरण

वाक्य रचना

वाक्यों की रचना के लिये शब्दों का शुद्ध एवं ठीक क्रम ही पर्याप्त नहीं है अपितु उपयुक्त पदों, पद-समूहों एवं उनके प्रयोगों का ज्ञान भी आवश्यक है। प्रकरण के अनुसार उपयुक्त शब्द हों, अर्थ को ठीक प्रकार से व्यक्त करने वाले छोटे-बड़े पद हों, एवं मुहावरों तथा लोकोक्तियों का प्रयोग हो तो वाक्य रचना में सौंदर्य और लालित्य आ जाता है। अगले प्रकरणों में हम इन्हीं बातों का वर्णन करेंगे। किसी भाषा को अच्छी प्रकार से समझने के लिये तत्सम, तद्भव, अनेकार्थक, भिन्नार्थक, विपरीतार्थक, पर्यायवाची आदि शब्दों का ज्ञान अत्यावश्यक होता है, उपयोग के लिये इसी प्रकार की उपयोगी शब्द-सामग्री दे रहे हैं :—

तद्भव तत्सम शब्द

तद्भव	तत्सम	तद्भव	तत्सम
अन्धा	अन्ध	किवाड़	कपाट
अम्मा	अम्ब	कुल्हाड़ी	कुठार
आग	अग्नि	कुआँ	कूप
आठ	अष्ट	कौआ, काग	काक
आज	अद्य	गदहा	गर्दभ
आधा	अर्द्ध	घर	गृह
आम	आम्र	घी	घृत
आसरा	आश्रय	घोड़ा	घोटक

आँसू	अश्रु	चांद	चन्द्र
उनानवे	ऊननवति	चिड़िया	चटक
उनासी	ऊनाशीति	चून	चूर्ण
ऊंट	उष्ट्र	जग	जगत्
ओठ	ओष्ठ	जीभ	जिह्वा
काठ	काष्ठ	जेठ	ज्येष्ठ
कायर	कातर	तुरन्त, तुरत	त्वरित
थन	स्तन	मक्खी	मक्षिका
थल	स्थल	मां	माता
दस	दश	माथा	मस्तक
दीया	दीप	मीत	मित्र
धूआं	धूम्र	मुंह	मुख
नया	नव	मिट्टी	मृत्तिका
नींद	निद्रा	रोस	रोष
नून, लून	लवण	रूखा	रूक्ष
नेह	स्नेह	लाख	लक्ष, लाक्षा
नौ	नव	लोग	लोक
पक्का	पक्व	बीठ, बींठ	विष्ठा
पत्ता	पत्र	सच	सत्य
पत्थर	प्रस्तर	सरसों	सर्षप
पानी	पानीय	सलाई	सलाका
पांच	पञ्च	ससुर	श्वसुर
पाँधा; पाधा	उपाध्याय	साईं	स्वामी
पूत	पुत्र	साग	शाक
पूरा	पूर्ण	सात	सप्त

प्यास	पिपासा	सांपिन	सर्पिणी
बहिन	भगिनी	सांवला	श्यामल
बहू	वधू	सीख	शिक्षा
बात	वार्ता	सुपना, सपना	स्वप्न
ब्याह	विवाह	सुहाग	सौभाग्य
भीख	भिक्षा	सूखा	शुष्क
भौंरा	भ्रमर	सेज	शय्या
सेत, सित	श्वेत, सित	हाथ	हस्त
सौ	शत	हाथी	हस्ती
सौत, सौतिन	सपत्नी	हिय	हृदय

अनेकार्थक शब्द

अक्षर—ककार से 'क' अक्षर का बोध होता है। (वर्ण)

परमात्मा सर्वज्ञ सच्चिदानन्द, अनादि और अमर है। (अविनाशी)

अङ्क—९ का अङ्क बड़ा रहस्य-पूर्ण है। (गिनती का)

पल पल जिसको मैं अङ्क में नाथ लेके। (गोदी)

निज सकल-कु-अङ्कों की क्रिया कीलती थी। (भाग्यलेख)

अज—प्रभु अज है, सर्वशक्तिमान् हैं। (जन्म न लेने वाला)

अज की बलि देना महापाप है। (बकरा)

अम्बर—भूमि तथा अम्बर में छाया जयनिनाद है भारी। (आकाश)

कृष्ण के पीले कपड़े को पीताम्बर कहते हैं। (कपड़ा)

अर्थ—इस काम में अर्थ की प्राप्ति नहीं। (धन)

विश्व शब्द का अर्थ है संसार। (अभिप्राय)

आराम—कुछ आराम कर लो, थक गये होगे। (विश्राम)

शीला को अब तक आराम नहीं हुआ। (रोग से मुक्ति)

बहुत दङ्गा करते हो ! आराम से बैठो । (शांति)

ग्राम, धाम, आराम न छोड़े । (बाग)

उत्तर—ध्रुव तारा सदा उत्तर दिशा की ओर होता है । (दिशा विशेष)

इस प्रश्न का उत्तर शीघ्र दो । (जबाब)

और—तुम और हम युद्ध करेंगे । (तथा)

युद्ध करने वाले कोई और ही होते हैं । (बिरला, भिन्न)

कनक कनक के आभूषण अधिक मत पहिनो । (सोना)

कनक के खाने से मृत्यु तक हो सकती है । (धतूरा)

कर—आजकल कर बहुत अधिक बढ़ा दिये गये । (टैक्स)

यह काज अभी कर ? (करने की आज्ञा)

'कर' के कारण हाथी को करी कहते हैं । (सूंड)

अपने कर-कमलों से हार पहिनाये । (हाथ)

रवि-कर-निकर-प्रकाशित भूमि । (किरण)

कल—गर्मी के मारे कल नहीं पड़ती । (चैन)

मैं कल गया था । (बीता हुआ दिन)

आज की बात कल पर मत छोड़ो । (आने वाला दिन)

अब तो आटे की कल से आटा पिसवा लेते हैं । (मशीन)

कोयल की कल-ध्वनि मन मोह लेती है । (मीठी)

कहीं झरना कल-कल निनाद । (ध्वनि का अनुकरण)

काम—तुम्हें यहां क्या काम है ? (कार्य)

काम के मदन, मन्मथ आदि कई नाम हैं । (कामदेव)

काम की बात करो । (मतलब, लाभ)

प्रभु की भक्ति से मनुष्य निष्काम बनता है । (लालसा-रहित)

काल—रावण का काल आ गया । (मृत्यु)

भूत काल की बात मत करो । (समय)

ग्रहण—भिक्षा ग्रहण कर के प्रभु की भक्ति करो। (लेना)

आज चन्द्र-ग्रहण है। (परछाईं से चन्द्रमा का काला दिखना)

गिरा—गिरा, सरस्वती, वाक् आदि वाणी के नाम हैं। (वाणी)

वृक्ष से पत्ता गिरा। (गिर पड़ा)

गुण—चंचलता भी एक गुण है। (खूबी)

धनुष पर गुण चढ़ा कर तीर चलाओ। (डोरी, प्रत्यञ्चा)

गुरु—'ए' अक्षर गुरु है। (दो मात्राओं वाला)

स्वामी दयानन्द के गुरु स्वामी विरजानन्द थे। (शिक्षक)

गुरुजनों का आदर करना चाहिये। (बड़ा)

गो—गो-पालन मनुष्य-मात्र का कर्तव्य है। (गाय)

एक बालक गोस्वामी जी के दृष्टि-गोचर हुआ। (इन्द्रिय)

घट—वह तुमसे घट कर नहीं है। (कम)

घट घट बासी प्रभु को प्रणाम है। (देह, आत्मा)

कुम्हार घट बनाता है। (घड़ा)

घटा—सौ में से पचास घटा कर लिखो। (कम करना)

काली घटा छा गई। (बादल)

जड़—जड़ को पानी दो, पत्ती को सींचने से क्या ? (मूल)

जड़ और चेतन सब प्रभु के गीत गाते हैं। (अचेतन)

बड़ा जड़ व्यक्ति है ! (मूर्ख)

द्विज—द्विज वेद पढ़ें। (ब्राह्मण अथवा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य)

(पक्षी और दाँत; पर इन अर्थों में विशेषतया प्रयुक्त नहीं होता)

धातु—मंगलधातु (मैंगनीज़) बहुमूल्य होता है। (द्रव्य)

पढ़ धातु के भूतकाल के रूप लिखो। (क्रिया का मूल रूप)

धातु क्षीण होने पर मनुष्य की मृत्यु तक हो जाती है। (वीर्य)

नव—नव रस में वीर रस बहुत महत्त्वपूर्ण है। (नौ)

नवयुवकों के उत्साह का क्या ठिकाना। (नए)

नाक—कान्ता की नाक तोते के समान है। (नासिका)

इतना दिखावा न करने से नाक तो न कट जायगी ? (मान)

नाकलोक में देवता रहते हैं। (स्वर्ग)

पक्ष—वह किसी के पक्ष की बात नहीं करता। (तरफ़)

पक्ष कट जाने से पक्षी उड़ नहीं सकते। (पंख)

मास में दो पक्ष होते हैं—कृष्ण और शुक्ल। (पन्द्रह दिन)

पञ्च—बिछुड़े पंच तत्व की रचना। (पाँच)

पंचों ने मिलकर निर्णय कर दिया। (चुने हुए मुखिया)

पतङ्ग—अधिक पतंग न उड़ाया करो। (गुड्डी आदि)

पतंग दीपक पर गिरने लगे (कीट-विशेष)

भृगुकुल-कमल-पतंग आये। (सूर्य)

पत्र—यह पत्र किसने लिखा है ? (चिट्ठी)

वृक्ष से पत्र झड़ने लगे। (पत्ता)

पद—तुम परमपद पाओगे। (स्थान)

उसने गुरु के पद-कमलों में प्रणाम किया। (पैर)

बहुव्रीहि समास में कोई भी पद प्रधान नहीं होता। (शब्द)

सूरदास के पद बड़े मधुर हैं। (गीत, कविता)

पय ~~पद~~—माता के पय को लजाते हो ? (दूध)

पयोनिधि में जहाज चलने लगे। (पानी) [समुद्र]

पृष्ठ—एक पृष्ठ और पढ़ लो। (सफ़ा)

मेरी पृष्ठ पर बोझ नहीं है। (पीठ)

पानी—आँखों में पानी नहीं तो जीवन व्यर्थ है। (लज्जा)

हम पानी पीकर फिर चलने लगे। (जल)

इस मोती पर पानी नहीं। (कांति, आब)

पूर्व—पूर्वदिशा की ओर मुख करो। (दिशा-विशेष)

पूर्वकाल में ऋषि वनों में रहते थे। (पहले)

भाग—६५० को ५ पर भाग दो। (विभक्त करना, तकसीम)

सब अपना अपना भाग प्राप्त करें। (हिस्सा)

अरे ! जल्दी भाग जा। (दौड़)

भूत—भूत वास्तव में मन का डर है। (काल्पनिक जीव)

भूत की चिन्ता छोड़ कर वर्तमान की सुधि लो। (बीता हुआ समय)

मान—मान न मान मैं तेरा मेहमान। (स्वीकार करना)

बड़ों का मान करना चाहिये। (आदर)

मित्र—विपत्ति में मित्र काम आता है। (दोस्त)

मित्र की मयूखों से कमल खिल गये। (सूर्य)

रक्त—अरे ! कितना रक्त निकलता है। (लहु)

उस रक्त पुष्प को तोड़ लाओ। (लाल)

वर्ण—वर्ण व्यवस्था के क्या लाभ हैं ? (जाति)

हमने वर्ण वर्ण के वस्त्र पहने हुए थे। (रंग)

इ वर्ण स्वर है या व्यंजन ? (अक्षर)

विधि—तुमने किस विधि से परीक्षा पास की ? (ढंग)

विधि की गति को कौन जाने। (विधाता)

विहार—वे वन में विहार करते थे। (भ्रमण)

बिहार के प्रधान मंत्री ने पत्र लिखा। (देश-विशेष)

व्याज - देखा मैंने किस व्याज से इसे ठीक किया ? (बहाना)

ब्याज बहुत बढ़ गया है। (सूद)

सारंग—जलाशय में सारंग खिले हैं। (कमल)

सारंग ने चौकड़ी भर ली। (मृग)

सोना—प्रातःकाल नहीं सोना चाहिए। (नींद लेना)

भारत का सोना चांदी कम हो रहा है। (धातु विशेष)

हंस— हंस की चाल से चलो। (पक्षी)

उनका हंस परमात्मा में लीन हो गया। (आत्मा)

भिन्नार्थक शब्द

समान रूप पर भिन्नार्थ

(शब्द)	(अर्थ)	(शब्द)	(अर्थ)	(शब्द)	(अर्थ)
अचल	पर्वत	अवध	देश	कर्म	काम
अचला	पृथ्वी	अवध्य	न मारने योग्य	क्रम	सिलसिला
अतीत	बीता हुआ	अवलेह	चटनी	कलि	कलियुग
अतीव	बहुत	अवहेलना	अनादर	कली	फूल की डोडी
अदृश्य	जो न दीखे	अस्त	छिपा	कल्प	युग
अदृष्ट	भाग्य	अस्तु	अच्छा	कल्पित	ख्याली
अनल	अग्नि	असक्त	असमर्थ	करण	साधन
अनिल	वायु	आसक्त	अनुरक्त	करुण	शोकवाला
अन्न	अनाज	अंश	भाग	कांचन	सोना
अन्य	दूसरा	अंशुक	चोला	कांच	शीशा
अपमान	निरादर	आकर	खान	कुलिश	वज्र
उपमान	समान	आकार	सूरत	कुशल	चतुर
अपवर्ग	मोक्ष	आतप	धूप	कृतार्थ	सफल
पवर्ग	प, फ, ब, भ, म	आपत्	आपत्ति	कृतान्त	मृत्यु
अपर	दूसरा	उधार	ऋण	कृति	रचना
अपार	पार-रहित	उद्धार	मुक्ति	कृति	सफल
अपेक्षा	बनिस्बत	उर	छाती	गृह	घर
उपेक्षा	लापरवाही	उरु	जंघा	ग्रह	नक्षत्र

चिर	देरी	परिषद्	सभा	बिना, विना	रहित
छत्र	छाता	पिता	बाप	मत	सिद्धांत, मजहब
छात्र	विद्यार्थी	पितर	पूर्वज	मति	बुद्धि
जलद	बादल	पित्त	गर्मी	मूल	जड़, असली
जलधि	समुद्र	पीत	पीला	मूल्य	कीमत
तरणि	सूर्य			युग्ल	दोनों
तरणी	नौका	परुष	कठोर	युगम	जोड़ा
तरुणी	युवती	दश	दस	प्रकार	ढंग
क्षत	आहत	दंश	डंक	प्राकार	खाई
लात	टाँग	द्विप	हाथी	प्रणाम	नमस्कार
लक्ष	लाख	द्वीप	टापू	दीप	दीपक
परिणाम	नतीजा	लक्ष्य	उद्देश्य	दोषी	अपराधी
प्रभाव	असर	लोटना	लेटना	दोषा	रात्रि
पराभव	हार, अनादर	लौटना	वापिस आना	नग	पर्वत, नगीना
प्रमाण	सबूत	वर्ण	रंग, अक्षर, जाति	नाग	साँप, हाथी
परिमाण	भार, मात्रा	वरण	स्वीकार करना	पथ	मार्ग
प्रासाद	प्रसन्नता	वसन	कपड़ा	पथ्य	परहेज
प्रसाद	महल	व्यसन	बुरी आदत	पानी	जल
बलि	भेंट, बलिहारी	विजन	निर्जन	पाणि	हाथ
बली	बलवान्	व्यजन	पंखा	विवर्ण	रङ्ग उड़ना
समिति	सभा	सुत	पुत्र	विवरण	ब्योरा
सम्मति	सलाह	सूत	सारथी	सकल	सारा
सर	तालाब	हंस	(पक्षी)	सकल	टुकड़ा
शर	बाण	हंस	हंसना	समान	तरह
सर्ग	सृष्टि	सम्मान	आदर	स्वर्ग	देवलोक

असमान-रूप- सूक्ष्म-भिन्नार्थक

अबला, निर्बला—अबला प्रत्येक स्त्री को कहा जाता है, भले ही वह बहुत बलवती हो। निर्बला केवल बलरहित स्त्री को कहा जाता है।

अभिमान, अहंकार—सच्चे गर्व को अभिमान कहते हैं। जैसे, *जिस को न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।* झूठे घमण्ड को अहंकार कहते हैं।

अलौकिक, अस्वाभाविक—जो सामान्य मनुष्य की शक्ति से बाहर हो उसे अलौकिक कहते हैं। जैसे, *शिवाजी में अलौकिक वीरता थी।* जो प्रकृति के विरुद्ध हो उसे अस्वाभाविक कहते हैं। जैसे, *वह पागलों की भांति अस्वाभाविक बातें करता है।*

ईर्ष्या, द्वेष—ईर्ष्या का अर्थ है किसी की उन्नति देख कर जलना। द्वेष शत्रुता को कहते हैं।

उद्योग, उपाय—परिश्रम या प्रयत्न को उद्योग कहते हैं। जैसे, उद्योग करो, कुछ काम मिल ही जायगा। उपाय का अर्थ है तरीका या ढंग। जैसे, युद्ध से बचने का कोई उपाय नहीं सूझता।

कृपा, दया, अनुग्रह—किसी के लिये सहायता की भावना को कृपा कहते हैं, साधारण शिष्टाचार में भी कृपा का प्रयोग होता है। दीन-दुःखी के दुःख से पिघल जाने को दया कहते हैं। प्रसन्न होकर सहायता करने के भाव को अनुग्रह कहते हैं।

कर्म, काम—कर्म का अर्थ है कार्य और मनुष्य के किये हुए काम। तत्सम काम शब्द का अर्थ है कामदेव। कर्म का तद्भव रूप काम शब्द प्रायः कार्य अर्थ में प्रयुक्त होता है, पर सकर्मक, कर्मकारक, कर्मण्य, नित्यकर्म आदि में कर्म ही लगता है; सकाम, कामकारक, कार्मण्य, नित्यकाम आदि रूप नहीं बनते।

खेद, शोक, दुःख कष्ट—सामान्य व्यवहार में अप्रसन्नता

प्रकट करने के लिये खेद शब्द का प्रयोग होता है। जैसे, खेद से लिखना पड़ता है कि आपने अब तक घड़ी नहीं लौटाई। यहां 'शोक से' लिखना अशुद्ध है। प्रियजन की मृत्यु से उत्पन्न हुए दुःख को शोक कहते हैं। साधारण अर्थ में दुःख शब्द आता है। अधिक पीड़ा या दुःख के लिये कष्ट शब्द का प्रयोग होता है।

देखना, दर्शन करना—सामान्यता चक्षु-संयोग को देखना कहते हैं। बड़ों को देखने में या शिष्टाचार में 'दर्शन करना' प्रयुक्त होता है।

निर्णय, न्याय—निर्णय का अर्थ है फैसला, भले ही वह सच्चा हो या झूठा। जांच करके सच को सच और झूठ को झूठ प्रकट करने को न्याय कहते हैं।

पाप, अपराध—ईश्वर प्रकृति और समाज के नियमों के विरुद्ध आचारण को पाप कहते हैं। अपराध का अर्थ है राज्य-नियम के विरुद्ध आचरण।

प्रेम, स्नेह, वात्सल्य, प्रणय, श्रद्धा, भक्ति—प्रेम शब्द साधारण अर्थ में प्रयुक्त होता है। स्नेह छोटों पर होता है, मित्रता में भी स्नेह होता है। शिशु पर किये जाने वाले प्रेम को वात्सल्य कहते हैं। युवक-युवती या पति-पत्नी के प्रेम को प्रणय कहते हैं। पूज्यों, बड़ों और गुणियों में श्रद्धा होती है। भक्ति ईश्वर में होती है।

भिन्न, विपरीत—भिन्न का अर्थ है पृथक। जैसे, पढ़ना और लिखना भिन्न बातें हैं विपरीत का अर्थ है विरुद्ध, प्रतिकूल। जैसे, दुःख का विपरीत सुख है, संयोग का वियोग।

भ्रम, संदेह—भ्रम निश्चित अर्थ में आता है। जैसे उसे सांप का भ्रम हुआ है और वह डर गया है। संदेह अनिश्चय अर्थ में आता है। जैसे उसे सन्देह है कि रुपये मिलेंगे या नहीं।

मत, धर्म—कुछ व्यक्तियों के सिद्धान्त को मत या मजहब कहते हैं। मनुष्यमात्र के कर्तव्य को धर्म कहते हैं। जैसे दाढ़ी रखना मत है, सच बोलना धर्म है।

मूर्ख (मूढ़) अनभिज्ञ—नासमझ को मूर्ख या मूढ़ कहते हैं। समझदार होने पर भी जो किसी बात को न जानता हो उसे अनभिज्ञ कहते हैं। जैसे, अध्यापक महोदय हमारी लड़ाई से अनभिज्ञ थे।

वंश, बांस—वंश के दो अर्थ हैं—कुल और बांस। बांस का कुल अर्थ नहीं होता।

स्त्री, पत्नी—प्रत्येक महिला को स्त्री कहते हैं। किसी की विवाहिता स्त्री को पत्नी कहते हैं।

संज्ञा से विशेषण शब्द

(संज्ञा)	(विशेषण)	(संज्ञा)	विशेषण)
अभिमान	अभिमानी	नगर	नागरिक
मन	मनस्वी	आदर	आदरणीय
नमक	नमकीन	मोह	मुग्ध, मोहित
इच्छा	इच्छुक	यूरोप	यूरोपीय
उद्यम	उद्यमी	राज	राजकीय
एक	एकाकी	पक्ष	पाक्षिक
लोभ	लुब्ध, लोभी	नोक	नुकीला
पाप	पापी	वाक्	वाचिक
कालिमा	काला	विदेश	विदेशी
कुल	कुलीन	विरोध	विरुद्ध
कोढ़	कोढ़ी	विश्वास	विश्वस्त
गुण	गुणवान्	विष	विषाक्त, विषैला
ग्राम	ग्रामीण, ग्राम्य	पोल	पोला

शीत	शीतल	घर	घरेलू
प्रयत्न	प्रयत्नशील	शौर्य	शूर
जिज्ञासा	जिज्ञासु	प्रेम	प्रेमी
स्वर्ग	स्वर्गीय	बाहर	बाहरी
श्लेष	श्लिष्ट	त्वरा	त्वरित
बुद्धि	बुद्धिमान्	संचय	संचित
दया	दयालु	भय	भयानक
सप्ताह	साप्ताहिक	भार	भारी
समृद्धि	समृद्ध	द्वेष	द्वेषी, द्वेषपूर्ण
भारत	भारतीय	स्थान	स्थानीय
धर्म	धर्मात्मा, धार्मिक	मद	मस्त

विशेषणोंसे भाववाचक संज्ञाएं

(विशेषण)	(भा. संज्ञा)	(विशेषण)	(भा. संज्ञा)
अनुचित	अनौचित्य	खट्टा	खटाई, खटास
धुन्धला	धुन्धलापन	अज्ञ	अज्ञता
नर्म	नर्मी	अहं	अहंकार
खोटा	खोट	नम्र	नम्रता
अपना	अपनापन	गहरा	गहराई
नास्तिक	नास्तिकता	आस्तिक	आस्तिकता
गर्म	गर्मी	नीचा	निचाई
उचित	औचित्य	गुलाम	गुलामी
पण्डित	पाण्डित्य	उजला	उजलापन
उदार	उदारता	चतुर	चतुराई
प्रौढ़	प्रौढ़ता	उच्छृंखल	उच्छृंखलता
प्यासा	प्यास	बड़ा	बड़ाई

उग्र	उग्रता	चिकना	चिकनाहट
ऊँचा	ऊँचाई	चोर	चोरी
बीमार	बीमारी	कड़ा	कड़ाई
चौड़ा	चौड़ाई	बुरा	बुराई
कठिन	कठिनता	छोटा	छुटपन
बुद्धिमान्	बुद्धिमत्ता	कायर	कायरता
जड़	जड़ता	भला	भलाई
काला	कालिख	ठण्डा	ठण्डक
भूखा	भूख	कुलीन	कुलीनता
ठग	ठगी	मलिन	मालिन्य
कृत्रिम	कृत्रिमता	तीव्र	तीव्रता
मन्द	मन्दी	कृश	कृशता
तेज	तेजी	कृतघ्न	कृतघ्नता
दाना	दानाई	मित्र	मित्रता, मैत्री
कृतज्ञ	कृतज्ञता	दुर्जन	दुर्जनता
मीठा	मिठास	कंजूस	कंजूसी
दूरदर्शी	दूरदर्शिता	मूक	मूकता
मूर्ख	मूर्खता	विषम	विषमता
साधु	साधुता	मोटा	मोटाई
शिशु	शैशव	सुगम	सुगमता
लम्बा	लम्बाई	सज्जन	सज्जनता
सुजन	सौजन्य	लड़का	लड़काई
सरल	सरलता	सुन्दर	सौन्दर्य, सुन्दरता
वीर	वीरता	स्वस्थ	स्वास्थ्य
	चापलता	सर्वज्ञ	सर्वज्ञता

स्पष्ट	स्पष्टता	विजातीय	विजातीयता
सबल	सबलता	स्वतन्त्र	स्वतन्त्रता
विशेष	विशेषता	सम	समता, साम्य

विपरीतार्थक शब्द

अनुकूल	प्रतिकूल	उदार	संकीर्ण	ज्ञानी	मूर्ख
अल्प	अधिक	उन्नति	अवनति	तीक्ष्ण	कुंठित
आकाश	पाताल	उपकार	अपकार	दयालु	निर्दय
आज्ञा	अवज्ञा	उपचय	अपचय	धनी	निर्धन
आदि	अन्त	कृतज्ञ	कृतघ्न	निर्मल	मलिन
आभ्यन्तर	बाह्य	कोमल	कठोर	नूतन	पुरातन
आय	व्यय	क्रय	विक्रय	पक्ष	विपक्ष
आयात	निर्यात	गमन	आगमन	पण्डित	मूर्ख
आशा	निराशा	गहरा	छिछला	पालतू	जंगली
उत्तम	अधम	गुण	दुर्गुण	पुण्य	पाप
उत्कर्ष	अपकर्ष	चेतन	जड़	पूर्ण	रिक्त
उत्तमर्ण	अधमर्ण	जय	पराजय	प्रत्यक्ष	परोक्ष
उत्थान	पतन	जंगम	स्थावर	बलिष्ठ	निर्बल
उदय	अस्त	जीवन	मरण	मान	अपमान
मितव्यय	अपव्यय	शान्त	उद्धत, क्रुद्ध	सामान्य	विशेष
मुख्य	गौण	शीत	उष्ण	सुकर	दुष्कर
राग	द्वेष	सम	विषम	स्वतन्त्र	परतन्त्र

त्रयोविंशति प्रकरण

मुहावरे और लोकोक्तियां

विश्व की प्रत्येक भाषा में मुहावरे तथा लोकोक्तियों का एक विशिष्ट स्थान होता है। ये दोनों ही भाषा के सौन्दर्य की अभिवृद्धि करते हुए वक्ता के आशय को अधिक स्पष्ट कर देते हैं। भाषा में प्रचलित मुहावरे और लोकोक्तियों से हमें सामाजिक रीति-रिवाज तथा इतिहास के निगूढ़ तथ्यों की ओर भी संकेत मिल जाते हैं। इनके प्रयोग के सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं निर्धारित किए जा सकते। साहित्य के अध्ययन तथा शिक्षित समाज में रहने से इनके प्रयोग के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त किया जा सकता है।

जब कोई वाक्य या वाक्यांश अपने साधारण प्रचलित अर्थ को परित्याग करके किसी विशिष्ट अर्थ को प्रकट करे तो वह मुहावरा या बाग्धारा कहलाता है। जैसे—'दुष्यन्त शकुन्तला को देख कर लट्टू होगया' यहां 'लट्टू' शब्द अपना सामान्य अर्थ छोड़ कर 'रीझना' अर्थ प्रकट करता है। 'राम ने रावण के दांत खट्टे कर दिए' यहां 'खट्टा' शब्द प्रचलित अर्थ को छोड़ कर 'पराजय' रूप विशिष्ट अर्थ को व्यक्त करता है। नीचे हम कुछ प्रसिद्ध मुहावरे और लोकोक्तियां तथा उनके अर्थ देरहे हैं :—

अंगार उगलना—क्रुद्ध होकर कठोर वचन बोलना।

अंगूठा दिखाना— वस्तु देने या काम करने से इन्कार करना।

अन्त करना—मार डालना, समाप्त करना।

अन्त बिगाड़ना—परलोक बिगाड़ना।

अंधेरे घर का उजाला—एक मात्र पुत्र।

अन्धे की लकड़ी—एक मात्र आश्रय।

अक्ल का दुश्मन—मूर्ख।

अक्ल पर पत्थर पड़ना—बुद्धि भ्रष्ट होना।

अड्डा जमाना—प्रतिदिन रहने लगना। अड़ियल टट्टू—हठी।

अपना उल्लू सीधा करना—अपना मतलब निकालना।

अपना घर समझना—संकोच न करना।

अपना सा मुंह लेकर रह जाना—शर्मिन्दा होकर चुप रह जाना।

अपना राग अलापना—अपनी ही बात या बड़ाई करना।

अपनी खिचड़ी अलग पकाना—सब से पृथक रहना।

अपने पांव पर कुल्हाड़ी मारना—अपनी हानि करना।

अपने मुंह मियां मिट्ठू बनना—अपनी प्रशंसा स्वयं करना।

अबे तबे करना—अनादर से बुलाना

आंख उठा कर न देखना—परवाह न करना।

आंख खुलना—जागना। आंखें खुलना—होश आना।

आंख चुराना—सामने आने पर बचा जाना।

आंख मारना—इशारा करना। आंख लगाना—प्रेम करना।

आंखें चार होना—देखा देखी होना। आंखें दिखाना—क्रोध से देखना।

आंखें नीची होना—लज्जित होना। आंखें फेरना—बदल जाना।

आंखें बिछाना—प्रेम से स्वागत करना।

आंखों का तारा—बहुत प्यारा। आंखों में धूल झोंकना—धोखा देना।

आंखों में रात काटना—सारी रात जागते रहना।

आंखों में गिरना—आदर कम होना।

आंच न आने देना—हानि न होने देना।

आंसू पोंछना—ढारस बंधाना।

आकाश पाताल एक करना—बहुत परिश्रम करना।

आटा गीला होना—कठिनता में फंसना ।
आटे दाल का भाव मालूम होना—कठिनाई का अनुभव होना ।
आड़े हाथों लेना—खरी खरी सुनाना ।
आपे से बाहर होना—काबू में न रहना ।
आसमान पर चढ़ना—अभिमान करना ।
ईंट से ईंट बजाना—नष्ट कर देना ।
ईद का चाँद—बहुत देर बाद दर्शन देने वाला ।
उंगली पर नचाना—वश में रखना । उगल देना—भेद कह देना ।
उड़ती चिड़िया पहचानना—हृदय की बात समझ लेना ।
उधार खाये बैठना—शत्रुता के लिए तत्पर रहना ।
उधेड़बुन—सोच-विचार । उल्टी गंगा बहाना—उल्टी बात करना ।
उल्टे छुरे से मूंडना—दूसरे को बुद्धु बना कर स्वार्थ साधना ।
एड़ी चोटी का पसीना एक करना—कठोर परिश्रम करना ।
कट जाना—लज्जित होना । कमर टूटना—बल घटना, निराश होना ।
कमर कसना—तैयार होना । कल न पड़ना—चैन न पड़ना ।
कलेजे पर साँप लोटना—ईर्ष्या से जलना ।
कसौटी पर कसना—खूब जाँचना ।
कांटा दूर होना—रुकावट दूर होना, शत्रु नष्ट होना ।
काँटे बिछाना—दूसरे को हानि पहुंचाने का प्रयत्न करना ।
कान खाना—शोर करना, एक ही बात की रट लगाना ।
कान भरना—चुगली करना ।
कान पर जूं तक न रेंगना—कुछ ध्यान न देना ।
काम आना—लड़ाई में मारा जाना, उपयुक्त होना ।
काया पलटना—परिवर्तन होना । किनारा करना—पृथक् होना ।
कोरा उत्तर—साफ इन्कार । कठाई में पड़ना—संकट में पड़ना ।

खाला जी का घर—सहज काम।

खिचड़ी पकाना—गुप्त मन्त्रणाएं करना।

खून का प्यासा—मारने के लिये सदा तत्पर।

खून खौलना—जोश आना। खून सूखना—बहुत डर जाना।

खून पसीना एक करना—कठिन उद्योग करना।

खेत रहना—लड़ाई में मरना। गड़ जाना—लज्जित होना।

गड़े मुर्दे उखाड़ना—बीती हुई बातों को छेड़ना।

गत बनाना—पीटना, बहुत हंसी उड़ा कर लज्जित करना।

गर्म होना—क्रुद्ध होकर कठोर वचन बोलना।

गला घोंटना—गला दबा कर मार डालना।

गले का हार होना—बहुत प्यारा बनना।

गांठ बांधना—अच्छी तरह स्मरण रखना।

गाल बजाना—आत्म-प्रशंसा करना।

गिरगिट की तरह रंग बदलना—एक बात पर पक्का न रहना।

गुड़ गोबर कर देना—बनी बनाई बात बिगाड़ देना।

गूंगे का गुड़—ऐसा सुख जिसका वर्णन न हो सके।

घड़ों पानी पड़ जाना—बहुत लज्जित होना।

घाट घाट का पानी पीना—स्थान स्थान पर घूम घूम कर अनुभव प्राप्त करना।

घात में रहना—किसी का बुरा करने के लिये मौका ढूंढते रहना।

घाव पर नमक छिड़कना—दुःखी को और सताना।

घाव याद करना—दुःख याद करना। घी के दिये जलाना—प्रसन्न होना।

चम्पत होना—चुपचाप खिसक जाना।

चट कर जाना—समाप्त कर जाना।

चल बसना—मरना। चलता करना—टालना।

चलती गाड़ी में रोड़ा अटकाना—हो रहे काम में बाधा डालना ।
चादर से बाहर पैर फैलाना—आय से अधिक खर्च करना ।
चार पैसे होना—कुछ धन होना । चूड़ियां पहनना—कायर बनना ।
चाल चलना—धोका देने का प्रयत्न करना ।
चिकना घड़ा—जिस पर कुछ असर न हो ।
चोटी से एड़ी तक पसीना बहाना—बहुत प्रयत्न करना ।
छक्के छूटना—घबरा जाना । छाती पर मूंग दलना—दुःख देना ।
छठी का दूध याद आना—घोर संकट का अनुभव होना ।
छाती पर साँप लोटना—किसी को सुखी देखकर जलना ।
जलती आग में घी डालना—लड़ाई बढ़ाना, क्रोधित का क्रोध बढ़ाना ।
जले पर नमक छिड़कना—दुःखी को और दुखाना ।
जान देना—मरना, बहुत अधिक चाहना ।
जान पर खेलना—खुशी खुशी प्राण देना, मृत्यु की परवाह न करते हुए संकट में पड़ना ।
जान हथेली पर रखना—मरने की परवाह न करना ।
जी उचाट होना—मन न लगना । जूतियाँ चाटना—खुशामद करना ।
टका सा जवाब देना—स्पष्ट इन्कार करना ।
टपक पड़ना—अचानक आ जाना ।
टाँग अड़ाना—रुकावट डालना, बाधा देना ।
टेढ़ी उंगली से घी निकालना—चालाकी से काम निकालना ।
टेढ़ी खीर—कठिन काम । टोह लगाना—पता करना ।
डकार न लेना—चुपचाप हजम कर जाना ।
डींग मारना—अपनी झूठी बड़ाई करना ।
डूबती नैया पार लगाना—विपत्ति से छुड़ाना ।
डूबते को तिनके का सहारा—आपत्ति में थोड़ी सहायता होना ।

ढेर करना—मार डालना। तलवे चाटना—चापलूसी करना।
तानकर सोना—निश्चिन्त होकर सोना।
तार टूटना—चलता हुआ काम रुकना।
तारे तोड़ लाना—कठिन कार्य कर दिखाना।
तिल का ताड़ बनाना—जरा सी बात को बहुत बढ़ा देना।
तिल धरने की जगह न होना—बहुत भीड़ होना।
तिलों में तेल न होना—काम की आशा न होना।
तूती बोलना—प्रभाव होना। तू तू मैं मैं करना—जबानी लड़ाई करना।
तेवर बदलना—क्रुद्ध होना। थूक कर चाटना—अपने वचन से फिरना।
दबे पाँव निकल जाना—चुपचाप चले जाना।
दम भरना—अभिमान पूर्वक जिम्मेवारी लेना।
दांत खट्टे करना—हराना, नीचा दिखाना। दम के दम में—बहुत जल्दी।
दाँत गड़ाना—प्राप्त करने की ताक में रहना।
दांतों तले अंगुली दबाना—चकित होना।
दांत पीस कर रह जाना—क्रोध करके चुप रह जाना।
दाँत से दाँत बजना—बड़ी सर्दी पड़ना।
दाई से पेट छिपाना—जानकार से छिपाना।
दाने दाने को तरसना—गरीब होना।
दाल न गलना—कुछ वश न चलना।
दाल में कुछ काला होना—कोई गुप्त बात होना।
दिन फिरना—भाग्य अच्छा होना।
दिया लेकर ढूंढना—अच्छी तरह खोज करना।
दुनियाँ को हवा लगना—संसार के भले बुरे कामों में चालाक होना।
दुम दबाकर भागना—डरकर भागना।
दूध का दूध और पानी का पानी—सच-झूठ का ठीक न्याय।

दो नावों पर पैर रखना—दो का आश्रय लेना।

दौड़ धूप करना—खूब परिश्रम करना।

धज्जियाँ उड़ाना—दोष निकाल कर निकृष्ठ सिद्ध करना।

धता बताना—धोखा देना। धोखे की टट्टी—कपट वस्तु।

नमक मिर्च लगाना—छोटी बात को बढ़ाकर कहना।

नाक कटना—मान नष्ट होना। नाक भौं बढ़ाना—अप्रसन्नता।

नाक में दम करना—बहुत तंग करना। नाक रगड़ना—दीन बनना।

नाकों चने चबाना—खूब तंग करना।

नाच नचाना—इच्छानुसार काम लेना। नाम कमाना—प्रसिद्ध होना।

नाम करना—बहुत जरा सा काम करना।

नाव किनारे पर लगा देना—कार्य पूरा कर देना।

निन्यानवे के फेर में पड़ना—रुपए जोड़ने की चिन्ता में पड़ना।

पगड़ी उतारना, पगड़ी उछालना—अपमानित करना।

पट्टी पढ़ाना—बुरी सम्मति देकर सहमत कर लेना।

पत्थर की लकीर होना—अमिट होना।

परछांई से डरना—बहुत अधिक डरना। परदा डालना—छिपाना।

पहाड़ टूट पड़ना—अधिक बोझा पड़ना।

पहाड़ से टक्कर लेना—शक्तिशाली से बैर ठानना।

पाँचों घी में होना—बहुत लाभ होना।

पांव भारी होना—गर्भ रहना। पाप कटना—बन्धन दूर होना।

पानी का बुलबुला—शीघ्र नष्ट होने वाला।

पानी की तरह बहाना—लापरवाही से खर्च करना।

पानी पानी होना—अत्यन्त लज्जित होना।

पानी पी पी कर कोसना—यथेष्ट कोसना।

पानी भरना—नौकर की तरह होना। पाला पड़ना—मुकाबला होना।

पिण्ड छुड़ाना—पीछा छुड़ाना। पीठ ठोकना—साहस बढ़ाना।

पीठ दिखाना—हार कर भाग जाना।

पीठ पर होना—सहायक होना।

पीठ फेरना—उपेक्षा करना। पेट काटना—कम खाना।

पेट में चूहे दौड़ना—बहुत भूख लगना।

पैरों के नीचे से जमीन निकलना—बहुत हैरान होना या घबराना।

पोल खोलना—भेद प्रकट करना।

फूंक फूंक कर कदम रखना—सोच-विचार कर काम करना।

फूला न समाना—बहुत प्रसन्न होना।

बगुला भगत—कपटी। बगलें झांकना—उत्तर न दे सकना।

बरस पड़ना—क्रुद्ध होकर डांटना।

बाएँ हाथ का खेल—अत्यन्त सरल काम।

बात का धनी होना—प्रण का पक्का होना।

बाल की खाल उतारना—जरा सी बात की आलोचना करना।

बीड़ा उठाना—जिम्मेवारी लेना। बोलबाला होना—प्रसिद्ध होना।

भनक पड़ना—थोड़ी सी सूचना मिलना।

मक्खियां मारना—खाली रहना।

मक्खी पर मक्खी मारना—लेख की पूरी नकल उतारना।

मन खट्टा होना—मन फिर जाना। माथा ठनकना—आशँका होना।

मिट्टी का माधो—मूर्ख सीधा सादा।

मीठी छुरी होना—ऊपर से मित्र, भीतर से शत्रु होना।

मुंह की खाना—बुरी तरह हारना।

मुंह तोड़ उत्तर देना—खरा उत्तर देना।

मुंह पर हवाइयाँ उड़ना—भय या लज्जा के कारण मुंह की रंगत बदल जाना।

मुंह में पानी भर आना--ललचाना।

मुट्ठी गरम करना--घूस देना। मुट्ठी में करना--बस में करना।

मैदान मारना—जीतना। मोम होना--नर्म होना।

रंग चढ़ना--असर पड़ना।

रंग लाना—असर दिखाना। रंगा सियार—ढोंगी।

राई का पर्वत बनाना—तुच्छ बात को बढ़ा देना।

लकीर का फकीर होना—रूढ़िवादी होना। लट्टू होना—मुग्ध होना।

लहू के घूंट पीकर रह जाना—क्रोध को दबा कर रह जाना।

लम्बी चौड़ी हाँकना—डींग मारना।

लेने के देने पड़ जाना—लाभ की जगह हानि होना।

लोहा मानना—अपने से प्रबल स्वीकार करना।

लोहे के चने चबाना—बहुत कठिन काम करना।

विष उगलना—कठोर बचन बोलना।

समझ पर पत्थर पड़ना—बुद्धि नष्ट होना।

सिक्का बैठाना—धाक जमाना, प्रभाव जमाना।

सिर उठाना—विरोध में उठना।

सिर ऊंचा होना—जीत होने पर मान होना।

सिर पर चढ़ाना—उद्दण्ड को कुछ न कहना।

सिर धुनना—शोक करना, पछताना।

सिर पर आ जाना—समीप आना।

सूरज को दीपक दिखाना—प्रसिद्ध व्यक्ति का परिचय देना।

सोने की चिड़िया—बहुत लाभ देने वाली वस्तु।

हथियार डाल देना—पराजय स्वीकार कर लेना।

हवा पलटना—समय बदलना, दशा बदलना।

हवा लगना—संगति का प्रभाव पड़ना।

हवा से बातें करना—बहुत तेज चलना।

हवा से लड़ना—बिना बात के लड़ना।

हवा हो जाना—तेजी से भाग जाना। हाथ उठाना—मारना।

हाथ कटाना—लिखकर दे देना और बाध्य हो जाना।

हाथ खींचना—सहायता बन्द करना। हाथ डालना—शुरु करना।

हाथ तंग होना—खर्चने के लिए धन कम होना।

हाथ धोकर पीछे पड़ना—पूरी तरह पीछे पड़ना।

हाथ पर हाथ रख कर बैठना—खाली बैठना।

हाथ पांव फूल जाना—डर से घबरा जाना।

हाथ पांव मारना—यत्न करना। हाथ फैलाना—मांगना।

हाथ बंटाना—कार्य में सहायता देना। हाथ मलना—पछताना।

लोकोक्तियां

जैसा कि इस प्रकरण के प्रारम्भ में हम बता चुके हैं लोकोक्तियों का प्रयोग भी भाषा में एक विशेष प्रकार के सौन्दर्य को उत्पन्न कर देता है और उस से भाषा में सजीवता आ जाती है। मुहावरे और लोकोक्तियों में अन्तर के सम्बन्ध में इतना जान लेना चाहिए कि मुहावरे वाक्यांश के रूप में प्रयुक्त होते हैं और लोकोक्तियां स्वतंत्र वाक्य के रूप में। जैसे—

'राम की सेना ने रावण की सेनाके दांत खट्टे कर दिए' मुहावरा।

'झूना और वीरन परिवार बहुत सन्तोषी हैं, धन के लिए छटपटाना उनका काम नहीं। सात बीघा खेती है। उसमें उनके जीवन निर्वाह के लिए पर्याप्त अन्न हो जाता है। आनन्द से जीवन के दिन कटते जा रहे हैं। अपनी इस जीवन यात्रा में उन्हें सहायता के लिए दूसरों के आगे हाथ नहीं पसारने पड़ते और न उनके पास ही लेनदेन करने के लिए इतना अधिक धन है। ठीक प्रकार से निर्वाह होता चलता

है, न ऊधो का लेना न माधो का देना है ।"

ऊपर दिए इन दोनों उदाहरणों से मुहावरे और लोकोक्ति का अन्तर स्पष्ट हो जाता है ।

अन्त भला सो भला—जिसका परिणाम अच्छा हो वह अच्छा है ।

अंधा क्या चाहे दो आंखें—आवश्यक वस्तु अपने आप ही मिल रही हो तो और क्या चाहिए ।

अंधी पीसे कुत्ता चाटे—सीधे सादे की कमाई धूर्त उड़ाते हैं ।

अंधेर नगरी चौपट राजा, टके सेर भाजी टके सेर खाजा—प्रबन्धकर्ता के अयोग्य होने पर सब बातों में गड़बड़ी होती है ।

अन्धों में काना राजा-मूर्खों में जो साधारण व्यक्ति मान पाता है ।

अधेला न दे अधेली दे—थोड़ी वस्तु नहीं देता, फंसने पर अधिक देता है ।

अपना लाल गंवाय के दर दर मांगे भीख—अपनी वस्तुएं खोकर दूसरे के आगे हाथ फैलाता है ।

अपनी २ डफली अपना अपना राग–सबका भिन्न भिन्न मत ।

अपनी करनी पार उतरनी–अपने ही कर्मों का फल मिलता है ।

अपनी आंख का शहतीर किसी को नहीं सूझता—अपनी बुराई या भूल किसी को नहीं सूझती ।

अब पछताए क्या होत जब चिड़ियाँ चुग गयीं खेत—समय बीत जाने पर पछताने से क्या लाभ ।

आंख और कान में चार अंगुली का फर्क है—देखने सुनने में भेद है ।

आटे का चिराग घर रखूं तो चूहा खाय, बाहर रखूं तो कौवा ले जाय—किसी प्रकार भी बचाव नहीं हो सकता ।

आधी छोड़ सारी को धावे, आधी रहे न सारी पावे—अधिक लोभ से हानि होती है।

आ बैल मुझे मार—जान-बूझकर आपत्ति सिर पर लेना।

आम के आम गुठलियों के दाम—दूना लाभ।

आये थे हरिभजन को ओटन लगे कपास—कोई अच्छा काम करने आये थे, व्यर्थ काम करने लगे।

उखली में सिर दिया तो मूसलों का क्या डर—जब कठिन काम करना आरम्भ कर दिया तो रुकावटों से क्या डरना।

उतर गई लोई क्या करेगा कोई—मान नष्ट होने पर मनुष्य ढीठ हो जाता है।

उलटा चोर कोतवाल को डांटे—अपराधी अपना अपराध स्वीकार करने के स्थान पर पूछने वाले अधिकारी को धमकाता है।

ऊंची दुकान फीका पकवान—तत्व कुछ नहीं, दिखावा बहुत।

एक अकेला दो का मेला—एक से अधिक व्यक्ति होने पर ही समय आनन्द से बीतता है।

एक अनार सौ बीमार—चीज थोड़ी, लेने वाले बहुत।

एक तो करेला कडुवा दूसरे नीम चढ़ा—पहले से ही दोषयुक्त था, एक बड़ा दोष और लग गया।

एक पंथ दो काज—परिश्रम इकहरा और फल दुहरा।

एक मछली सारे तालाब को गन्दा कर देती है—एक बुरा व्यक्ति सारे कुटुम्ब, समाज या साथियों को बुरा बना देता है।

ओस चाटे प्यास नहीं बुझती—अधिक की आवश्यकता होने पर जरा सी वस्तु मिले तो कुछ लाभ नहीं होता।

कहां राजा भोज कहां गंगू तेली—एक उच्च, पर दूसरा मामूली है, दोनों की तुलना नहीं हो सकती।

का वर्षा जब कृषि सुखाने—समय बीतने पर सहायता देनी व्यर्थ है।

काला अक्षर भैंस बराबर—बिलकुल अपठित।

कुएं की मिट्टी कुएं में ही लग जाती है—जहां से आय होती है वहीं खर्च हो जाती है।

कोयलों की दलाली में मुंह काला—कुसंगति से कलंक लगता है।

खग जाने खग ही की भाषा—जो जिनके साथ रहता है उन्हीं का हाल जानता है।

खोदा पहाड़ निकली चुहिया—परिश्रम बहुत लाभ थोड़ा।

गये ऊन को लेन, पर आये बाल मुंडाय—लाभ के लिये यत्न किया था, उलटी हानि हो गई।

गंगा गये तो गंगादास जमुना गये तो जमुनादास—कच्चे विचारों वाला।

गेंहू के साथ घुन भी पिस जाता है—बड़े व्यक्ति के साथ छोटे या आश्रित व्यक्ति को भी हानि होती है।

घर का जोगी जोगना आन गांव का सिद्ध—घर के योग्य व्यक्ति का उतना मान नहीं करते जितना कि बाहर के साधारण व्यक्ति का।

घर का भेदी लंका ढावे—फूट से हानि होती है।

चिकने घड़े पर पानी नहीं ठहरता—निर्लज्ज पर असर नहीं होता।

चोर की दाढ़ी में तिनका—अपराधी व्यक्ति अन्य की बातों को भी अपनी बातें समझ लेता है और उसका भेद प्रकट हो जाता है।

छोटा मुंह बड़ी बात—अवस्था से बढ़ कर बात बनाना।

जब तक सांस तब तक आस—जीने तक आशा बंधी रहती है।

जल में रह कर मगर से बैर—एक स्थान पर रहते हुए वहां के अधिकारी से ही शत्रुता।

जस दूल्हा तस बनी बरात—जैसे मुखिया वैसे ही साथी।

जहाँ गुड़ होगा वहीं मक्खियां होंगी—गुणी के पास ही लोग आते हैं।

जहां न पहुँचे रवि वहां पहुँचे कवि—कवि बड़ी दूर की कल्पना कर लेते हैं।

जाके पांव न फटी बिवाई सो क्या जाने पीर पराई—जिसने कभी कष्ट नहीं सहा वह दूसरों के कष्ट को क्या जाने।

जाको राखे साइयां मार न सकिहै कोय—प्रभु रक्षक हो तो कोई कुछ नहीं बिगाड़ सकता।

जितने मुंह उतनी बातें—अनेक प्रकार की विपरीत बातें।

जिसकी लाठी उसकी भैंस—बलवान् ही अधिकार जमाता है।

जिसके हाथ डोई उसी का सब कोई—सब दाता के पक्ष में होते हैं।

नया नौ दिन पुराना सौ दिन—पुरानी वस्तु या पुराना व्यक्ति ही अच्छा होता है, नये का विश्वास नहीं होता।

न रहेगा बांस न बजेगी बांसुरी—न कारण रहेगा, न कार्य होगा।

नाच न जाने आँगन टेढ़ा—काम करना आता नहीं बहाने बनाता है।

नाम बड़े पर दर्शन छोटे—प्रसिद्ध बहुत, तत्व कुछ नहीं।

नौ नकद न तेरह उधार—उधार की अधिक बचत से नकद की कम बचत अच्छी।

नौ सौ चूहे खाय के बिलारी चली तप को—अनेक पाप करके पुण्य करने का दिखावा या यत्न करना।

बगल में छुरी मुंह में राम—ऊपर से मित्र भीतर से शत्रु।

बाप बड़ा न भैया सबसे बड़ा रुपैया—धनी उच्च गिना जाता है।

बिल्ली के भागों छींका टूटा—अचानक काम बन गया।

भागते चोर की लंगोटी ही सही—सारी हानि के समय जो कुछ मिल जाय या बच जाय वही अच्छा है।

भेड़ जहां जायगी वहीं मुंडेगी—सीधा व्यक्ति सब जगह ठगा जाता है।

मान न मान मैं तेरा मेहमान—हठात् गले पड़ना।

रस्सी जल गई बल न गया—हानि हो गई, पर घमंड न गया।

लातों के भूत बातों से नहीं मानते—दुष्ट लोग दण्ड के बिना काबू नहीं आते।

जैसी करनी वैसी भरनी—कर्म के अनुसार फल मिलता है।

जैसी बहै बयार पीठ पर तैसो दीजै—जैसा समय हो वैसे बन जाओ।

जो गरजते हैं वह बरसते नहीं—डींग मारने वाले कुछ करते नहीं।

ठोकर लगी पहाड़ की तोड़े घर की सील—नुकसान बाहर किसी ने किया, गुस्सा घर वालों पर उतारने लगे।

तेते पांव पसारिये जेती लांबी सौर—अपनी सामर्थ्य के अनुसार कार्य करना चाहिए।

थोथा चना बाजे घना—दिखावा अधिक, सार कुछ नहीं।

दान की बछिया के दांत नहीं देखे जाते—मुफ्त की वस्तु की जांच पड़ताल नहीं की जाती।

दिये तले अंधेरा—पास रहने पर भी अनभिज्ञ या प्रभाव-विहीन रहना।

दूध का जला छाछ फूंक फूंक कर पीता है—एक बार हानि उठाने वाला बड़ा सावधान रहता है।

दूर के ढोल सुहावने—निस्सार परन्तु आकर्षक वस्तुएं, जब तक अनुभव न हो, अच्छी लगती हैं।

देख ऊंट किस करवट बैठता है—देखें क्या परिणाम निकलता है।

धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का—दो कामों में पांव फंसाने वाला अव्यवस्थित-चित्त व्यक्ति कहीं का नहीं रहता।

न नौ मन तेल होगा न राधा नाचेगी—न असम्भव शर्त पूरी होगी, न कार्य पूरा होगा।

वा सोने को जारिए जासों टूटे कान—जिस से हानि पहुँचे उस सुन्दर वस्तु को भी त्याग देना चाहिए।

समय पाय तरुवर फलें केतिक सींचो नीर—चाहे कितना प्रयत्न किया जाय, समय आने पर ही कार्य पूर्ण होता है।

सहज पके सो मीठा होय—धीरे धीरे किया जाने वाला कार्य बड़ा फलदायक होता है।

सावन हरे न भादों सूखे—सदा एक सी दशा रहना।

सांप मरे न लाठी टूटे—दुष्ट का नाश हो जाय अथवा काम बन जाय और अपनी हानि भी न हो।

सिर मुड़ाते ओले पड़े—काम आरम्भ करते ही विघ्न हुआ।

हाथ कंगन को आरसी क्या—प्रत्यक्ष चीज के लिए प्रमाण क्या।

चतुर्विंशति प्रकरण

रचना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहते हुए मनुष्य दूसरे से ज्ञान प्राप्त करता है और मधुमक्षिका की तरह धीरे धीरे वह अपनी ज्ञान-राशि को बढ़ाता रहता है। गुरुओं से या पुस्तकों से ज्ञान प्राप्त करके ही मनुष्य विद्वान् बनता है। मनुष्य के सामाजिक प्राणी होने के नाते उसका यह परम कर्तव्य हो जाता है कि जिस परम्परा के द्वारा उसने दूसरों से ज्ञान प्राप्त किया है उस परम्परा को विच्छिन्न न होने दे एवं अपने संचित ज्ञान को दूसरों के लिए सुलभ करदे। अपने मस्तिष्क के विचारों को लिपिबद्ध करके दूसरों तक पहुँचाने का नाम ही रचना है।

रचना को हम स्थूल रूप से निम्नलिखित भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) निबन्ध (२) पत्र एवं (३) कहानी। यहां हम प्रथम दो का ही विचार करेंगे।

निबन्ध

परिभाषा—परिमित समय एवं परिमित शब्दों में किसी व्यक्ति, वस्तु, विषय अथवा घटनाविशेष पर अपने विशृङ्खल विचारों को लिपिबद्ध करने का नाम निबन्ध है।

भाषा—निबन्ध की भाषा सरल एवं स्पष्ट होनी चाहिए। ऐसे शब्दों का प्रयोग होना चाहिए जिनमें उस निबन्ध को अधिक से अधिक स्पष्ट रूप में व्यक्त करने की क्षमता हो। निबन्ध में यद्यपि भाषा के दोनों

रूप, गद्य और पद्य का प्रयोग किया जा सकता है, तथापि गद्य में ही लेखक अपने विचारों को अधिक सरलता एवं स्पष्टता से व्यक्त कर सकता है, अतः निबन्धों के लिए भाषा का गद्य रूप ही अधिक उपयुक्त है—

नियम—निबन्ध रचना के लिए किन्हीं विशेष नियमों का निर्धारण करना कठिन है, क्योंकि प्रत्येक लेखक का अपने आन्तरिक विचारों को स्पष्ट करने का ढंग भिन्न भिन्न होता है। उसके लिए निश्चित रेखाएं नहीं खींची जा सकतीं। फिर भी विद्यार्थियों को निबन्ध लिखने के लिए लेखनी उठाने से पहले नीचे लिखी बातों की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए।

(१) जिस विषय पर निबन्ध लिखना चाहते हैं, उसके सब अंगों पर पहले खूब विचार करना।

(२) निबन्ध के विषय पर उपयोगी पुस्तकों का पढ़ना।

(३) सामयिक समाचार पत्र, मासिक पत्र-पत्रिकाएं, अच्छे लेखकों द्वारा लिखे निबन्धों का अध्ययन।

(४) जिस विषय पर निबन्ध लिखना चाहते हैं, सबसे पहले स्थूल अक्षरों में शीर्षक लिखिए। फिर उस विषय पर सोचिये। सोचते समय जो बातें आवश्यक एवं उपयोगी प्रतीत हों, उनको एक कागज पर नोट करते जाइये। इतना कर लेने के बाद आप यह सोचिये कि अपने निबन्ध को आप कितने उप-विभागों में विभाजित करना चाहते हैं और प्रत्येक विभाग में क्या क्या लिखेंगे। ऐसा कर लेने से आपके निबन्ध में शृंखला बनी रहेगी तथा प्रदर्शित विचारों में भी तारतम्य बना रहेगा।

(५) निबन्ध में विचार असन्दिग्ध हों एवं भाषा के प्रवाह में स्वाभाविकता होनी चाहिए।

(६) निबन्ध में शैली का प्रमुख स्थान है। अतः लेखक को "क्या

लिखूं" इसकी अपेक्षा "कैसे लिखूं" इस पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

(७) निबन्ध की अच्छाई की परीक्षा उसके आकार से नहीं होती है। अतः बहुत विस्तार की ओर ध्यान न रख कर उसे सुन्दर एवं सारगर्भित बनाने की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए। आवश्यक बात छूटने न पाए और अनावश्यक बातें समाविष्ट न की जाएं, इसका ध्यान रखना चाहिए।

(८) यथासम्भव भाषा एवं विचारों की पुनरुक्ति से बचने का प्रयत्न करना चाहिए और साथ ही अपनी कही हुई बात का अपनी किसी युक्ति अथवा उदाहरण से पुष्टि के स्थान पर खण्डन न होने पाए।

(९) प्रयत्न कीजिए कि आपकी भाषा मंजी हुई, सुन्दर, ललित तथा मुहावरेदार हो। अपनी बात को पुष्ट करने के लिए यदि आप बीच-बीच में सूक्तियाँ एवं पद्य उद्धृत कर सकें तो आपके निबन्ध को सजाने में, सोने में सुहागे का काम करेंगे।

निबन्ध के भाग

निबन्ध को हम प्रधान रूप से तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) उपक्रम (२) उपपत्ति और (३) उपसंहार। इन्हीं को प्रस्तावना, विवेचन एवं समाप्ति भी कहा जाता है।

(१) उपक्रम—यह निबन्ध का प्रारम्भिक भाग होता है। लेखक को आरम्भ करते समय बहुत सावधानी से काम लेना चाहिए। यदि निबन्ध का आरम्भ ठीक बन गया तो पढ़ने वाले को अपनी ओर आकर्षित कर सकेगा एवं आगे का भाग भी सध जायगा। निबन्ध के आरम्भ में ही बिगड़ जाने पर संभलने को सम्भावना बहुत कम रह

जाती है। इसलिए आरम्भ बहुत आकर्षक होना चाहिए। आरम्भ करने के लिए कोई विशेष नियम नहीं हैं। आजकल प्रायः प्रतिपाद्य विषय से ही आरम्भ करने की परिपाटी विशेष देखी जाती है।

(२) उपपत्ति—यह निबन्ध का प्रधान भाग माना जाता है। जिस चीज को हमने उपक्रमणिका में आरम्भ किया है, उसी का इस भाग में विशद रूप में विवेचन किया जाता है। इसी में निबन्धकार अपनी कला का परिचय देते हुए अपने विचारों को शृंखला-बद्ध करता चलता है। यह भाग निबन्ध का हृदय माना जाता है।

(३) उपसंहार—निबन्ध का अन्तिम भाग माना जाता है। जो कुछ ऊपर के दोनों भागों में कहा जाता है, उसी के प्रधान अंशों को संक्षेप से दुहराते हुए विषय संहरण कर दिया जाता है। यह आवश्यक नहीं है कि सभी स्थलों पर प्रधान अंशों की आवृत्ति अवश्य ही की जाय। यह तो लेखक की रुचि और शैली पर निर्भर करता है।

निबन्धों के प्रकार

यों तो विषयों की विभिन्नता के कारण निबन्धों के बहुत से भेद हो सकते हैं। फिर भी हम उन्हें मुख्य रूप से तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं—

(१) विवरणात्मक (२) वर्णनात्मक (३) विवेचनात्मक।

विवरणात्मक—लेखों में अतीत समय में बीती हुई बातों का विवरण रहता है। ऐसे लेखों का प्रधान विषय अतीत की किसी घटना का, सम्मेलनों का, लड़ाइयों का तथा राजाओं के शासन आदि का विवरण देना रहता है।

वर्णनात्मक—निबन्धों में प्राकृतिक दृश्यों, पर्वतों, नदियों, ग्रामों, नगरों, यात्राओं, योजनाओं एवं वस्तुओं की निर्माण-विधि आदि

का क्रमबद्ध एवं स्पष्ट वर्णन रहता है। विवरणात्मक एवं वर्णनात्मक निबन्धों में बहुत सूक्ष्म अन्तर है। विवरणात्मक निबन्धों में कालक्रम की ओर विशेष ध्यान रहता है और वर्णनात्मक निबन्धों में वर्णनीय विषय प्रायः वर्तमानकाल के रहते हैं, एवं उनका शाब्दिक चित्र प्रस्तुत करने की ओर लेखक का विशेष ध्यान रहता है।

विवेचनात्मक—निबन्धों में किन्हीं विवादास्पद गम्भीर विषयों को लेकर पक्ष-प्रतिपक्ष प्रतिपादन, किसी वस्तु अथवा किसी सामाजिक रीति के गुण-दोषों का विवेचन, साहित्यिक रचनाओं की आलोचना एवं मानसिक भावों का विश्लेषण आदि रहता है। विवेचनात्मक निबन्धों में कल्पना की अपेक्षा बुद्धि से अधिक कार्य लिया जाता है।

कुछ निबन्धों के संकेत

रेडिओ

प्रारम्भ—रेडिओ का आविष्कार—रेडिओ के लाभ—रेडिओ का शिक्षा के प्रचार में उपयोग—रेडिओ और मनोरंजन—रेडिओ का दुरुपयोग—रेडियो द्वारा कामुकता के प्रचार से बच्चे और युवकों के चरित्र का पतन—इसके सदुपयोग द्वारा जनसाधारण के चरित्र एवं जीवन-स्तर का उत्थान—सब प्रकार के प्रचार का साधन—स्वतन्त्र भारत में इसके द्वारा परिष्कृत मनोरंजन के साथ शिक्षा के प्रसार में इसकी उपयोगिता—उपसंहार।

शिष्टाचार

शिष्टाचार किसे कहते हैं—शिष्टाचार के विभिन्न रूप—सभ्यता और शिष्टाचार—जीवन में शिष्टाचार का उपयोग—दिखावा और शिष्टाचार—समाज की उन्नति और विकास में शिष्टाचार का स्थान—उपसंहार।

फुटबाल का खेल

स्थान—लम्बाई-चौड़ाई—खेल क्षेत्र का वर्णन—चिह्नित रेखाएं—गोल के खम्भे—सामान—खेल की टोलियाँ—निर्णायक और उसका कर्तव्य—उपसंहार।

चरित्र गठन

प्रारम्भ—चरित्र मानव की सब से बड़ी सम्पत्ति—चरित्र व्यक्तिगत सम्पत्ति—चरित्रवान् का समाज पर प्रभाव—चरित्र-गठन के कुछ उपाय—चरित्र-बल और शिक्षा—शिक्षा के साथ चरित्र की आवश्यकता—उपसंहार।

गंगा

परिचय—उद्गम स्थान—हिमालय का संक्षिप्त वर्णन—उसके तटों का वर्णन—तटों के प्रसिद्ध तीर्थ स्थानों के नाम तथा संक्षिप्त परिचय—विस्तार—उपयोग नहरों आदि के द्वारा—धार्मिक महत्ता—उपसंहार।

हिमालय

परिचय—विस्तार—भौगोलिक महत्व—राजनीतिक महत्व—प्राकृतिक शोभा—आध्यात्मिक महत्व—गंगा, यमुना प्रभृति पवित्रतम नदियों का उद्गम स्थान—हिमालय प्रदेश के वासी—लाभ—उपसंहार।

कुछ निबन्धों के लिए विषय-सूची

१—जीवन में परिश्रम का महत्व, २—वर्षा, ३—वसन्त, ४—किसी पर्वतीय यात्रा का वर्णन, ५—सदाचार, ६—अछूतोद्धार, ७—विज्ञान का हमारे दैनिक जीवन में उपयोग, ८—मित्रता, ९—ग्राम्य जीवन, १०—अपने विद्यालय का वर्णन, ११—प्रातःकाल का

भ्रमण, १२—सूर्यास्त का वर्णन, १३—रेल-यात्रा, १४—थर्ड क्लास का सफर, १५—दिवाली, १६—होली, १७—रक्षाबन्धन, १८—विजय दशमी, १६—त्योहारों का महत्व, २०—प्रकृति-शोभा, २१—साहित्य और संगीत २२—व्यायाम और शरीर-स्वास्थ्य, २३—आदर्श जीवन, २४—भारत में भिखारियों की समस्या, २५—सच्ची नागरिकता, २६—यदि मैं शिक्षा-मंत्री होता, २७—यदि मैं प्रधान-मन्त्री होता, २८—निरक्षरता—एक पाप, २६—निर्धनता महापाप है, ३०—शिवाजी का चरित्र, ३१—महाराणा की देशभक्ति, ३२—स्वामी दयानन्द, ३३—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, ३४—महात्मा गांधी की भारत को देन, ३५—ब्रह्मचर्य, ३६—चल-चित्रों का चरित्र पर प्रभाव, ३७—स्वास्थ्य ही जीवन है, ३८—उद्योगों का राष्ट्रीयकरण, ३६—आदर्श नागरिक, ४०—प्रौढ़ शिक्षा, ४१—निरक्षरता को दूर करने के कुछ उपाय, ४२—मेरे जीवन का लक्ष्य, ४३—मेरी महत्वाकांक्षा, ४४—हमारी शिक्षापद्धति, ४५—परीक्षा प्रणाली—एक अभिशाप, ४६—नववर्ष, ४७—ग्रीष्मऋतु, ४८—स्वतन्त्र भारत में विद्यार्थियों का कर्तव्य, ४६—तुलसी की साहित्य और समाज सेवा, ५०—सूरदास, ५१—'सूर, सूर तुलसी शशी', ५२—समाज में नारी का स्थान, ५३—अस्पृश्यता—एक अभिशाप, ५४—किसी महापुरुष की जीवनी, ५५—साहित्य और समाज, ५६—विद्यार्थी जीवन और ब्रह्मचर्य, ५७—भारतीय चित्रकला, ५८—भगवान बुद्ध, ५६—शिक्षा और स्वावलम्बन, ६०—समाचार पत्रों से लाभ, ६१—स्त्री-शिक्षा, ६२—सहशिक्षा, ६३—ग्रामसुधार, ६४—आदर्श विद्यार्थी, ६५—आदर्श नारी, ६६—धन का सदुपयोग, ६७—प्रातः भ्रमण, ६८—मितव्ययता।

पञ्चविंशति प्रकरण

पत्र लेखन

हमारे दैनिक व्यवहार में पत्रों का विशेष महत्त्व है। अपने आन्तरिक भावों को हम जिस सरलता से अपने इष्टजनों को लिखे पत्रों में व्यक्त करते हैं, उस प्रकार अपने लेखों एवं निबन्धों में नहीं। पत्र लिखना भी एक विशेष प्रकार की कला है। यूं तो सभी लोग पत्र लिखते हैं परन्तु वास्तविक कला से बहुत कम लोग परिचित होते हैं। इस कलाका मुख्य उद्देश्य यह है कि हम संक्षेपसे सुन्दरतम रूपमें अपने आन्तरिक भावों को व्यक्त करदें। पत्रों में सबसे ऊँचा एवं महत्त्वपूर्ण स्थान विचारशील साहित्यिक व्यक्तियों द्वारा लिखे गये पत्रों का होता है। परन्तु यहाँ हम उन साहित्यिक पत्रों के सम्बन्ध में कुछ विशेष न कह कर नवीन प्रणाली से आजकल लिखे जाने वाले प्रकारों के स्वरूपों का ही विचार करेंगे।

पत्र लिखने के प्रकार को मुख्यतया हम तीन भागों में विभाजित कर सकते हैं:—

(१) व्यक्तिगत पत्र (२) सरकारी पत्र (३) व्यावसायिक पत्र।

(१) व्यक्तिगत पत्रों में—लेखक अपने आन्तरिक विचारों को व्यक्त करता है। इस प्रकार के पत्र प्रायः अपने माता-पिता, भाई-बन्धु, पति-पत्नी, मित्र आदि को लिखे जाते हैं। निमन्त्रण पत्र एवं मान पत्रों का सम्बन्ध भी किन्हीं विशिष्ट व्यक्तियों से ही रहता है, अतः हम उन्हें भी व्यक्तिगत पत्रों में सम्मिलित कर सकते हैं।

(२) सरकारी पत्रों में—लेखक अपने काम की बात बहुत संक्षेप से व्यक्त करता है। आवश्यक रूप से इन पत्रों की भाषा विशेष

रूप से शिष्ट रखनी चाहिये।

(३) व्यावसायिक पत्रों—एवं सरकारी पत्रों के रूप में विशेष अन्तर नहीं है। लिखने के प्रायः वे ही प्रकार हैं।

पत्र आरम्भ करने की विधि

पत्र आरम्भ करने से पूर्व पत्र-लेखक को कागज के दाएं सिरे पर सबसे पहले अपना पूरा पता लिखना चाहिये। उसके नीचे दिनांक, मास और वर्ष सहित लिखना चाहिये। जैसे,

१२, पटेल रोड, देहरादून,
१३ माघ, २००६ वि०

अपना पूरा पता लिख लेने के बाद दिनांक की सीध में बांई ओर थोड़ा सा स्थान छोड़ कर पत्र की प्रशस्ति आरम्भ करनी चाहिये। जैसे,

परम पूज्य पिता जी,
सादर प्रणाम।

प्रिय पुत्र सुशील,
शुभाशीः।

आजकल अभिवादन सूचक शब्द अपने से बड़ों को पत्र लिखते समय ही लिखे जाते हैं, सम आयु वालों एवं अपने छोटों को लिखते समय प्रायः कुछ नहीं लिखा जाता है। केवल प्रशस्ति या प्रशस्ति सहित नाम लिख कर और एक पंक्ति छोड़ कर नीचे से पत्र आरम्भ कर दिया जाता है। जैसे,

प्रिय मित्र, या प्रिय मित्र नरेन्द्र, या प्रिय नरेन्द्र, या प्रिय, तुम्हारा पत्र मिला, समाचार ज्ञात हुआ आदि।

पत्र की समाप्ति के कितने ही प्रकार हैं। समाप्त करते समय पत्र जिसको लिखा जाता है, उसके साथ कुछ सम्बन्ध सूचक शब्द, या किन्हीं अन्य प्रकार के औपचारिक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इसके बाद लेखक अपने हस्ताक्षर करता है। जैसे,

यदि पत्र पिता को लिखा गया है तो—

आपका आज्ञाकारी पुत्र,
(या) आपका आज्ञाकारी,
नरेन्द्र

पत्र यदि मित्र को लिखा गया है तो—

तुम्हारा अभिन्न हृदय,
नरेन्द्र
(या) तुम्हारा मित्र,
(या) तुम्हारा,
नरेन्द्र

नीचे हम एक तालिका दे रहे हैं, इससे आरम्भ एवं समाप्ति की विधि कुछ समझी जा सकती है—

प्रशस्ति	समाप्ति
(१) अपने बड़े आदरणीय सम्बन्धियों को—	
परम पूज्य, पूजनीय, आदरणीय, परमादरणीय, श्रद्धास्पद, परमश्रद्धेय, पूज्यचरण, परम श्रद्धास्पद, आदि। (पिता, गुरु, माता, ज्येष्ठ भाई-बन्धु आदि)	आपका आज्ञाकारी, स्नेहपात्र, कृपाभाजन, कृपाकांक्षी, चरण सेवक, सेवक आदि।
(२) प्रतिष्ठित व्यक्ति को—	
माननीय, परम माननीय, आदरणीय, श्रद्धेय, महामान्य आदि।	आपका, सेवक, कृपा-भाजन, विनीत आदि।
(३) मित्र को—	
प्रिय मित्र, प्रिय मित्रवर, प्रिय, प्रिय भाई, प्रिय बन्धु, प्रिय सुधेश, प्रिय गोपाल आदि।	तुम्हारा, तुम्हारा अभिन्न, तुम्हारा अभिन्न मित्र, सदा तुम्हारा, तुम्हारा ही आदि।

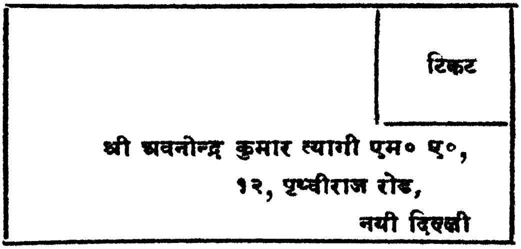
(४) अपने से छोटों को—

प्रिय, परमप्रिय, प्रियवर, तुम्हारा शुभचिन्तक, हितैषी,
प्रिय वत्स, प्रियदर्शन। शुभाकांक्षी, मंगलाभिलाषी,

(५) व्यावसायिक पत्रों में—

श्री मन्महोदय, श्रीमन्, महोदय, भवदीय, आपका, निवेदक
प्रिय महोदय, महाशय आदि।

ठीक समय पर ठीक स्थान पर पत्र पहुँचाने के लिए यह आवश्यक है कि पत्र के ऊपर पाने वाले का पता ठीक प्रकार से लिखा हो। हिन्दी में पता निम्न प्रकार से लिखना चाहिए—



अब हम यहां पर उदाहरण स्वरूप कुछ पत्र दे रहे हैं—

(१) पुत्र की ओर से पिता को पत्र

२६ इन्द्ररोड, देहरादून
१०, फाल्गुन, २००६ वि०

परमपूज्य पिता जी,

चरणों में सादर प्रणाम !

निवेदन है कि आपका कृपा पत्र मिला। इन्हीं दिनों में मेरी परीक्षा हो रही थी, अतः मैं तुरंत उत्तर न दे सका। परीक्षा में मेरे

सभी प्रश्नपत्र सन्तोषप्रद हुए हैं। मैंने आपके आदेश के अनुसार ही अपना कार्यक्रम बना लिया है। पढ़ाई के साथ स्वास्थ्य ठीक रखने के लिए प्रतिदिन व्यायाम करता हूं, विद्यालय के खेलों में भी भाग लेता हूं, एवं प्रातःकाल को घूमने के लिए भी जाया करता हूँ। अभी मुझे रुपयों की आवश्यकता नहीं है, होने पर लिख दूंगा।

परमपूज्या माता जी को प्रणाम एवं विनय को प्यार।

आपका आज्ञाकारी पुत्र,
सन्तोष कुमार

(२) मित्र को पत्र—

१५, सुभाष रोड, देहरादून,
२६ फरवरी, १६५०

प्रिय मित्र हरीश,

बहुत दिनों की प्रतीक्षा के बाद भी तुम्हारा कोई पत्र नहीं मिला, क्या कारण है? क्या कार्य में अधिक व्यस्त रहते हो? यदि ऐसा ही है तो भी कभी अपना कुशल समाचार तो तुम्हें लिखते ही रहना चाहिये।

अब के ग्रीष्मावकाश में स्थानीय कई साथियों ने काश्मीर चलने का निश्चय किया है। बम्बई से प्रिय शान्ति ने भी साथ चलने के लिये लिखा है। क्या तुम भी समय निकाल सकोगे, अवकाश लेने का अभी से प्रयत्न करो। तुम्हारे साथ रहने से बहुत अच्छा रहेगा। इस प्रकार के अवसर कभी कभी ही मिला करते हैं। मैं तुम्हारी स्वीकृति की प्रतीक्षा करूँगा।

प्रिय सतीश को प्यार

तुम्हारा अभिन्न,
शङ्कर

(३) माता का पुत्र को पत्र—

प्रेम निवास
नेहरू रोड, देहरादून,
पौष २५, २००६ वि०

प्रिय पुत्र अशोक,

शुभाशीः !

तुम्हारा पत्र मिला। यह पढ़ कर बहुत प्रसन्नता हुई कि तुम इस वर्ष बहुत प्रतियोगिताओं में सर्वप्रथम रहे हो। मेरी उस प्रभु से यही हार्दिक प्रार्थना है कि तुम्हें इसी प्रकार की प्रशंसनीय सफलताएं जीवन-क्षेत्र में मिलती रहें और तुम उच्च से उच्च सम्मान प्राप्त करने के अधिकारी बनते रहो।

शीला तुम्हें नमस्ते कह रही है।

तुम्हारी कल्याणकांक्षिणी माता,
ज्योतिर्मयी

पुत्र के विवाह निमन्त्रण-पत्र

श्री .... —

मेरे आयुष्मान् पुत्र श्री विनोद कुमार एम० ए०, पी-एच० डी० का शुभ विवाह संस्कार आगरा निवासी श्री अचल मोहन एडवोकेट की आयुष्मती पुत्री श्री अलका एम० ए० से रविवार फाल्गुन १३, २००६ वि० को होना निश्चित हुआ है। आपसे साग्रह प्रार्थना है कि सपरिवार सम्मिलित होकर उत्सव की शोभाभिवृद्धि करें।

२५, पृथ्वीराज रोड
नई दिल्ली
२० माघ, २००६

दर्शनाभिलाषी,

विनय मोहन

विद्यालय के मुख्याध्यापक को अवकाश के लिये प्रार्थना-पत्र—

सेवा में

मुख्याध्यापक महोदय,

दयानन्द ऐंग्लो विद्यालय, देहरादून।

श्रीमन्,

नम्र निवेदन है कि आगामी १५ फरवरी को मेरे ज्येष्ठ भ्राता जी का शुभ विवाह संस्कार है। मेरा वर-यात्रा में सम्मिलित होना आवश्यक है। अतः प्रार्थना है कि १४ से १६ फरवरी तक तीन दिन का अवकाश देकर अनुग्रहीत करें, कृपा होगी।

आपका आज्ञाकारी शिष्य

विजय कृष्ण,

कक्षा दशम अ।

व्यावसायिक पत्र

पुस्तक विक्रेता को कुछ पुस्तकों के लिये आदेश-पत्र—

श्री व्यवस्थापक,
साहित्य सदन, देहरादून

१५, राजेन्द्र मार्ग, सहारनपुर,
चैत्र १२, २००६ वि०

महोदय,

निम्नलिखित पुस्तकें यथासम्भव शीघ्र वी० पी० द्वारा भेजने की कृपा करें—

आधुनिक हिन्दी व्याकरण और रचना	१ प्रति
हिन्दी शब्द सागर	२ ,,
हिन्दी निबन्धादर्श	३ ,,
अच्छी हिन्दी	४ ,,
गोदान	१ ,,

साथ में अपने यहां का सूचीपत्र भी भेजने की कृपा करें।

भवदीय,

कृष्णस्वरूप

षष्ठविंशति-प्रकरण

अलंकार

अलंकार का अर्थ विचित्रता या चमत्कार होता है। जिस प्रकार सुन्दरी नारी के शरीर को उसके आभूषण और सुन्दर बना देते हैं इसी प्रकार रसरूप काव्य की आत्मा (सर्वस्व) के शब्द और अर्थ रूपी शरीर को काव्य के यमक, उपमा प्रभृति अलंकार और अधिक चमत्कृत बना देते हैं। साहित्य में इन अलंकारों का वही स्थान है जो स्त्री के शरीर पर आभूषणों का। रस काव्य की आत्मा है और अलंकार शब्दार्थ रूप शरीर की बाह्य सजावट।

अलंकारों के भेद

काव्य के शरीर शब्द और अर्थ के भेद से अलंकार भी दो प्रकार के होते हैं—(१) शब्दालंकार और (२) अर्थालंकार।

शब्दालंकार—जहां अर्थकी अपेक्षा शब्द ही अधिक चमत्कार उत्पन्न करता है, वहां शब्दालंकार होता है।

अर्थालंकार—जहां अर्थ में विशेष चमत्कार हो।

शब्दालकार

(१) अनुप्रास—स्वरोंकी भिन्नता रहने पर भी जहां एक जैसे व्यंजन सुनाई देते हों, अर्थात् एक व्यंजन की अनेक बार आवृत्ति की गई हो। जैसे,

कमनीय कोमल कान्त कुसुम कलिका।

यहां पर 'क' व्यंजन की अनेक बार आवृत्ति हुई है, अतः अनुप्रास अलंकार है।

(२) यमक—जहाँ एक शब्द अनेक बार आये किन्तु अर्थ में भिन्नता हो, उसको यमक कहते हैं। जैसे,

'तीन बेर खाती थीं वे तीन बेर खाती हैं।'

'कनक कनक तैं सौगुनी मादकता अधिकाय।'

यहां दोनों पदों में रेखांकित शब्दों की आवृत्ति हुई है, किन्तु अर्थ के भेद के साथ। अतः यहां यमक अलंकार है।

अर्थालंकार

(३) उपमा—भेद उपस्थित रहने पर भी जब दो पदार्थों के सादृश्य का वर्णन हो, तो उसे उपमा कहते हैं। जैसे,

मुख चन्द्रमा के समान मनोहर है।

यहां मुख और चन्द्रमा का भेद होते हुये भी समानता बतलाई गई है, अतः यहां उपमा अलंकार है।

उपमा में चार बातें मुख्य मानी जाती हैं—उपमेय, उपमान साधारण धर्म और वाचक शब्द।

उपमेय—जिसकी उपमा दी जाती है, वह उपमेय कहाता है। ऊपर के वाक्य में मुख की उपमा चन्द्रमा के साथ दी गई है, इसलिए 'मुख' उपमेय है।

उपमान—जिसके साथ उपमा दी जाय, वह उपमान कहाता है। ऊपर के वाक्य में मुख की उपमा चन्द्रमा के साथ दी गई है, अतः 'चन्द्रमा' उपमान है।

साधारणधर्म—उपमेय और उपमान में जिस कारण से समता होती है एवं जो उपमेय और उपमान की तुलना का आधार होता है। ऊपर के उदाहरण के 'मनोहर' शब्द का सम्बन्ध चन्द्रमा के साथ भी है और मुख के साथ भी, क्योंकि दोनों ही मनोहर हैं, अतः दोनों के बीच में मनोहरता साधारण धर्म हुआ।

वाचक शब्द—उपमेय उपमान की तुलना जिस शब्द के द्वारा प्रकट होती है, उसे वाचक शब्द कहते हैं। ऊपर के उदाहरण में 'समान' शब्द दोनों की तुलना को बताने वाला है, अतः यह वाचक है।

(४) रूपक—जहां उपमेय और उपमान का अभेद बताया जाता है वहां रूपक होता है। उपमा के चार अङ्गों में से यदि 'वाचक' और 'साधारण धर्म' निकाल दें तो रूपक अलङ्कार बन जाता है। जैसे,

'रमा का मुख कमल है'

यहां मुख के ऊपर कमल का आरोप किया गया है, अर्थात् मुख को ही कमल बना दिया गया है। साधारण धर्म और वाचक हटाकर दोनों के भेद को दूर कर दिया गया है।

(५) अपह्नुति—जहां सत्य बात को छिपा कर या उसका निषेध करके दूसरी (असत्य) बात कही जाय, वहां अपह्नुति अलंकार होता है। जैसे,

मैं जु कहा रघुबीर कृपाला। बन्धु न होय, मोर यह काला॥

तुलसी रामायण के इस पद्य में सुग्रीव ने श्रीरामचन्द्र से अपने भाई बाली को बन्धुत्व का निषेध करके, उसे अपना काल अर्थात् मृत्युस्वरूप बताया है, अतः यहां पर अपह्नुति अलंकार है।

(६) उत्प्रेक्षा—जब उपमेय में उपमान से भिन्नता जानते हुए भी उसकी (उपमान की) सम्भावना की जाती है, तब उत्प्रेक्षा अलंकार होता है। जैसे 'मुख मानो चन्द्रमा है' यहां मुख में चन्द्रमा की सम्भावना की गई है, अतः यहां पर उत्प्रेक्षा अलंकार है।

'मुख चन्द्रमा के समान है' (उपमा) में मुख और चन्द्रमा में समानता मानी गई है; 'मुख चन्द्र है' (रूपक) में मुख और चन्द्र में एक रूपता स्थापित की गई है, परन्तु 'मुख मानो चन्द्रमा है'

(उत्प्रेक्षा) में मुख और चन्द्रमा में समानता दिखाने का भाव तो अवश्य है, किन्तु यह समता निश्चित नहीं है। यही इन तीनों अलंकारों का एक दूसरे से भेद है।

अतिशयोक्ति—जब किसी वस्तु का बहुत बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन किया जाता है तब अतिशयोक्ति अलंकार होता है। जैसे,

देख लो साकेत नगरी है यही।
स्वर्ग को छूने गगन में जारही॥

(मैथिली शरण)

साकेत नगरी के अत्युच्च भवनों को देखकर कवि ने यह कल्पना की है कि साकेत नगरी स्वर्ग को छूने के लिये आकाश में जारही है। बढ़ा-चढ़ाकर वर्णन होने के कारण यहां पर अतिशयोक्ति अलंकार है।

रस

साहित्य शास्त्र में रस को ब्रह्म के आनन्द के बराबर बताया गया है, अर्थात् एक योगी साधना करके ईश्वर के साक्षात्कार से जिस आनन्द को प्राप्त करता है, एक सहृदय साहित्यिक उसी प्रकार के आनन्द को सरस साहित्य से प्राप्त कर लेता है। इसका अर्थ ही एक विशेष प्रकार का आनन्द है या स्वाद है 'उसकी इस बात में कोई रस नहीं आया'; 'प्रेमचन्द्र की कहानियों में जो रस है, वह कौशिक की कहानियों में कहां' 'विजय के बनाये भोजन में जो रस है, वह शीला के में नहीं।' इससे स्पष्ट होगया कि इसका तात्पर्य आनन्द से है। आनन्द मन की एक विशेष अवस्था का नाम है। सुख, दुख, भय, हर्ष, शोक आदि मन की विशेष अवस्थाओं के ही तो नाम हैं।

साहित्य में प्रमुख रूप से ये अवस्थायें नौ प्रकार की मानी हैं, अतः रस भी नौ ही माने गये हैं:—

शृंगार, हास्य, करुणा, रौद्र, वीर, भयानक, वीभत्स, अद्‌भुत और शान्त। इन रसों के नौ ही स्थायी भाव माने गये हैं, जिनसे कि इनकी उत्पत्ति होती है। क्रमशः सब के नाम ये हैं:—

रति, हास, शोक क्रोध, उत्साह, भय, जुगुप्सा, (घृणा), विस्मय और शम (वैराग्य)।

इन सबका विस्तार से परिचय काव्य के लक्षण-ग्रन्थों से ही जानना चाहिये।

सप्तविंशति प्रकरण

छन्द

भाषा के दो रूप हैं एक गद्य और दूसरा पद्य। गद्य में कहने या बोलने वाले को पूरी स्वतन्त्रता रहती है। वह जैसे चाहे अपनी इच्छानुसार शब्दों का प्रयोग कर सकता है। किसी विशेष प्रकार के नियम के पालन के लिये वह बाध्य नहीं होता। किन्तु पद्य में यह बात नहीं होती। पद्य में अक्षरों के प्रयोग के लिये एक विशेष प्रकार के नियम का पालन करना पड़ता है। इस नियम-विधान को ही छन्द कहते हैं।

अक्षर—छन्द शास्त्र में शब्दों के अवयव रूप अक्षरों का विशेष महत्त्व है, शब्दों का नहीं। नियम विधान अक्षरों के लिये हैं, शब्दों के लिये नहीं। जैसा कि हम प्रारम्भ में बतला चुके हैं, अक्षर दो प्रकार के होते हैं, 'स्वर' और व्यंजन'। छन्द शास्त्र के अक्षरों की गणना में केवल स्वरों की गणना की जाती है, व्यंजनों की नहीं।

उदाहरण के लिये—'राम' पद में चार अक्षर हैं, दो स्वर 'आ' और 'अ' तथा दो व्यंजन 'र्' और 'म्'। छन्द में अक्षरों की गणना करते समय 'राम' के केवल दोनों स्वर अक्षर ही लिये जायेंगे, व्यंजन नहीं। छन्द शास्त्र में अक्षर दो प्रकार के होते हैं, लघु और गुरु।

लघु—वे एक मात्रिक ह्रस्व अक्षर, जिनके उच्चारण में कम समय लगता है, लघु कहलाते हैं। जैसे, अ, इ, उ, ऋ—न, नि, नु, नृ आदि।

गुरु—वे द्विमात्रिक दीर्घ अक्षर, जिन के उच्चारण में लघु की अपेक्षा सामान्यता दुगुना समय लगता है, गुरु कहलाते हैं। जैसे, आ, ई, ऊ, ए, ऐ, ओ, औ, अं, अः—ना, नी, नू, ने, नै, नो, नौ, नं, नः आदि।

मात्रा—प्रत्येक वर्ण के उच्चारण में जो समय लगता है, उसे मात्रा कहते हैं।

विशेष—ह्रस्व अक्षर एकमात्रिक (एक मात्रा वाले) एवं दीर्घ अक्षर द्विमात्रिक (दो मात्रा वाले) कहलाते हैं।

छन्द शास्त्र में कोई वर्ण लघु हो या , उसे एक ही माना जाता है। परन्तु लघु की एक मात्रा और गुरु की दो मात्रायें मानी जाती हैं

लघु-गुरु अक्षर चिन्ह—छन्द शास्त्र में खड़ी लकीर (।) लघु का चिह्न माना जाता है और टेढ़ी लकीर (ऽ) गुरु का।

गण

तीन अक्षरों के समूह से एक गण बनता है। छन्द शास्त्र में निम्नलिखित आठ गण माने जाते हैं—मगण, भगण, जगण, सगण, यगण, रगण, तगण और नगण। छात्र छात्राओं की सुविधा के लिए

गणों का स्वरूप बताने वाला एक पद्य दे रहे हैं:—

आदि मध्य अरु अन्त में, होय भ-ज-स गुरु मान ।
य-र-त होय क्रमतें लघु, त्रिगुरु 'म' त्रिलघु न जान ।।

भगण जगण सगण में क्रमशः आदि मध्य और अन्त में गुरु अक्षर होता है । यगण रगण तगण में क्रमशः आदि मध्य अन्त में लघु अक्षर होता है । मगण में तीनों अक्षर गुरु होते हैं और नगण में तीनों लघु । आगे के चित्र से इनका स्वरूप और स्पष्ट हो जायगा ।

गण का नाम पूर्ण	संक्षिप्त	लक्षण	चिन्ह	उदाहरण	
मगण	म	त्रिगुरु	SSS	SSS जामाता	SSS मान्धाता
भगण	भ	आदिगुरु	S॥	S।। पावक	S।। पाचक
जगण	ज	मध्यगुरु	।S।	।S। रमेश	।S। नरेन्द्र
सगण	स	अन्तगुरु	॥S	।।S तरणी	।।S रजनी
यगण	य	आदि लघु	।SS	।SS सुशोभा	।SS यशोदा
रगण	र	मध्य लघु	S।S	S।S कामिनी	S।S जानकी
तगण	त	अन्तलघु	SS।	SS। राजेश	SS। दिनेश
नगण	न	त्रिलघु	।।।	।।। रबर	।।। खबर

छन्दों के भेद

छन्द दो प्रकार के होते हैं (१) वर्णिक और (२) मात्रिक ।

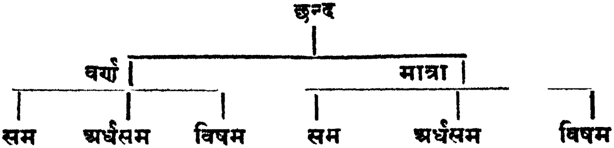
वर्णिक छन्दों को वृत्त और वर्णछन्द भी कहते हैं। इसी प्रकार मात्रिक छन्दों को जाति तथा मात्रा छन्द भी कहते हैं।

वर्णिक छन्द—जिन छन्दों में अक्षरों की संख्या एवं लघु और गुरु अक्षरों का स्थान निश्चित हो, उन्हें वर्णिक छन्द कहते हैं।

मात्रिक छन्द—जिन छन्दों में मात्राओं की संख्या निश्चित हो।

वर्णिक एवं मात्रिक छन्दों के तीन भेद

वर्णिक एवं मात्रिक छन्दों के सम, अर्धसम, विषम भेद से दोनों के तीन तीन भेद और होते हैं। आगे के चित्र से ये भेद और स्पष्ट हो जायेंगे।



सबसे पहले यहां हम कुछ वर्णवृत्तों के लक्षण और उदाहरण दे रहे हैं।

वर्णवृत्त

१ इन्द्रवज्रा

(ता ता ज गा गा शुभ इन्द्रवज्रा)

त त ज ग ग अर्थात् दो तगण (ऽऽ।, ऽऽ।), जगण (।ऽ।) और दो गुरु (ऽऽ)—इस प्रकार प्रत्येक चरण में जिस के ग्यारह वर्ण हों, उसे इन्द्रवज्रा कहते हैं। जैसे,

मैं जो नया ग्रन्थ विलोकता हूं
भाता मुझे सो नव मित्र सा है।
देखूं उसे मैं नित बार बारा
मानो मिला मित्र मुझे पुराना॥

२ उपेन्द्रवज्रा

(उपेन्द्रवज्रा ज त जा ग गा है)

ज त ज ग ग अर्थात् जगण (। ऽ ।), तगण (ऽऽ ।) और दो गुरु (ऽऽ) इस प्रकार जिस के प्रत्येक चरण में ग्यारह वर्ण हों, उसे उपेन्द्रवज्रा कहते हैं।

कहीं वहीं भूल न जाइएगा
पधारिए सत्वर आइएगा।
बने स्वयं सत्पथ सौख्यकारी
सुकर्म हों बिपत्तिहारी॥

३—वसन्ततिलका

(जानो वसन्ततिलका त भ जा ज गा गा)

त भ ज ज ग ग अर्थात् तगण (ऽऽ।), भगण (ऽ।।), दो जगण (।ऽ।, ।ऽ।) और दो गुरु (ऽऽ) इस प्रकार जिसके प्रत्येक चरण में १४ वर्ण हों उसे बसन्ततिलका छन्द कहते हैं।

बातें बड़ी सरस थे कहते बिहारी
छोटे बड़े सकल का हित चाहते थे।
अत्यन्त प्यार संग थे मिलते सबों से
वे थे सहायक बड़े दुःख के दिनों में॥

४—द्रुत विलम्बित

(नभ भर)

जिस छन्द में क्रमशः नगण, भगण, भगण और रगण होते हैं उसे द्रुतबिलम्बित कहते हैं।

दिवस का अवसान समीप था,
गगन था कुछ लोहित हो चला।

तरु शिखा पर था अब, राजती,
कमलिनी-कुल-वल्लभ की प्रभा ॥

(हरिऔध)

५ मालिनी

न न म य य अर्थात् दो नगण (।।।, ।।।) मगण (SSS) और दो यगण (।SS, ।SS) इस प्रकार जिस के प्रत्येक चरण में १५ वर्ण हों, उसे मालिनी कहते हैं।

प्रिय पति वह मेरा प्राण-प्यारा कहाँ है ?
दुख-जल-निधि डूबी का सहारा कहां है ?
लख मुख जिस का मैं आजलौं जी सकी हूं,
वह खनि उपमा का स्वच्छ हीरा कहाँ है ?

(हरिऔध)

६—शिखरिणी

य म न स भ ल ग अर्थात् यगण (। SS), मगण (SSS), नगण (। । ।), सगण (। । S) भगण (S । ।), एक लघु (।) और एक गुरु (S)—इस प्रकार १७ वर्णों का शिखरिणी छन्द होता है।

छटा कैसी प्यारी, प्रकृति-तिय के चन्द्रमुखकी,
नया नीला ओढ़े, वसन चटकीला गगन का।
जरी-सल्मा-रूपी, जिस पर सितारे सब जड़े,
गले में स्वर्गंगा अति ललित मालासम पड़ी ॥

(सत्यशरण)

७—मन्दाक्रान्ता

म भ न त त ग ग अर्थात् मगण (SSS), भगण (S।।), नगण (।।।) दो तगण (SS।, SS।) और दो गुरु (SS) इस प्रकार जिस में १७ वर्ण हों उसे मन्दाक्रांता छन्द कहते हैं। जैसे,

जो मैं कोई बिहग उड़ता, देखती व्योम में हूं,
तो उत्कण्ठा वश विवश हो, चित्त में सोचती हूँ।
होते मेरे, निबल तन में, पक्ष जो पक्षियों से,
तो यों ही मैं, समुद उड़ती, श्याम के पास जाती ॥

मात्रिक छन्द

सम

तोमर

तोमर के प्रत्येक चरण में १२ मात्रायें होती है। अन्त में क्रमशः गुरु और लघु वर्ण होते हैं। जैसे,

रिपु परम कोपे जानि	१२ मात्राएँ	अन्त में	गुरु, लघु
प्रभु धनुष सर संधानि	"	"	"
छाँड़े विपुल नाराच	"	"	"
लगे कटन विकट पिशाच	"	"	"

चौपाई

(कल सोलह जत तजि चौपाई)

चौपाई के प्रत्येक चरण में १६ मात्राएँ होती हैं। जैसे,

एकटक सब सोहहि चहुं ओरा ।
रामचन्द्र मुख चन्द्र चकोरा ॥
तरुन-तमाल-चरन तनु सोहा ।
देखत कोटि-मदन-मन मोहा ॥

अर्धसम

दोहा—(तेरह विषम न आदि में। सम ग्यारह कल लान्त)

दोहा के विषम (पहले, तीसरे) चरणों में १३ और सम